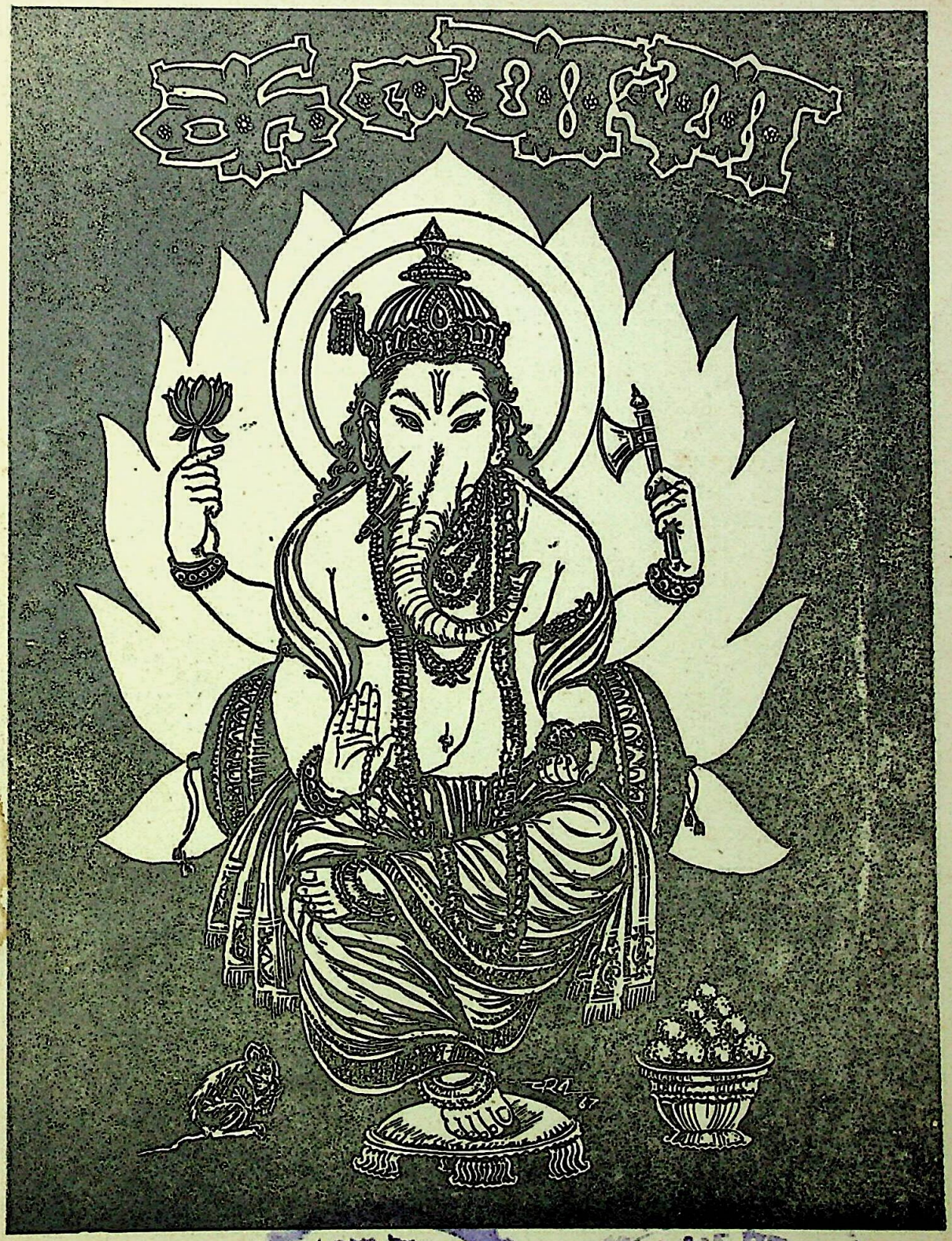

वर्ष ४८] [अङ्क २

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

संस्करण १,६२,०००

विषय-सूची

कल्याण, सौर चैत्र, श्रीकृष्ण-संवत् ५१९९, मार्च १९७४

विषय — पृष्ठ-संख्या

१—नृत्यपरायण गणेश [कविता] ('राम') ५८५
२—यमराजद्वारा श्रीगणेश-भक्तके माहात्म्यका कथन [श्रीगणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्] ५८६
३—गजमुख-भक्त वरेण्य (श्रीमती सावित्री देवी त्रिपाठी, बी० ए०, बी० एड्०) ··· ५८८
४—श्रीविनायक-भक्त बल्लाल (पं० श्रीशिवनाथजी दुबे) ··· ५८९
५—मुद्गलऋषि (शि० दु०) ··· ५९३
६—गणेश-भक्त दक्ष और भीम (शि० दु०) ५९४
७—भक्त गणपतिभट्ट और श्रीजगन्नाथ महाप्रभु (पद्मश्री पं० श्रीसदाशिवरथजी शर्मा) ६०३
८—भक्त श्रीगणेश योगीन्द्र (पं० श्रीदामोदर प्रह्लाद पाठक, शास्त्री, पूर्वोत्तरमीमांसक, व्युत्पत्तिचूडामणि, शिक्षाशास्त्री, काव्यतीर्थ, राष्ट्रभाषाकोविद) ··· ६०४
९—श्रीगणेश-स्तवनका प्रत्यक्ष फल (श्री १०८ स्वामी नारायणदास प्रेमदासजी उदासीन) ६०७
१०—श्रीगणेशके पाद-पद्मोंमें प्रणति [कविता] (श्री 'वीरेश' कवि) ··· ६०७
११—भगवान् श्रीगणेशके कुछ प्रसिद्ध भक्त (पं० श्रीशिवनाथजी दुबे) ··· ६०८—६२३
(१) भक्त श्रीमोरया गोसावी ··· ६०८
(२) भक्त गोभावनन्दन ··· ६१०
(३) भक्त श्रीगोपालाश्रम ··· ६११
(४) भक्त निरञ्जनस्वामी कन्दाडकर ··· ६११
(५) भक्त निरञ्जनदास बल्लाल ··· ६१२
(६) भक्त यदु माणिक ··· ६१२
(७) भक्त अङ्कुशधारी महाराज ··· ६१२
(८) भक्त साम्बशिवशास्त्री ··· ६१५
(९) भक्त लम्बोदरानन्दस्वामी ··· ६१५
(१०) भक्त राघवचैतन्य ··· ६१६
(११) भक्त गणेश दैवज्ञ ··· ६१६
(१२) हरभटबाबा पटवर्धन ··· ६१७
(१३) गणपति बुवा सावेरकर ··· ६१७
(१४) श्रीनागेश्वर बाबा ··· ६१९
(१५) गणेशोपासक गोपालराव मैराळ ··· ··· ६२०
(१६) रघुनाथ महाराज गोडबोले ··· ६२०
(१७) नागेशपण्डित शेष ··· ६२०
(१८) गजानन दैवज्ञ ··· ··· ६२१
(१९) रामकृष्ण बापू सोमयाजी ··· ६२१
(२०) दामोदरानन्दस्वामी ··· ६२२
(२१) मोरेश्वरशास्त्री जोशी ··· ६२२
(२२) श्रीमत् शंकराचार्य शिरोळकर स्वामी (मठ संकेश्वर) ··· ६२२
(२३) भक्तराम मल्हारि ··· ६२३
(२४) इस्लामपुरकर ··· ६२३
१२—भगवद्भक्तोंकी अलौकिक महिमा (परम-श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ··· ६२३
१३—श्रीगणेशपुराण—एक परिचय (शि० दु०) ६२४
१४—मुद्गलपुराणका परिचयात्मक अध्ययन (श्रीरामलाल) ··· ··· ६३०
१५—गणेशगीताका संदेश (डॉ० जो० वो० टागरे, एम्० ए०, बी० टी०, पी-एच्० डी०) ··· ··· ६३६
१६—श्रीगणेश-साहित्यमें हास्य और व्यङ्ग्य (आचार्य श्रीबलरामजी शास्त्री, एम्० ए०) ६३९
१७—श्रीगणेशसे क्षमा-प्रार्थना [मुद्गल पुराणसे] ··· ६४०

चित्र-सूची

१—अभयदाता श्रीगणेश (रेखाचित्र) ··· मुखपृष्ठ
२—श्रीगणेश नृत्यकी मुद्रामें (तिरंगा) ··· ५८५

Free of charge जय विराट जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥ [बिना मूल्य

आदि सम्पादक—नित्यलीलालीन श्रीभाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार
सम्पादक—चिम्मनलाल गोस्वामी, एम्० ए०, शास्त्री; सह-सम्पादक—पाण्डेय रामनारायणदत्त शास्त्री, साहित्याचार्य
मुद्रक-प्रकाशक—मोतीलाल जालान, गीताप्रेस, गोरखपुर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

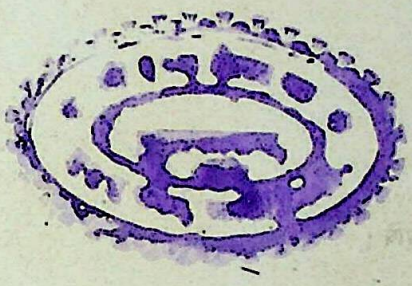

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

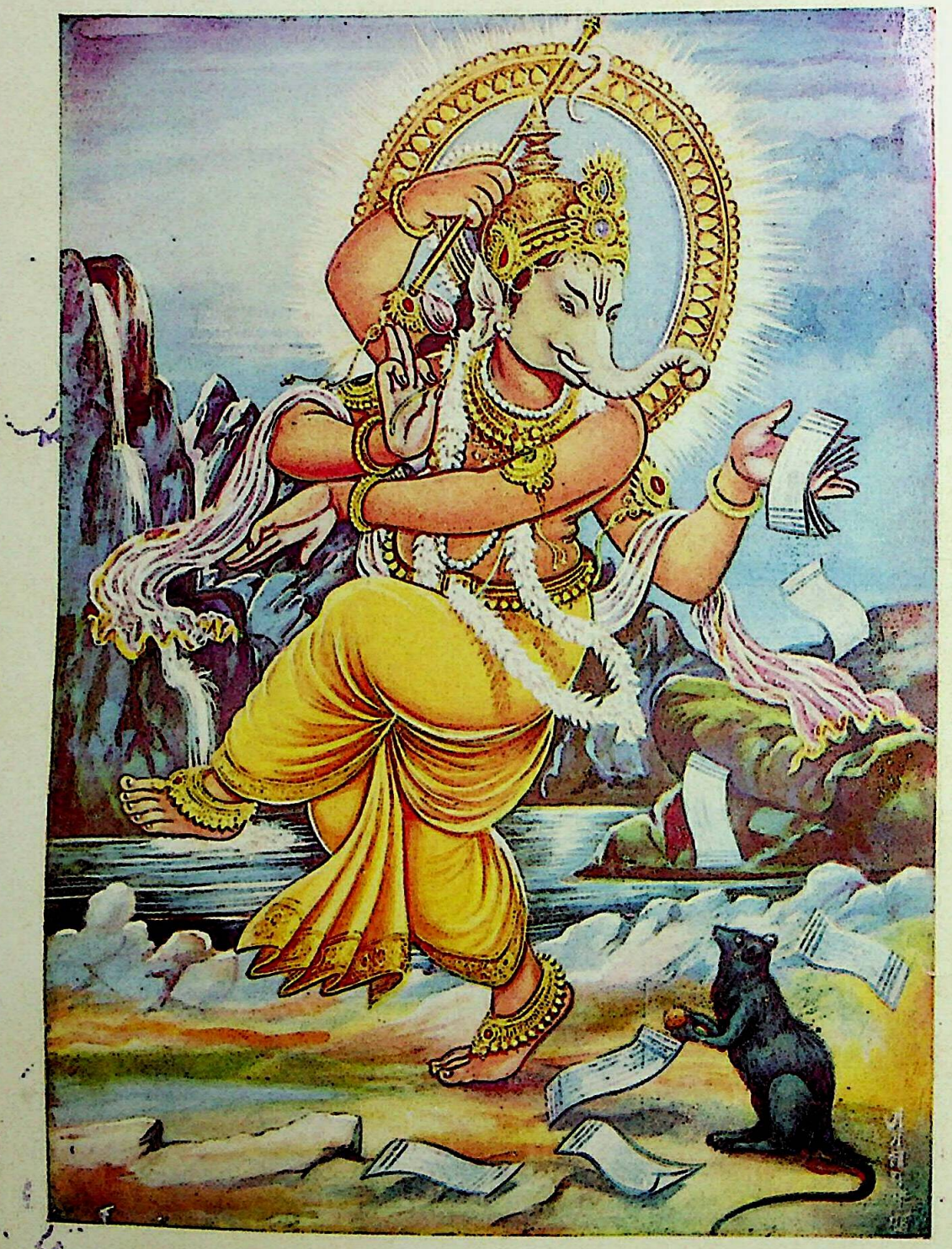

श्रीगणेश नृत्यकी मुद्रामें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

यं निर्जरासुरनरा अखिलार्थसिद्धये भूर्यन्तरायहतयेऽनुदिनं नमन्ति ।
तं भक्तकामपरिपूरणकल्पवृक्षं भक्त्या गणेशमखिलार्थदमानतोऽस्मि ॥

वर्ष ४८ } गोरखपुर, सौर चैत्र, श्रीकृष्ण-संवत् ५१९९, मार्च, १९७४ { संख्या ३ पूर्ण संख्या ५६८

नृत्यपरायण गणेश

सुंड करि कुटिल, विलुंड-मुख मोद भरि—
गति-लय-लीन नीके नृत्य में मगन हैं ।
चम-चम जोति, पायजेब छम-छम करै,
छहरै है ग्यान-रासि, फहरै बसन है ॥
तांडव-प्रचालित प्रचंड भुजदंडन के—
घायल अघात पाय घूमत गगन है ।
धन्य-धन्य कहत अधीर ह्वै धराधरेन्द्र—
झरनन झारी झारि धोवत चरन हैं ॥

'राम'

मार्च १—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

यमराजद्वारा श्रीगणेश-भक्तके माहात्म्यका कथन

[श्रीगणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्]

यम उवाच

गणेश हेरम्ब गजाननेति
महोदर स्वानुभवप्रकाशिन् ।
वरिष्ठ सिद्धिप्रिय बुद्धिनाथ
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

यमराज अपने दूतोंसे कहते हैं—दूतो ! जो लोग गणेश ! हेरम्ब ! गजानन ! महोदर ! स्वानुभवप्रकाशिन् ! वरिष्ठ ! सिद्धिप्रिय ! बुद्धिनाथ !—इस प्रकार उच्चारण करते हों, उनसे अत्यन्त भयभीत रहकर तुम उन्हें दूरसे ही त्याग देना ।

अनेकविघ्नान्तक वक्रतुण्ड
स्वसंज्ञवासिंश्च चतुर्भुजेति ।
कवीश देवान्तकनाशकारिन्
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

जो अनेकविघ्नान्तक ! वक्रतुण्ड ! स्वानन्दलोकवासिन् ! चतुर्भुज ! कवीश ! देवान्तकनाशकारिन् !—इस प्रकार उच्चारण करते हों, उनसे अत्यन्त डरे रहकर उन्हें छोड़ देना (उन्हें पकड़कर लानेकी चेष्टा न करना) ।

महेशसूनो गजदैत्यशत्रो
वरेण्यसूनो विकट त्रिनेत्र ।
परेश पृथ्वीधर एकदन्त
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

जो हे महेशनन्दन ! गजदैत्यशत्रो ! वरेण्यपुत्र ! विकट ! त्रिनेत्र ! परेश ! पृथ्वीधर ! एकदन्त !—इस प्रकार उच्चारण करते हों, उनसे भयभीत रहकर उन्हें दूरसे त्याग देना ।

प्रमोद मोदेति नरान्तकारे
षड्ऊर्मिहन्तर्गजकर्ण दुण्ढे ।
द्वन्द्वाग्निसिन्धो स्थिरभावकारिन्
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

हे प्रमोद ! मोद ! नरान्तकारे ! षड्ऊर्मिहन्तः ! गजकर्ण ! दुण्ढे ! द्वन्द्वरूपी अग्निको शान्त करनेवाले सागर ! स्थिरभावकारिन् !—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको उनसे डरते हुए दूरसे ही छोड़ देना ।

विनायक ज्ञानविघातशत्रो
पराशरस्यात्मज विष्णुपुत्र ।
अनादिपूज्याखुग सर्वपूज्य
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

हे विनायक ! ज्ञानविघातशत्रो ! पराशरात्मज ! विष्णुपुत्र ! अनादिपूज्य ! आखुग (मूषक-वाहन) ! सर्वपूज्य !—इस प्रकार उच्चारण करनेवालोंको भयभीत होकर छोड़ देना ।

वैरिञ्च्य लम्बोदर धूम्रवर्ण
मयूरपालेति मयूरवाहिन् ।
सुरासुरैः सेवितपादपद्म
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

हे विरञ्चिनन्दन ! लम्बोदर ! धूम्रवर्ण ! मयूरपाल ! मयूरवाहन ! सुरासुरसेवितपादारविन्द !—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको उनसे भय मानकर त्याग देना ।

करिन् महाखुध्वज शूर्पकर्ण
शिवाज सिंहस्थ अनन्तबाहु ।
दयौघ विघ्नेश्वर शेषनाभे
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

हे गजस्वरूप ! हे महामूषकध्वज ! हे शूर्पकर्ण ! हे शिव ! हे अज ! हे सिंहवाहन ! हे अनन्तबाहु ! हे दयासिन्धो ! हे विघ्नेश्वर ! हे शेषनाभे !—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको दूरसे ही त्याग देना और उनसे अत्यन्त भयभीत रहना ।

अणोरणीयो महतो महीयो
रवीज्य योगेशज ज्येष्ठराज ।
निधीश मन्त्रेश च शेषपुत्र
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

हे सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म और महान्‌से भी अत्यन्त महान् ! रवि-पूज्य ! योगेशज ! ज्येष्ठराज ! निधीश ! मन्त्रेश ! हे शेषपुत्र !—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको त्याग देना और उनसे अत्यन्त भयभीत रहना ।

वरप्रदातरदितेश्च सूनो
परात्परज्ञानद तारवक्त्र ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गुहाग्रज ब्रह्मप पार्श्वपुत्र
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

हे वरदायक ! हे अदितिनन्दन ! हे परात्परज्ञानद ! हे प्रणवमुख ! हे स्कन्दके ज्येष्ठ बन्धु ! हे ब्रह्मपते ! हे पार्श्वपुत्र !—ऐसा उच्चारण करनेवालोंको छोड़ देना और उनसे डरते रहना ।

सिन्धोश्च शत्रो परशुप्रपाणे
शमीशपुष्पप्रिय विघ्नहारिन् ।
दूर्वाङ्कुरैरर्चित देवदेव
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

हे सिन्धुशत्रो ! हे परशुपाणे ! हे शमीशपुष्पप्रिय ! हे विघ्नहारिन् ! हे दूर्वाङ्कुरपूजित देवदेव !—ऐसा कहनेवालोंको दूरसे ही त्याग देना और उनसे डरते रहना ।

धियः प्रदातश्च शमीप्रियेति
सुसिद्धिदातश्च सुशान्तिदातः ।
अमेयमायामितविक्रमेति
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

हे बुद्धिप्रद ! हे शमीप्रिय ! सुसिद्धिदायक ! सुशान्ति-प्रदायक ! अमेयमाय ! अमितविक्रम !—ऐसा कहनेवालोंको दूरसे ही त्याग देना और उनसे डरते रहना ।

द्विधाचतुर्थीप्रिय कश्यपार्च्य
धनप्रद ज्ञानपदप्रकाश ।
चिन्तामणे चित्तविहारकारिन्
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

जो शुक्ल-कृष्ण-द्विविध-चतुर्थीप्रिय ! कश्यपपूज्य ! धनप्रदायक ! ज्ञानप्रदप्रकाश ! चिन्तामणे ! चित्तविहारकारिन् ! —ऐसा उच्चारण करते हों, उनको दूरसे ही त्याग देना और उनसे सदा डरते रहना ।

यमस्य शत्रो अभिमानशत्रो
विधूद्भवारे कपिलस्य सूनो ।
विदेह स्वानन्द अयोगयोग
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

यमराजके वैरी और अभिमानके शत्रु ! कामनाशन ! कपिलपुत्र ! विदेह ! स्वानन्दस्वरूप ! अयोगयोग गणेश ! —ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको त्याग देना और उनसे डरते रहना ।

गणस्य शत्रो कमलस्य शत्रो
समस्तभावज्ञ च भालचन्द्र ।
अनादिमध्यान्त भयप्रदारिन्
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

दैत्य-गण एवं कमलासुरके शत्रु ! तथा समस्त भावोंके ज्ञाता ! भालचन्द्र गणेश ! आदि, मध्य और अन्तसे रहित तथा भयका नाश करनेवाले गणपते !—ऐसा कहनेवाले व्यक्तियोंको त्याग देना और उनसे डरते रहना ।

विभो जगद्रूप गणेश भूमन्
पुष्टेः पते आखुगतेऽतिबोध ।
कर्तश्च पातश्च तु संहरेति
वदन्तमेवं त्यजत प्रभीताः ॥

विभो ! जगत्स्वरूप ! गणेश ! भूमन् ! पुष्टिपते ! मूषकवाहन ! पूर्णबोधस्वरूप ! स्रष्टा, पालक और संहारक गणपते !—ऐसा उच्चारण करनेवाले व्यक्तियोंको त्याग देना और उनसे डरते रहना ।

इदमष्टोत्तरशतं नाम्नां तस्य पठन्ति ये ।
शृण्वन्ति तेषु वै भीताः कुरुध्वं मा प्रवेशनम् ॥

जो गणेशके एक सौ आठ नामोंका पाठ करते हों, सुनते हों, उनके भीतर कभी प्रवेश न करना और उनसे भयभीत रहना ।

भुक्तिमुक्तिप्रदं दुण्ढेर्धनधान्यप्रवर्धनम् ।
ब्रह्मभूतकरं स्तोत्रं जपन्तं नित्यमादरात् ॥
यत्र कुत्र गणेशस्य चिह्नयुक्तानि वै भटाः ।
धामानि तत्र कुरुत सम्भीता मा प्रवेशनम् ॥

॥ इति श्रीगणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

दुण्ढिराज गणेशका यह स्तोत्र भोग और मोक्ष देनेवाला तथा धन-धान्यकी वृद्धि करनेवाला है । इतना ही नहीं, यह ब्रह्मभावकी प्राप्ति करानेवाला भी है । हे यमदूतो ! जो लोग प्रतिदिन आदरपूर्वक इस स्तोत्रका जप करते हों, उन्हें त्याग देना । जहाँ-कहीं भी गणेशचिह्नसे युक्त भवन हों, तुमलोग भयभीत रहकर कदापि उसमें प्रवेश न करना ।

॥ इस प्रकार 'गणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्र' पूरा हुआ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गजमुख-भक्त वरेण्य

(ले०—श्रीमती सावित्रीदेवी त्रिपाठी, बी० ए०, बी० एड०)

माहिष्मतीपुरीके सद्धर्मपरायण प्रजापालक नरेशका नाम वरेण्य था। वरेण्य परम पराक्रमी तथा देवता और ब्राह्मणोंके भक्त थे। वे प्रतिदिन नियमपूर्वक प्रीतिसहित पुराणकथा-श्रवण करते और धर्म-पालनके लिये प्राणपणसे सतत प्रस्तुत रहते थे। उनके सर्वथा अनुरूप उनकी रूप-लावण्य-सम्पन्ना पतिव्रता पत्नी का नाम पुष्पिका था।

इन दम्पतिने पूर्वकल्पमें श्रीगणेशजीको प्रसन्न करनेके लिये अत्यन्त निष्ठापूर्वक सूखे पत्तोंपर जीवननिर्वाह करते हुए दिव्य सहस्र वर्षोंतक बड़ी कठिन तपश्चर्या की थी। प्रसन्न गजमुखने उन्हें वरप्रदान किया—'मैं तुम्हारा पुत्र बनूँगा।'

जब सिन्दूरासुरकी स्वच्छन्दतासे त्रैलोक्य भयाक्रान्त एवं पीड़ित हुआ, तब सर्वद गजवक्त्र पर्यलीके वनमें त्रैलोक्यवन्दिता जगज्जननी उमाके यहाँ प्रकट हुए। उसी समय माहिष्मती-नरेश वरेण्यकी पत्नी पुष्पिकाने भी प्रसव किया; किंतु उसके पुत्रको एक क्रूरकर्मा राक्षसी उठा ले गयी। पुष्पिका मूर्च्छिता थी। आदिदेव शुण्डदण्ड-सुशोभित चतुर्भुज गजाननके आदेशसे आशुतोष शिवने नन्दीके द्वारा उन्हें मूर्च्छिता वरेण्य-पत्नी पुष्पिकाके समीप रखवा दिया।

साध्वी पुष्पिकाने मूर्च्छा दूर होनेपर जब अपने सम्मुख चतुर्भुज शिशु गजाननको देखा, तब वह भयवश काँपने लगी। रानीकी परिचारिकाएँ भी उस नवजात शिशुको देखकर भयाक्रान्त हो गयीं। विवशतः उदास-मन नरपति वरेण्यने उस लोकोत्तर शिशुको अरण्यमें एक सरोवरके तटपर रखवा दिया।

इसी समय महर्षि पराशर उसी पथसे जा रहे थे। उनकी दृष्टि उक्त अलौकिक नवजात चतुर्भुज गजवक्त्र शिशुपर पड़ी तो वे अत्यन्त चकित हुए। महामुनिने ध्यानपूर्वक उक्त शिशुके अरुणोत्पल-चरणोंमें ध्वज, अङ्कुश और कमलकी रेखाएँ देखीं तो उन्हें समझते देर न लगी कि ये सर्वलोकत्राता परब्रह्म परमेश्वर लम्बोदर मुझे सनाथ करने यहाँ विराज रहे हैं। मुनिवरने उनके चरणोंमें अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक उन्हें अङ्कमें लेकर अपने आश्रमपर पहुँचे। महर्षिकी परम सौभाग्यवती पत्नी वत्सला अतिशय स्नेहसे उनका पालन करने लगीं।

अपने पुत्रके दिव्यदृष्टि-सम्पन्न मुनिवर पराशरद्वारा लालन-पालनका संवाद प्राप्तकर माहिष्मती-नरेश वरेण्यकी प्रसन्नताकी सीमा न रही। उन्होंने अत्यन्त उत्साहपूर्वक पुत्रोत्सवका आयोजन किया। बाजे बजे। अनेक धार्मिक कृत्योंके साथ ब्राह्मणोंको विविध प्रकारके दान देकर वरेण्यने उन्हें आप्यायित कर दिया। हर्षातिरेकसे उन्होंने घर-घर मिष्टान्न वितरण करवाया।

जब विश्व-विपत्ति सिन्दूरका गजाननने उद्धार कर दिया, तब इस समाचारसे हर्षित हो वरेण्य द्रुतगतिसे वहाँ पहुँचे। वे देवाधिदेव मूषक-वाहन गजाननके पाद-पद्मोंमें साष्टाङ्ग लेट गये। धरतीको महान् विभूति अपने पुत्र गजाननको त्याग देनेके कारण उनका मन विकल-विह्वल था और प्रभुके सम्मुख वे अत्यन्त लज्जित थे। उनके नेत्रोंसे अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। उन्होंने अपनी मूढ़ताके लिये करुणामय देवेश्वर गजाननसे बार-बार क्षमाकी याचना की और वे उनका स्तवन करने लगे।

दयामूर्ति मूषक-वाहनने वरेण्यकी स्तुतिसे संतुष्ट होकर उन्हें अपने वक्षसे लगा लिया और फिर उन्होंने उनसे उनके पूर्वकल्पके तप एवं अपने वरदानका उल्लेख करते हुए कहा—'मेरे अवतारका कार्य पूर्ण हो गया। अब मैं अपने धाम जाऊँगा।'

परमप्रभुके स्वधाम-गमनके संवादसे वरेण्यने अत्यन्त व्याकुल होकर उनके अभयद चरण पकड़ लिये। उन्होंने देवेशसे अत्यन्त दीन-वाणीमें प्रार्थना की—'करुणासिन्धु! आप इस त्रयतापतप्त जगत्से मुक्त होनेका मार्ग बतानेकी दया कीजिये।'

दयाधाम गजानन वहीं एक श्रेष्ठ आसनपर बैठ गये। वरेण्य उनके सम्मुख श्रद्धा-भक्तिकी प्रतिमूर्तिकी भाँति हाथ जोड़े प्रभुके मङ्गल-मूल मुखारविन्दकी ओर टकटकी लगाये देख रहे थे। उनके कान प्रभुकी वाणीकी ओर लगे थे।

दयासागर गजमुखने वरेण्यके मस्तकपर अपना सर्वफलद मङ्गलमय कर-कमल रख दिया। तदनन्तर उन्होंने नरेशको आवागमनसे मुक्ति प्राप्त करनेके लिये अपना अमृतमय उपदेश प्रदान किया। वह गजवक्त्र-प्रदत्त अमृतोपदेश

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

'गणेशगीता'के नामसे प्रसिद्ध हुआ, जो प्रत्येक गाणपत्यका कण्ठहार है। इस प्रकार 'गणेशगीता'के प्रथम श्रोता माहिष्मती-नरेश वरेण्य थे। जिस प्रकार महायोगेश्वर श्रीकृष्णप्रदत्त 'श्रीमद्भगवद्गीता' सम्पूर्ण वसुंधराके लिये अमृतमयी सिद्ध हुई, उसी प्रकार 'गणेशगीता' अपने लघुतम कलेवरमें भी उपयोगी प्रमाणित हुई। योगेश्वर श्रीकृष्णकथित गीताकी प्रायः समस्त बातें उसमें आ गयी हैं।

श्रीगजानन अन्तर्धान हो गये और परम कृतार्थ विरक्त वरेण्यने राज्यका दायित्व तुरंत अमात्योंको सौंपा और स्वयं तप करनेके लिये अरण्यमें चले गये। श्रीगजाननकी कृपासे उनकी चित्तवृत्तियाँ सर्वथा शान्त हो गयीं तथा उनके तन, मन और प्राण ही नहीं, उनके रोम-रोम गजमुखके ध्यानमें संलग्न हो गये। इस प्रकार परम भाग्यवान् गजमुख-भक्त वरेण्यने परमप्रभु गणेशका अक्षय सुख-शान्ति-निकेतन परम पावन धाम प्राप्त कर लिया।

(गणेशपुराणके आधारपर)

श्रीविनायक-भक्त बल्लाल

प्राचीन कालकी बात है। सिन्धुदेशमें पल्ली-नामक एक प्रख्यात नगरमें कल्याण-नामक एक धन-सम्पन्न सेठ था। कल्याण धर्माचरण-सम्पन्न बुद्धिमान् पुरुष था। वह दानी तथा देवता और ब्राह्मणोंका भक्त था। उसके इन्दुमती-नामक साध्वी पत्नी थी, जो अत्यन्त रूपवती, पतिप्राणा और पतिवाक्यपरायणा थी।

कुछ दिनों बाद उसके एक सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ। कल्याणने प्रसन्नतापूर्वक बालकका सविधि जातकर्म-संस्कार करवाया। ब्राह्मणोंको गोदान, वस्त्राभूषण तथा पुष्कल दक्षिणा प्रदान कर उन्हें संतुष्ट किया। तदनन्तर धनिक कल्याणने दैवज्ञोंसे बालकका नामकरण करनेके लिये प्रार्थना की।

संतुष्ट दैवज्ञोंने कहा—"यह बालक अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट और बलवान् है। इस कारण इसका नाम 'बल्लाल' होना चाहिये।"

सपत्नीक कल्याणने ब्राह्मणों और दैवज्ञोंके चरणोंमें श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया। विप्रों और ज्योतिषियोंने पुत्रसहित धनिक दम्पतिको आशीर्वाद प्रदान कर अपने-अपने घरके लिये प्रस्थान किया।

बल्लाल धीरे-धीरे बढ़ने लगा। पूर्वजन्मार्जित शुभ कर्मोंके फलस्वरूप उसकी अत्यन्त सात्त्विक प्रकृति थी। वह माता-पिता तथा गुरुजनोंके चरणोंमें बड़ी श्रद्धा रखता। उन्हें सदा सम्मान देता। अपने समवयस्क बालकोंके साथ अतिशय प्रेमपूर्ण व्यवहार करता। इस कारण उससे प्रायः सभी प्रसन्न रहते। उसे सबकी आत्मीयता और प्रीति प्राप्त होती थी। सभी बालक उसके साथ रहना चाहते। सभी उसके साथ खेलना चाहते। बालसुलभ क्रीड़ा करते हुए भी वह बालकोंको करुणामय विनायककी मधुर लीला-कथा सुनाया करता। विनायककी मृन्मयी मूर्ति बनाकर पुष्पादिसे उसकी पूजा करता। उसे देखकर उसके अल्पायु मित्र भी करुणा-सागर विनायककी पूजा करने लग जाते।

बल्लाल जब कुछ बड़ा हुआ, तब वह अपने मित्रोंके साथ नगरके बाहर जाने लगा। वह जहाँ-कहीं देवालय देखता, वहीं देवदेव विनायककी पूजा-प्रार्थना कर उनके चरणोंमें बार-बार प्रणाम करने लगता। उसके मित्रगण भी बल्लालका अनुसरण करते।

एक दिनकी बात है। बल्लाल अपनी बाल-मण्डलीके साथ नगरके बाहर वनमें चला गया। वहाँ समस्त बालकोंने क्रीड़ा करते हुए सरोवरमें स्नान किया। फिर उसने एक सुन्दर पत्थर लेकर, उसे स्थापित कर उसमें गणेशजीकी भावना कर ली। बल्लालके साथ उसके मित्रगण अत्यन्त प्रेमपूर्वक उसपर दूर्वाङ्कुर और मन्दारपत्र चढ़ाने लगे। कुछ बालक गणेशजीका ध्यान और कुछ उनके मङ्गलमय नामका जप करने लगे। कुछ बच्चे नृत्य करने लगे और कुछ संगीतज्ञ शिशु गणेशजीको प्रसन्न करनेके लिये गीत गाने लगे। कुछ शिशुओंने लकड़ी और पत्तोंसे मण्डपका निर्माण किया। कुछ बच्चे मानसिक पूजाके द्वारा और कुछ पत्र-पुष्पादिसे अनादि-निधन गजवदनकी उपासनामें दत्तचित्त हो गये। वे उन्हें धूप, दीप, नैवेद्य, फल, ताम्बूल और दक्षिणा अर्पित करने लगे।

उन गणेश-भक्त बालकोंमें एक बालक पुराणकी कथा कहने लगा और एक पण्डितोंकी तरह उसकी व्याख्या करने लगा। इस प्रकार उनके तन, मन और प्राण गजवक्त्रमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लीन हो गये। भालचन्द्रकी आराधनामें उन्हें क्षुधा-पिपासाकी भी स्मृति न रही।

परमप्रभु विघ्नेश्वरकी प्रीतिने उन शिशुओंके सुकोमल हृदयमें स्थान बना लिया। फलतः वे प्रतिदिन नियमपूर्वक नगरके बाहर उक्त वनमें जाकर अपने परम प्रिय देवदेव विनायककी उपासना करने लगे। माता-पिता शिशुओंको समझाते, बल्लालका साथ छोड़कर समयपर भोजनादि करनेका आग्रह करते। कुछ माता-पिता अपने बच्चोंको डाँटते, पर उन बालकोंके प्राण मङ्गलमूर्ति गणेशजीमें जैसे बस गये थे। वे कोई-न-कोई बहाना बनाकर भागते हुए बल्लालके पीछे वनमें चले जाते। वहाँ विविध प्रकारकी क्रीड़ा करते और फिर अपने आराध्यकी उपासनामें तल्लीन हो जाते।

जब बालकोंको वनमें जानेसे किसी प्रकार विरत करना सम्भव नहीं रह गया, तब उनके पिता अत्यन्त कुपित होकर धनिक कल्याणके समीप पहुँचे। उन्होंने रोषपूर्वक धनपति कल्याणसे कहा—'सेठ! तुम्हारा पुत्र बल्लाल हमारे बच्चोंका जीवन नष्ट कर रहा है। वह प्रतिदिन उन्हें साथ ले जाकर वनमें पता नहीं, क्या करता है? हमारे अबोध बालक समयपर भोजन भी नहीं कर पाते। वे अत्यन्त कृशकाय हो गये हैं।'

बच्चोंके क्रुद्ध पिता कहते जा रहे थे—'तुम अपने पुत्रको नियन्त्रित करो, अन्यथा हम सभी उसे दण्डित करेंगे और इस दुष्टतासे बचनेके लिये हम नरेशके समीप जाकर तुम्हें राज्यके लिये अवाञ्छनीय व्यक्ति भी सिद्ध करनेका प्रयत्न करनेमें संकोच नहीं करेंगे।'

धनिक कल्याण पहले भी अपने पुत्रके सम्बन्धमें इस प्रकारकी बात सुन चुका था। अब अनेक व्यक्तियोंके तीक्ष्णतम उपालम्भसे वह अधीर हो गया। वह संयत नहीं रह सका; क्रोधसे काँपने लगा। उसके नेत्र लाल हो गये। उसने तुरंत हाथमें एक डंडा लिया और उन्मत्तकी तरह द्रुतगतिसे वनके लिये चल पड़ा।

कल्याण क्रोधके वशीभूत हो चुका था; इस कारण उसकी विवेक-बुद्धि सर्वथा लुप्त-सी हो गयी थी। उस समय उसके हृदयमें पुत्र-स्नेह-नामकी जैसे कोई वस्तु ही नहीं रह गयी थी। हाँफता-काँपता वह वनमें वहाँ पहुँचा, जहाँ अपने सखाओंसहित बल्लाल देवाधिदेव विनायककी उपासनामें तल्लीन था।

यह दृश्य देखकर जैसे प्रज्वलित अग्निमें घृताहुति पड़ गयी। कल्याण क्रोधोन्मत्त तो था ही, यम-तुल्य निर्दय हो गया था। रोषानलमें जलता हुआ कल्याण अपने सरलतम भक्त-पुत्रपर दण्ड-प्रहार करने लगा। बल्लालके मित्र प्राण लेकर भागे, पर हृदयहीन कल्याण अपने अबोध बच्चेको पशुकी तरह पीटता ही जा रहा था। बल्लाल दण्ड-प्रहारसे चीत्कार कर रहा था। उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग दण्डाघातसे फट गये। उनसे रक्त बहने लगा, फिर भी कल्याण उसे मारता ही जा रहा था।

उसने मूर्च्छित-प्राय बल्लालको छोड़कर बालकोंके निर्मित मण्डपादिको नष्ट कर दिया। उनके पूजाके उपकरण यत्र-तत्र बिखेरकर सिन्दूरपूजित गणेशजीके पाषाण-विग्रहको उठाकर दूर फेंक दिया।

तदनन्तर उस नरपशुने लताओं और रस्सियोंसे बल्लालके हाथ-पैर खूब कसकर बाँध दिये। वह बन्धन इतना दृढ़ था कि सुकुमार बल्लाल अपने दाँत आदिसे किसी प्रकार भी उसे नहीं छुड़ा सकता था।

फिर निर्मम कल्याणने अत्यन्त कुपित होकर बल्लालसे कहा—'यदि तूने किसी प्रकार मेरे घरमें प्रवेश किया तो मैं तुझे जीवित नहीं छोड़ूँगा। अब तू यहीं वनमें दिन-रात खूब गणेशाराधन कर। तुझे गणेश ही बन्धन-मुक्त करेंगे और अन्न-जल भी वे ही प्रदान करेंगे।'

बकता-झकता कल्याण अपने घर लौटा।

संध्याकाल! निर्जन वन। निरन्न, निर्जल, घायल और सुदृढ़ बन्धनमें जकड़ा बल्लाल रोते-रोते थक गया था। वह पीड़ासे छटपटा रहा था, कराह रहा था; किंतु अत्यन्त कष्टमें भी वैश्यपुत्र बल्लाल अपने प्राणाराध्य देवदेव विनायकका ध्यान कर रहा था। उसने व्याकुल होकर कहा—"भक्तवत्सल प्रभो! आप विघ्नोंका नाश करनेवाले कहे जाते हैं। यदि आप दुष्टों और विघ्नोंको समाप्त नहीं करते तो फिर आपका 'दुष्टान्तक' नाम कैसे प्रसिद्ध हुआ? जैसे शेष धरतीको, सूर्यदेव प्रकाशको, सुधांशु सुधाको और अग्निदेव उष्णताको नहीं छोड़ते, उसी प्रकार आप भी अपने भक्तोंका परित्याग नहीं करते।"

फिर बालक बल्लाल ध्वस्त मण्डप एवं यत्र-तत्र बिखरे पूजाके उपकरणोंको देखकर दुःखसे व्याकुल हो अपने पिता (धनपति कल्याण)को शाप देने लगा—'जिसने मेरे परम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभुके मण्डपको नष्ट किया; मेरे स्वामी देवदेव विनायकके पावनतम विग्रहको फेंक दिया; पूजाके सभी उपकरणोंको नष्ट क, निर्दयतापूर्वक मुझे मारा, वह निश्चय ही अन्ध, बधिर, मूक और कुबड़ा हो।'

फिर अत्यन्त निष्ठाके साथ बल्लालने कहा—'यदि सर्वपूज्य गणेशजीमें मेरी दृढ़ भक्ति है तो मेरा वचन सत्य हो। कोई मेरे शरीरको नष्ट करके भी आदिदेव गणेशजीकी श्रद्धा-भक्तिसे मुझे विरत नहीं कर सकता! मेरा यह तन, मन और प्राण मेरे प्राणाराध्य गणेशजीपर समर्पित है। मैं कष्टसे तड़प-तड़पकर इस निर्जन अरण्यमें मृत्यु-मुखमें भले चला जाऊँ, किंतु यहाँसे भागकर कहीं नहीं जाऊँगा। अब अपने क्रूर पिताके घरका तो मुखतक भी न देखूँगा।'

सहसा भक्तप्राण सृष्टिपति देवदेव विनायक ब्राह्मणके वेषमें बल्लालके सम्मुख प्रकट हो गये। उन दयामय सर्वसमर्थ विघ्ननाशक प्रभुकी दृष्टि पड़ते ही बल्लालके सुदृढ़ बन्धन छिन्न हो गये। उसका शरीर पूर्ववत् सुन्दर और स्वस्थ हो गया। रक्त और घावके चिह्नका कहीं लेश भी नहीं था। अपनी यह परिवर्तित दशा एवं ब्राह्मणके तेजको देखते ही बल्लालने सोचा—'निश्चय ही ये मेरे परमाराध्य करुणा-सिन्धु महामहिम विनायकदेव ही हैं। और उसी क्षण प्रभु-दर्शनसे उसे निर्मल ज्ञान प्राप्त हो गया। बस, उसने श्रद्धापूर्ण हृदयसे परमप्रभुके चरणोंमें प्रणाम किया और गद्गद कण्ठसे उनकी स्तुति करने लगा—

त्वमेव मातासि पितासि बन्धुस्त्वमेव कर्तासि चराचरस्य।
निर्मासि दुष्टांश्च खलांश्च साधून् योनौ वियोनौ विनियुङ्क्ष्यथापि॥
त्वमेव दिक्चक्रनभोधराब्धिगिरीन्द्रकालानलवायुरूपः।
रवीन्दुताराग्रहलोकपालवर्णेन्द्रियार्थौषधिधातुरूपः॥
(गणेशपुराण १।२२।४५-४६)

'प्रभो! आप ही मेरे माता-पिता और बन्धु हैं। आप ही चराचर जगत्के कर्ता हैं। आप ही दुष्टों, खलों और साधुओंका भी निर्माण करते हैं और उन्हें बुरी-भली योनियोंमें डालते हैं। आप ही सम्पूर्ण दिशाएँ, आकाश, पृथ्वी, समुद्र, गिरिराज, काल, अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्रमा, तारे, ग्रह, लोकपाल, वर्ण, इन्द्रियाँ, ओषधि और ताम्रादि धातुरूप भी हैं।'

भक्त बल्लालके स्तवनसे प्रसन्न होकर सर्वपूज्य देवदेव विनायकने बल्लालको अपने हृदयसे लगा लिया और वे मेघगम्भीर स्वरमें बोले—'मेरा मन्दिर ध्वस्त करनेवाला नरकगामी होगा। मेरी आज्ञासे तुम्हारा शाप भी सिद्ध होगा। वह अन्धा, बहरा, गूँगा और कुबड़ा तो होगा ही, उसके शरीरसे रक्तस्राव होता रहेगा। उसका पिता उसे मातासहित घरसे निकाल देगा। तुम्हारी जो इच्छा हो, वर माँग लो। मैं तुम्हारी प्रत्येक कामना पूरी करूँगा।'

बल्लालने प्रेम-गद्गद कण्ठसे गजानन प्रभुसे वरकी याचना की—'करुणामय प्रभो! आप मुझे अपनी सुदृढ़ भक्ति प्रदान करें और इस क्षेत्रमें आप स्थिर रहकर लोगोंकी विघ्नोंसे रक्षा करते रहें*।'

भक्तप्राणधन देवदेव विनायकने बल्लालको अभीष्ट वर प्रदान करते हुए कहा—"मुझमें तुम्हारी अनन्य भक्ति होगी। मेरे नामके पहले तुम्हारा नाम प्रख्यात होगा। इस नगरमें 'बल्लाल-विनायक' नामसे गणपति प्रसिद्ध होंगे। भाद्रशुक्ल चतुर्थीको इस तीर्थकी यात्रा करनेवालोंकी प्रत्येक कामना मैं पूर्ण करूँगा।"

इतना कहकर परमप्रभु विनायक अन्तर्धान हो गये।

भक्त बल्लालकी प्रसन्नताकी सीमा नहीं थी। उसका जन्म और जीवन सफल हो चुका था। वहाँ बल्लालने अत्यन्त रमणीय गणेश-मन्दिरका निर्माण करवाया। तदनन्तर वहाँ विद्वान् ब्राह्मणोंके द्वारा देवदेव विनायककी सुन्दर मूर्तिकी स्थापना करवायी। बल्लालने अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक अपने प्राणनाथ विनायक प्रभुकी षोडशोपचारसे पूजा की। फिर परिक्रमा, प्रार्थना और बारंबार प्रणाम किया। वहाँ नाम-जप, कथा-कीर्तन एवं विविध प्रकारके महोत्सव होने लगे। सर्वकामद बल्लाल-विनायकके नामसे उक्त गणेश-विग्रहकी सर्वत्र ख्याति हो गयी।

ठीक उसी समय बल्लालका पिता धनपति कल्याण मूक, अन्ध और बधिर हो गया। उसके शरीरसे जहाँ-तहाँ रक्तस्राव होने लगा और दुर्गन्ध निकलने लगी।

पतिप्राणा इन्दुमती अपने पतिकी सहसा ऐसी दुर्दशा देखकर व्याकुल हो गयी। वह सोचने लगी—'मेरे पतिदेव धर्मपरायण, दानी एवं देवता तथा ब्राह्मणोंके भक्त हैं।

* ....देवं त्वयि भक्तिर्दृढास्तु मे।
अस्मिन् क्षेत्रे स्थिरो भूत्वा लोकान् रक्षस्व विघ्नतः॥
(गणेशपुराण १।२२।५१)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इनकी शास्त्रोंमें निष्ठा है। परनारीपर इन्होंने कभी कुदृष्टि नहीं डाली। फिर ऐसे निष्पाप पुरुषकी अचानक यह दयनीय स्थिति कैसे हो गयी ?'

कल्याणप्रिया इन्दुमती दुःखसे व्याकुल होकर रुदन कर रही थी। फिर उसने सोचा—'इन्होंने मेरे एकमात्र सरलतम भक्त-पुत्रपर निर्दयतापूर्वक दण्ड-प्रहार किया और फिर उसके हाथ-पैर बाँधकर उसे शून्य वनमें छोड़ आये। कहीं उस भक्त बालकके प्रति दुर्व्यवहारका ही यह भयानक कुफल इन्हें प्राप्त न हुआ हो।'

इन्दुमती दुःखसे अधीर और व्याकुल थी। वह नगर-निवासियोंके साथ उक्त वनमें पहुँची, जहाँ उसके पतिने बल्लालको निष्ठुरतापूर्वक पीटकर उसके हाथ-पैर बाँधे थे और फिर जनशून्य वनमें उसे एकाकी छोड़ दिया था। इन्दुमतीने देखा, सिन्दूर-परिपूरित, चतुर्भुज, त्रिनेत्र, भालचन्द्रकी चित्ताकर्षक सुन्दर मूर्ति है और उनके सम्मुख सरलता, निश्छलता एवं भक्तिका सजीव प्रतीक हाथ जोड़े ध्यानस्थ कुमार बल्लाल बैठा है! उसके दीप्तिमय अङ्गपर दण्ड-प्रहारजनित कहीं कोई चिह्न नहीं था।

अपने प्राणप्रिय पुत्रके शान्त स्वरूपको देखकर इन्दुमतीने क्रोधावेशमें नागरिकोंसे कहा—'तुमलोग मेरे पुत्रको देखो। तुमलोगोंने मेरे पतिसे सर्वथा झूठी बात कही थी। यदि इसी देवोपम बालकसे तुम्हारे पुत्रोंका जीवन नष्ट हो रहा था, तब अन्य किस बालकके साथ उनका जीवन उन्नत हो सकेगा ? तुमलोगोंने मेरे इस पुत्रकी निन्दा की और इसे कठोर दण्ड दिलवाया, यह कम अपराध नहीं है ?' पतिकी दारुण दशासे व्याकुल इन्दुमती पुत्र-स्नेहवश चीत्कार कर उठी।

नागरिक भी चकित थे। वे मन-ही-मन पश्चात्ताप कर रहे थे। उन्होंने अत्यन्त प्रेमपूर्वक इन्दुमतीसे कहा—'महाभागा! तुम रो क्यों रही हो ? तुम अपने पुत्रकी ओर दृष्टिपात करो। यह अरुण वस्त्र धारण किये, लाल चन्दन लगाये, लाल पुष्पोंकी माला पहने सिन्दूरार्चित जगद्वन्द्य वरदाता गजवक्त्रके सम्मुख किस प्रकार ध्यानमग्न बैठा है! इसमें ममता और अहंकारका लेश भी नहीं रह गया है। यह गणेशभक्त बल्लाल शुण्डरहित साक्षात् द्वितीय गणेश प्रतीत होता है।'

रुदन करती हुई इन्दुमतीने अपने पुत्रको वक्षसे सटा लिया और बोली—'बेटा! घर चलो। तुम्हारे पिताकी मति मारी गयी, जो उन्होंने इन लोगोंके वचनोंपर विश्वास कर लिया। इस समय वे बड़े कष्टमें हैं। वे अन्धे, बहरे और गूँगे हो गये हैं। उनके शरीरमें सर्वत्र घाव हो गये हैं। घावसे रक्त बह रहा है। उनका सम्पूर्ण अङ्ग काला हो गया है और उनसे दुर्गन्ध निकल रही है। उनके कष्टकी सीमा नहीं है। उन्होंने तुम्हें निर्दयतापूर्वक पीटकर सर्वथा अनुचित किया, किंतु तुम पुत्र-धर्मपर विचार करो; उनकी चिकित्साकी व्यवस्था करो। तुम्हारे कारण उनकी सर्वत्र प्रशंसा हो रही है। सत्पुत्र और यशस्वी संतानको अपने माता-पिताकी आज्ञाका पालन करना चाहिये। उनका आदर-सत्कार तथा पालन-पोषण करना सर्वथा उचित है।* तुम ओषधि, मन्त्र तथा देव-प्रार्थना आदिके द्वारा, जिस प्रकार सम्भव हो, अपने पिताको स्वस्थ करो, जिससे मेरा सौभाग्य बना रहे।'

इन्दुमतीकी प्रार्थना सुनकर सर्वथा विरक्त एवं ममता-शून्य बल्लालने अत्यन्त शान्त, किंतु दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया, 'यहाँ किसका कौन माता-पिता है और कौन किसका पुत्र है ? यह सब मङ्गलमूर्ति भगवान् विनायककी लीला है। मुझे उन अचिन्त्य अनन्त प्रभुकी कृपा प्राप्त हो गयी है। उन्होंने मेरी रक्षा कर मुझे पुनः नवजीवन प्रदान किया है। अब तो वे ही मेरे माता-पिता हैं। मैंने अपना तन, मन, प्राण और सर्वस्व उन करुणामय त्रातापर समर्पित कर दिया है।'

बल्लालने शान्तिपूर्वक आगे कहा—'कर्मफल भोगने ही पड़ते हैं। मन्दिर तोड़कर, पूजाके उपकरण फेंककर और गणेशजीके प्रिय शिशुको निर्दयतापूर्वक यातना देकर उसने अपने कर्मका ही फल प्राप्त किया है। तुम मेरा मोह त्यागकर अपने पतिकी सेवा करो। यहाँसे चली जाओ।'

ज्ञान-सम्पन्न सर्वथा विरक्त अपने पुत्रका स्पष्ट उत्तर सुनकर कल्याण-पत्नी इन्दुमतीने हाथ जोड़कर अत्यन्त विनयपूर्वक पुनः उससे कहा—'बेटा! तुम अपनी कृपा, स्नेह और अनुग्रहसे मेरे पतिका शाप दूर कर दो।'

सर्वथा निस्स्पृह एवं विरक्त बल्लालने उत्तर दिया—'इस जीवनमें तो शाप मिटेगा नहीं, किंतु अगले जन्ममें तुम इसकी माता और यह तुम्हारा पुत्र होगा। उस समय भी उसकी यही दशा रहेगी। इस कारण तुम्हारा पति तुम्हें पुत्रसहित घरसे निकाल देगा। तुम विदेशमें भटकती रहोगी

* मातापितृवचः कार्यं सत्पुत्रेण यशस्विना।
पूजनं च तयोः कार्यं पोषणं पालनं तथा॥
(गणेशपुराण १। २३। २३)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और फिर श्रीगणेशजीके परमभक्त एक श्रेष्ठ ब्राह्मणके शरीर-वायुके स्पर्शसे तुम्हारा पुत्र स्वस्थ हो जायगा। तदनन्तर तुम्हें दयामय गणेशजीका दर्शन प्राप्त होगा। और तुम धन्य हो जाओगी।'

इन्दुमती पुत्रके तिरस्कारसे दुःखी, पर उसके सुनिश्चित आश्वासनसे संतुष्ट होकर वहाँसे लौट आयी।

× × ×

भक्त वल्लाल अपने आराध्य देवदेव विनायककी सप्रीति पूजा कर उनकी प्रार्थना कर रहा था कि उसके सम्मुख श्रीगणेश-प्रेषित दिव्य विमान अवतरित हुआ। परम भाग्यवान् वल्लालने अपने परमप्रभु वल्लाल-गणपतिके चरणोंमें दण्डवत्-प्रणाम किया और फिर उस विमानपर बैठकर उनके अत्यन्त-सुखद दिव्य धामको चला गया।

देवदेव विनायकके अनन्य भक्त वल्लालकी यह पावन कथा सुननेसे मनुष्यकी मनःकामना पूरी होती है और वह समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है।*

(गणेशपुराणके आधारपर)

—शिवनाथ दुबे

मुद्गलऋषि

प्रख्यात गणपति-भक्त भुशुण्डी महर्षि मुद्गलके ही शिष्य थे और सच तो यह है कि वे महर्षि मुद्गलके ही अनुग्रहसे भगवान् गजवक्त्रके कृपापात्र हुए। उन महामुनि मुद्गलने अपने पावन मुद्गलपुराणमें अपने सम्बन्धमें दक्षको प्रायः सब कुछ बता दिया है।

शैशवसे ही इनपर शुभ संस्कार पड़े थे और पूजा-पाठ तथा नाम-जपमें इनकी प्रगाढ़ प्रीति थी। निष्ठा उत्तरोत्तर सुदृढ़ होती गयी और यौवनमें प्रवेश करते ही इन्होंने तपस्या प्रारम्भ कर दी। कुछ दिनों बाद उपोषण प्रारम्भ किया। पहले पाँच-पाँच दिनका और फिर दस-दस दिनका। उपोषण-समाप्तिके अनन्तर महर्षि मुद्गल किसानोंके फेंके हुए अनाजके दाने एकत्र कर उसीका आहार करते।

एक बारकी बात है। उपोषणके बाद वे व्रत-पारण करने ही जा रहे थे कि द्वारपर एक अतिथिने आकर कहा—'मैं भूखसे व्याकुल हूँ। मुझे अन्न प्रदान करो।'

तपस्वी मुद्गलने अपना आहार अत्यन्त आदरपूर्वक अतिथिको दे दिया और निरुद्विग्न चित्तसे वे तपश्चरणमें लग गये। उपोषणकी समाप्तिपर अन्न ग्रहण करते समय दूसरी बार भी यही हुआ। क्षुधार्त अतिथिने अन्नकी याचना की तथा परम तितिक्षु मुद्गलऋषिने हर्षपूर्वक अपना आहार अतिथिको समर्पित कर दिया और स्वयं निरन्न तपश्चरणमें लग गये। अनवरतरूपसे छः बार उपोषणके अनन्तर अतिथिने पारण-कालमें तपस्वी ऋषिका अन्न ले लिया और मुद्गलऋषि शान्तिपूर्वक अन्न देकर तपमें लग जाते।

'तुम्हें स्वर्ग-सुख प्राप्त होगा।'—अतिशय प्रसन्न अतिथिरूपी महर्षि दुर्वासाने कठोर तपस्वी मुद्गलऋषिको वर प्रदान कर दिया।

सुरेन्द्र-प्रेषित विमानसे उतरकर शचीपति-दूतने मुद्गल-ऋषिसे स्वर्ग चलनेकी प्रार्थना की। महर्षि मुद्गलने सहस्राक्षके दूतसे विनयपूर्वक पूछा—'आप कृपापूर्वक मुझे स्वर्गके गुण-दोष बतानेका कष्ट करें।'

देवदूतने विनम्र शब्दोंमें उत्तर दिया—'मुनिवर! स्वर्गलोक भोगभूमि एवं मर्त्यधाम कर्मक्षेत्र है।'

महर्षि मुद्गलने पुनः पूछा—'सर्वोत्तम स्थान एवं उसकी प्राप्तिका साधन बतानेकी दया कीजिये।'

देवदूतने तीनों लोकोंका वर्णन करते हुए कहा—'ब्रह्म-स्वरूप होनेके लिये यही धरित्री श्रेष्ठ है। यहाँ कर्मके द्वारा शुद्ध अन्तःकरणमें ज्ञानका उदय होता और मनुष्य सायुज्य भी प्राप्त कर लेता है।'

महर्षि मुद्गलने अत्यन्त आदरपूर्वक देवदूतको वापस लौटाते हुए कहा—'मुझे स्वर्ग-सुख अभीष्ट नहीं।'

मुद्गलऋषि स्वगोत्रपूर्वज अङ्गिराऋषिके आश्रम पहुँचे। उन्होंने ऋषिके चरणोंमें साष्टाङ्ग प्रणाम कर निवेदन किया—'आप कृपापूर्वक मुझे शाश्वत सुखदायक ज्ञान प्रदान करें।'

ऋषिवर अङ्गिरा पहले तो मौन थे; किंतु सुयोग्य पात्रका आग्रह भी वे टाल नहीं सके। उन्होंने मुद्गलऋषिको ब्रह्मज्ञानका बोध कराते हुए कहा—'गणेश ब्रह्मणस्पति हैं। उनकी श्रद्धा-भक्तिपूर्ण उपासनासे तुम भी ब्रह्मस्वरूप हो जाओगे।'

* यच्छ्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुक्तः काममवाप्नुयात्॥ (गणेशपु० १। २२। ५७)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दयामय ऋषिवर अङ्गिराने परम तपस्वी मुद्गलमुनिको भगवान् गणेशकी सुविस्तृत, मधुर, मनोहर एवं मङ्गलमयी लीला-कथा सुनाकर उन्हें गणेशको प्रसन्न करनेके लिये एकाक्षर-मन्त्रकी दीक्षा दी और साथ ही उपासनाकी निर्विघ्न सफलताके लिये उन्होंने परम तपस्वी मुद्गलऋषिको अपना अमोघ आशीर्वाद भी प्रदान कर दिया।

मुद्गलऋषि शम, दम एवं तितिक्षाका दृढ़तापूर्वक पालन करते और भगवान् गणेशका ध्यान करते हुए एकाक्षर-मन्त्रका जप करने लगे। बड़ा कठोर तप किया उन्होंने। उनकी आराधनासे प्रसन्न होकर भक्तप्रिय भगवान् गजवक्त्रने मुद्गलऋषिको प्रत्यक्ष दर्शन देकर कहा—'मैं संतुष्ट हूँ। तुम इच्छित वर माँग लो।'

'आप कृपापूर्वक मुझे अपने लोकोद्धारक पद-पङ्कजकी सुदृढ़ भक्ति प्रदान करें।'

दयामूर्ति जगत्त्राता गजानन प्रभुने उन्हें अपनी भक्ति प्रदान कर दी और भक्तवर मुद्गलऋषि उनके पादार-विन्दमें तल्लीन हो गये। वे स्वानन्दसुखका आस्वादन करने लगे। अपनी उस आनन्दमग्नावस्थामें ही उन्होंने भगवान् गणेशका परमतत्त्व और रहस्य सुलझानेमें समर्थ प्रसिद्ध मुद्गलपुराणकी रचना की। —शि० दु०

गणेश-भक्त दक्ष और भीम

अत्यन्त प्राचीन कालकी बात है। कर्नाटक देशके भानु-नगरमें बल्लभ-नामक एक यशस्वी नरेश रहते थे। वे धन-धान्य एवं विद्या-विनयसे सम्पन्न तो थे ही, रूपवान् एवं अद्भुत पराक्रमी भी थे। उनकी कीर्ति सुदूर देशोंतक व्याप्त थी। राजा बल्लभकी सुन्दरी सहधर्मिणीका नाम कमला था। पतिपरायणा कमला अनेक दुर्लभ गुणोंसे गौरवान्वित थी; किंतु उसे कोई संतान नहीं थी; इस कारण वह भक्तिपूर्वक देवाराधन करती रहती थी।

अधिक समय बीत जानेपर उसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ; किंतु पुत्रको देखकर प्रसन्न होना तो दूर, कमला चीत्कार कर उठी। सद्यःप्रसूत शिशु मूक, अन्ध, बधिर और कुष्ठी था। उसके शरीरके अनेक स्थानोंसे रक्त बह रहा था और दुर्गन्ध निकल रही थी। कमला अत्यन्त व्याकुल होकर क्रन्दन करने लगी। रुदन करते हुए वह कह रही थी, 'मुझे ऐसा पुत्र नहीं होता तो अच्छा था। मूक-अन्ध-बधिर और कुष्ठी पुत्र लेकर मैं क्या करूँगी? परमेश्वर मुझे मृत्यु ही दे देते तो यह अधिक अच्छा होता।'

प्राणप्रिया साध्वी कमलाका क्रन्दन और विलाप सुनकर उसके पति नरेश बल्लभने प्रसूति-द्वारपर जाकर उसे आश्वस्त करते हुए प्रेमपूर्ण मधुर वाणीमें कहा—'प्रिये! तुम दुःख त्यागकर धैर्य धारण करो। कर्मोंकी गति अत्यन्त अद्भुत होती है। पूर्वजन्मके अशुभ कर्मोंसे प्राणीको दुःख भोगने पड़ते हैं। दुःखी सहसा सुखी हो जाता और सुखी व्यक्तिको दुःख और कष्टमय जीवन व्यतीत करनेके लिये विवश होना पड़ता है।* अतएव तुम चिन्ता मत करो। हम भी पुत्रके सुन्दर स्वास्थ्यके लिये मणि, मन्त्र, ओषधि, जप, तप, देवाराधन और तीर्थ-यात्रा करेंगे।'

अपने पतिके समझानेपर कमलाने स्नान किया और बुद्धिमान् नरेशने बालकके जातकर्मादि संस्कार करवाये। उन्होंने सपत्नीक ब्राह्मणोंकी भक्तिपूर्वक पूजा की और उन्हें विविध वस्त्रालंकार प्रदान किये। फिर आदरपूर्वक भोजन कराया और पुष्कल दक्षिणा प्रदान कर उन्हें संतुष्ट किया।

तदनन्तर भानु-नरेशने ब्राह्मणों, साधुओं, ज्योतिषियों एवं वेदपाठियोंको सादर आमन्त्रित किया। उनको सविधि सम्मानपूर्वक वस्त्रालंकार एवं सम्पत्ति प्रदान कर उन्होंने उनसे बालकका नामकरण-संस्कार करनेकी प्रार्थना की। दैवज्ञोंने विचारपूर्वक बल्लभपुत्रका नामकरण किया—'दक्ष'।

फिर धर्मज्ञ राजा बल्लभने दक्षके स्वास्थ्य-लाभके लिये अनेक प्रकारके अनुष्ठान और जप कराये। मन्त्रोंके प्रयोग करवाये। सर्वोत्तम उपचार किये और स्वयं अपने पुत्रकी रोग-मुक्तिके लिये उन्होंने बारह वर्षतक तपस्या की; किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। दक्ष पूर्ववत् मूक, अन्ध, बधिर और कुबड़ा

* पूर्वजन्मकृतात्पापाज्जायते दुःखभाङ्नरः।
दुःखवान् सुखमाप्नोति सुखवानपि तत्पुनः॥
(गणेशपुराण १। १९। ४७)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो बना ही रहा, उसके गलित्कुष्ठमें तनिक भी अनुकूल परिवर्तन नहीं हुआ। उसके अङ्गोंसे रक्त बहता रहा और शरीरसे दुर्गन्ध निकलती ही रही।

दक्षके पिता भानु-नरेश दुःखी तो थे ही, वे अत्यन्त कुपित हो उठे। उन्होंने अपनी सारी मानसिक अशान्ति एवं दुःखका मुख्य हेतु अपनी सरला साध्वी पत्नी कमला और पुत्र दक्षको समझा। इस कारण उन्होंने निर्ममतापूर्वक मूकान्ध-बधिर और कुष्ठी पुत्रके साथ अपनी सहधर्मिणी कमलाको भी राज्यसे बहिष्कृत कर दिया।

राजा बल्लभकी पतिपरायणा अर्द्धाङ्गिनी कमला सर्वथा विवश, असहाय और निरुपाय थी। पतिपरित्यक्ता रानी कमला रोती हुई अपने राज्यकी सीमासे बाहर निकली। विदेशसे सर्वथा अपरिचित कमलाकी आजीविकाका कोई साधन नहीं था और उसके साथ दुर्गन्धयुक्त मूकान्ध-बधिर कुबड़ा रुग्ण पुत्र था। वह दुःखसे अधीर और व्याकुल होकर रोती-कलपती रही। उक्त दयनीय परिस्थितिमें भी चोरोंने उसके आभूषणादि छीन लिये। अनाथ रानी अपने तथा अपने अभागे बच्चेकी उदरपूर्तिके लिये भीख माँगने लगी। राजसदनमें दासियोंसे घिरी अत्यन्त सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करनेवाली परम सुन्दरी सुकुमारी कमलाकी देह अत्यन्त कठिनाई और दुःखसे काली पड़ गयी। वस्त्र मैला हो गया; फट गया।

अकल्पित असह्य कष्ट और अपमान सहती हुई दरिद्रा और भिक्षुणी राजरानी कमला अपने साक्षात् पापमूर्ति पुत्रको लेकर गाँव-गाँव भीख माँगती एक शिव-मन्दिरपर पहुँची। थकी-हारी दुःखिनी साश्रुनयना कमलाने भगवान् आशुतोषके चरणोंमें प्रणाम किया और अपने पुत्र दक्षका मस्तक भी अघनाशन त्रिनयन धूर्जटिके चरणोंपर रखा। तदनन्तर वह अपने मूकबधिरान्ध पुत्रको मन्दिरपर बैठाकर स्वयं समीपस्थ ग्राममें भिक्षा माँगने चली गयी।

भिक्षाटनसे लौटनेपर उसने पुत्र दक्षको खिला-पिलाकर सुला दिया और स्वयं दयानिधान देवाधिदेव महादेवजीके चरणोंमें लेटकर रोने लगी। शोकविह्वला सजलनयना पति-परित्यक्ता भिक्षाजीविनी रानी कमलाने हाथ जोड़े अत्यन्त व्याकुलतासे प्रार्थना की—'करुणायतन! भोलेनाथ! दया कीजिये। मेरे अपराधोंको क्षमा कर दीजिये। अब मुझसे यह दुःख नहीं सहा जा रहा है।'

दक्षकी माता बल्लभ-पत्नी रानी कमला दुःखसे छटपटाती हुई कुन्देन्दु-गौर त्रिपुरारिके सम्मुख हाथ जोड़े करुण-प्रार्थना करती ही रही और प्रार्थना करती हुई वह वहीं सो गयी।

दूसरे दिन कमलाने स्नानोपरान्त निखिलभयहारी शिवकी भक्तिपूर्वक पूजा कर उनके मङ्गलमय चरण-कमलोंमें साष्टाङ्ग प्रणाम किया। तदनन्तर वह हाथ जोड़कर करुणायतन महेश्वरका स्तवन करने लगी। दुःखातिरेकसे उसके नेत्रोंसे अश्रु प्रवाहित हो रहे थे। उसने पुनः पापनाशक परमप्रभु शिवके चरणोंमें श्रद्धा-भक्तिपूर्वक प्रणाम किया।

सर्वथा अनाथ, परमदुःखिनी, भिक्षाजीविनी कमलाने अपना भिक्षा-भाजन उठाया और अपने पुत्र दक्षका हाथ पकड़कर भिक्षा माँगने निकली। वह कुछ ही दूर गयी थी कि उसे और उसके मूकान्ध बधिर कुष्ठी पुत्रके शरीरको श्रीगणेशजीके एक अनन्य भक्त पवित्रतम श्रेष्ठ ब्राह्मणकी शरीरवायुका स्पर्श प्राप्त हुआ।

अत्यन्त आश्चर्य! सर्वथा असम्भवको क्षणार्द्धमें सम्भव देखकर कमलाको सहसा विश्वास नहीं हुआ। किंतु सूर्य-दीप्तिकी भाँति निर्भ्रान्त सत्यको प्रत्यक्ष देखकर हर्षातिरेकसे उसका मन-मयूर नृत्य करने लगा। जैसे उसकी सारी आपदा ही दूर नहीं हुई, उसे दुर्लभतम निधि भी प्राप्त हो गयी।

उसके प्राणप्रिय पुत्र दक्षकी देह दिव्य हो गयी। उसके नेत्र प्रफुल्ल कमल-तुल्य हो गये। वह सब कुछ देखने लगा। कानोंसे सब कुछ सुनने लगा। उसका कूबड़ सर्वथा लुप्त हो गया। कुष्ठ, बहनेवाले रक्त और दुर्गन्धके स्थानपर वह परमाकर्षक सर्वाङ्ग-सुन्दर राजकुमार हो गया। उसकी वाणी मुखरित हो गयी। उसने अपनी परम तपस्विनी माता कमलाके चरणोंपर मस्तक रख दिया और फिर हाथ जोड़कर गद्गद कण्ठसे श्रद्धापूरित मधुरतम वाणीमें कहा—'माँ'।*

कमलाने अपने प्राणप्रिय परम सुन्दर कुमार दक्षको हृदयसे लगा लिया। हर्षातिरेकसे उसके नेत्रोंसे आँसू बहने लगे। दक्षने अत्यन्त विनम्र वाणीमें कहा—'माँ! तेरी कठोरतम तपश्चर्या पूर्ण हो गयी। अब मैं तेरी सेवा करूँगा।'

* सिन्धु-देशान्तर्गत पल्ली-नगरनिवासी शापग्रस्त धनिक कल्याणका वृत्तान्त इसी अङ्कमें प्रकाशित 'श्रीविनायक-भक्त बल्लाल' शीर्षक भक्त-गाथामें देखिये।—लेखक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हर्षसे पुलकित कमला अत्यन्त चकित थी। वह अचिन्त्य महिमामय, सर्वान्तर्यामी प्रभुकी कृपाका अद्भुत चमत्कार देखकर कहने लगी—'मेरा प्राणप्रिय दक्ष मणि, मन्त्र, ओषधि एवं होम आदिसे अच्छा नहीं हुआ; कठोर तपसे भी यह स्वास्थ्य-लाभ नहीं कर सका; किंतु भक्तिपूर्वक श्रीगणेश-नामके जापक श्रेष्ठ ब्राह्मणकी देह-वायुके स्पर्शसे यह नीरोग ही नहीं, परम सुन्दर और परमाकर्षक हो गया। मेरे समस्त पाप-ताप सर्वथा शान्त हो गये। मुझे अधम नारकीय जीवनसे उबारनेवाले वे ब्राह्मणदेव सहसा कहाँ चले गये? मुझे उनका दर्शन कहाँ प्राप्त होगा?'

फिर राजकुमार दक्षकी जननीने दृढ़ताके साथ कहा—'वे दयामूर्ति ब्राह्मणदेव जहाँ-कहीं होंगे, मैं उन्हें अवश्य खोजूँगी। अब अपना जीवन सफल बनानेके लिये उनका मङ्गलदर्शन ही मेरा एकमात्र उद्देश्य होगा। इस लक्ष्यकी पूर्तिके लिये मैं अपना और अपने पुत्रका जीवन होम दूँगी।'

विघ्नहारी प्रभुके अनन्य भक्त द्विजवरके शरीरकी वायुका स्पर्श क्या हुआ, दुःखिनी कमला और उसके पुत्रकी अपरिसीम विपत्ति और पीड़ा दूर हो गयी; उनके जीवनका स्वर्णिम प्रभात प्रकाशित हो उठा। अब कमला भिक्षा माँगने निकली तो सर्वत्र उसका सम्मान और सत्कार होने लगा। कुलीन धनिक उन्हें अपने यहाँ आदरपूर्वक आमन्त्रित करने लगे। वे उन्हें मूल्यवान् नवीनतम वस्त्र और अलंकार प्रदान कर विविध प्रकारके व्यञ्जन परसने लगे। सभी सम्पन्न पुरुषोंकी आकाङ्क्षा होती कि यह आदर्श देवी और तेजस्वी कुमार हमारे यहाँ पधारे। धनहीन स्त्री-पुरुष अपनी मधुर वाणी और फल-मूलसे ही उनकी सेवा करना चाहते। इस प्रकार प्रतिदिन सर्वत्र उनकी अभ्यर्थना होती, किंतु कमलाका ध्यान उपलब्ध सुख-सुविधाओंकी ओर रञ्चमात्र भी नहीं जाता। वह तो उस महिमामय गणपतिके अनुपम भक्त ब्राह्मणके दर्शनके लिये उत्सुक और आतुर थी, जिनकी पावनतम अङ्ग-वायुके स्पर्शसे उसे सर्वथा अकल्पित दुर्लभ निधि प्राप्त हो गयी थी तथा उसके समस्त रोग और शोकका निवारण हो गया था।

एक दिनकी बात है। दक्षने अपनी माता कमलाके पास जाकर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक कहा—'माँ! आज मुझे उक्त श्रेष्ठ ब्राह्मणके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त हो गया।'

हर्षातिरेकसे अधीर होकर कमलाने पूछा—'अरे कब? कहाँ? और क्या आज्ञा दी उन्होंने?'

आनन्दविह्वल कुमार दक्षने उत्तर दिया—'आज अभी कुछ ही पहले नगरके एक महानुभावने मेरा परिचय पूछा। मैंने उन्हें अपने जन्मसे लेकर अबतककी अपनी और तुम्हारी सारी घटना सुना दी। मुझे पहले पता ही नहीं था कि हमें नवजीवनप्रदाता वे ही परम पावन ब्राह्मण देवता हैं। उन्होंने दयापूर्वक हमें आदिदेव करुणाब्धि विनायकका अष्टाक्षर-मन्त्र प्रदान कर उनकी उपासना करनेकी आज्ञा दी है।'

कमलाकी प्रसन्नताकी सीमा नहीं थी। उसे जैसे जीवनकी बहुमूल्य निधि प्राप्त हो गयी। वह अपने पुत्र कुमार दक्षके साथ एक अँगूठेपर खड़े होकर श्रीगणेशजीका ध्यान करते हुए उनके अष्टाक्षर-मन्त्रका जप करने लगी। श्रद्धा-भक्तिकी युगलमूर्ति पुत्रसहित माँ निराहार रहकर जप कर रही थी। उनकी सर्वसुखप्रदाता श्रीगणेशजीके पादपद्मोंमें अद्भुत निष्ठा और अनुपम प्रीति थी। माता और पुत्रका सुन्दर शरीर परमप्रभु गजाननके ध्यानमें तल्लीन होकर जप करते हुए अत्यन्त क्षीण हो गया। उनकी दृढ़ श्रद्धा-भक्ति एवं नैष्ठिक जपाराधनसे दयासागर परम तेजस्वी गजमुख उनके सम्मुख प्रकट हो गये।

उन प्रभुके चार भुजाएँ थीं। उनका शरीर विशाल था। वे भगवान् गजमुख अत्यन्त सुन्दर थे। अनेकों सूर्योंके समान तेजस्वी थे। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत हुआ, मानो निशाके अन्तमें सूर्योदय हो गया हो। उनका मस्तक रत्न, सुवर्ण और मुक्ताजटित मुकुटसे मण्डित था। शरीरपर रेशमी पीताम्बर शोभा दे रहा था। वे सोनेके बने हुए बाजूबंदसे विभूषित थे। उनके समीप महान् सिंहासन था, जिसपर वे एक घुटना मोड़कर बैठे थे। सोनेकी करधनी, रत्नजटित अगूठी उनकी शोभा बढ़ा रही थी। वे अपने उदरपर विशाल सर्प धारण किये हुए थे। उनका आधा शरीर (मुखभाग) हाथीका था और वे एक दाँतसे सुशोभित थे।*

* चतुर्भुजो महाकायो वारणास्योऽतिसुन्दरः।
अनेकसूर्यसंकाशो निशि सूर्य इवोदितः॥
रत्नकाञ्चनमुक्तावन्मुकुटभ्राजिमस्तकः।
पीतकौशेयवसनो हाटकाङ्गदभूषणः॥
एकजानुनिपातेन संनिविष्टो महासने।
कटिसूत्रं काञ्चनीयं मुद्रिकां रत्नसंयुताम्॥
महाहिं जठरे बिभ्रदेकदन्तं गजार्धकम्।
(गणेशपुराण १। २०। ३१-३४)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मङ्गल-भवन गजवक्त्रके इस अनिर्वचनीय सुन्दर स्वरूपका कमला और दक्ष अतृप्त नेत्रोंसे दर्शन कर ही रहे थे कि भगवान् गणेश उन्हें उक्त पवित्रतम श्रेष्ठ ब्राह्मणके रूपमें दीखने लगे। मङ्गल-मोद-प्रदाता प्रभु गजाननने ब्राह्मण-वेषमें कहा—'मैं तुम्हारी श्रद्धा और भक्तिसे प्रसन्न हूँ। तुम इच्छित वर माँगो।'

समस्त पापनाशन एकदन्त प्रभुको ब्राह्मण-वेषमें प्रसन्न देखकर कमला और उसका पुत्र उनके भुवनपावन चरण-कमलोंमें लेट गये। फिर कृतार्थ दक्ष उन त्रैलोक्यत्राताकी बद्धाञ्जलि स्तुति करने लगा—

पूर्वजन्मकृतं पुण्यं फलितं मे द्विजोत्तम।
यन्मयाऽदर्शि रूपं ते द्विविधं परमं महत्॥
वैनायकं च वैप्रं च जन्म मेऽजनि सार्थकम्।
कारणानां परं त्वं च कारणं छन्दसामपि॥
परं ज्ञेयं परं ब्रह्म श्रुतिमृग्यं सनातनम्।
त्वमेव साक्षी सर्वस्य सर्वस्यान्तर्बहिस्थितः॥
त्वमेव कर्ता कार्याणां लघुस्थूलशरीरिणाम्।
नानारूप्येकरूपी त्वं नीरूपश्च निराकृतिः॥
त्वमेव शंकरो विष्णुस्त्वमेवेन्द्रोऽनलोऽर्यमा।
भूवायुखस्वरूपोऽपि जलसोमर्क्षरूपवान्॥
विश्वकर्ता विश्वपाता विश्वसंहारकारकः।
चराचरगुरोर्गोप्ता ज्ञानविज्ञानवानपि॥
भूतं भावि भवच्चैव त्वमेवेन्द्रियदेवताः।
कलाकाष्ठामुहूर्ताश्च श्रीर्धृतिः कान्तिरेव च॥
त्वमेव सांख्ययोगश्च शास्त्राणि श्रुतिरेव च।
पुराणानि चतुःषष्टिकला उपनिषत्तथा॥
त्वमेव ब्राह्मणो वैश्यः क्षत्रियः शूद्र एव च।
देशो विदेशस्त्वं क्षेत्रं पुण्यक्षेत्राणि यान्युत॥
त्वं प्रमेयोऽप्रमेयश्च योगिनां ज्ञानगोचरः।
त्वमेव स्वर्गः पातालं वनान्युपवनानि च॥
ओषध्योऽथ लतावृक्षकन्दमूलफलानि च।
अण्डजा जारजा जीवाः स्वेदजा उद्भिजा अपि॥
कामः क्रोधः क्षुधा लोभो दम्भो दर्पो दया क्षमा।
निद्रा तन्द्री विलासश्च हर्षः शोकस्त्वमेव च॥

(गणेशपुराण १। २०। ३७–४८)

'द्विजश्रेष्ठ! आज मेरे पूर्वजन्मका किया हुआ पुण्य फलित हो गया; क्योंकि आज मुझे आपके परम महान् विनायक तथा विप्र द्विविध रूपका दर्शन प्राप्त हुआ। इससे मेरा जन्म सफल हो गया। आप समस्त कारणोंमें परम कारण हैं। वेदोंके प्राकट्यमें भी आप ही हेतु हैं। आप ही सर्वोत्तम ज्ञेयस्वरूप सनातन परब्रह्म हैं, जिसे श्रुतियाँ भी ढूँढ़ती रहती हैं। आप ही सबके साक्षी और अखिल जीव-जगत्के बाहर तथा भीतर विराजमान हैं। लघु तथा स्थूल शरीरवाले जितने भी उत्पन्न प्राणी हैं, उन सबके कर्ता आप ही हैं। आप नाना रूपवाले होकर भी एकरूपी हैं। आप रूप तथा आकारसे रहित हैं। आप ही शिव और विष्णु हैं। आप ही इन्द्र, अग्नि और अर्यमा हैं। पृथ्वी, वायु और आकाश भी आपके ही रूप हैं। जल, सोम तथा नक्षत्र-रूप भी आप ही हैं। आप ही जगत्के स्रष्टा, पालक और संहारक हैं। चराचर गुरु ब्रह्माके रक्षक भी आप ही हैं। आप ज्ञानवान् तथा विज्ञानवान् हैं। भूत, भविष्य और वर्तमान सब कुछ आप ही हैं। आप ही सम्पूर्ण इन्द्रियोंके देवता हैं। कला, काष्ठा, मुहूर्त, श्री, धृति और कान्ति आप ही हैं। आप ही सांख्य, योग, शास्त्र, श्रुति, पुराण, चौसठ कलाएँ और उपनिषद् हैं। आप ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हैं। देश, विदेश, क्षेत्र और पुण्यक्षेत्र जितने हैं, वे सब आप ही हैं। आप ही प्रमेय और अप्रमेय तत्त्व हैं। आप केवल योगीजनोंके ज्ञानके विषय होते हैं। आप ही स्वर्ग, पाताल, वन, उपवन, ओषधियाँ, लताएँ, वृक्ष, कन्द, मूल और फल हैं। अण्डज, जरायुज, स्वेदज और उद्भिज—ये चार प्रकारके प्राणी भी आप ही हैं। काम, क्रोध, क्षुधा, लोभ, दम्भ, दर्प, दया, क्षमा, निद्रा, तन्द्रा, विलास, हर्ष और शोक आप ही हैं।'

देवदेव विनायकने दक्षके स्तवनसे संतुष्ट होकर मेघगम्भीर स्वरमें मुस्कराते हुए कहा—'महाभाग! मैं तुमलोगोंकी भक्ति और स्तवनसे पूर्ण प्रसन्न हूँ; किंतु जिसकी अङ्ग-वायुसे तुम्हारा शरीर दिव्य हो गया, तुम्हें वाणी, श्रवण-शक्ति एवं नेत्र प्राप्त हुए, वही मेरा अन्यतम प्रीति-भाजन श्रेष्ठ ब्राह्मण तुम्हारी समस्त इच्छाओंकी पूर्ति करेगा। वह ध्यान करते ही तुमको दर्शन देगा।'

परमप्रभु विनायक अन्तर्धान हो गये। कमला अवसन्न रह गयी और दक्ष व्याकुल होकर क्रन्दन करने लगा। पूर्वजन्मके कितने महान् पुण्य और तपसे सर्वलोकमहेश्वर विनायकने प्रत्यक्ष दर्शन दिया और तुरंत अलक्षित हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गये। लुटे वणिक्‌की भाँति दक्ष रोते हुए धरतीपर लोटने लगा। वह छटपटाता हुआ कह रहा था—'प्रभो विनायक! आप हमें छोड़कर कहाँ चले गये? दयाधाम! आप कहाँ मिलेंगे? प्राणनाथ! आप कहाँ मिलेंगे?'

गणेश-भक्त दक्षकी बड़ी विचित्र दशा हो गयी। उसे अन्न, जल, वस्त्र—यहाँतक कि अपने शरीरकी भी सुधि नहीं रही। वह अपने प्राणसर्वस्व विनायकदेवके वियोगमें छटपटाता हुआ पागलोंकी भाँति इधर-उधर दौड़ने लगा। वह पथिकोंसे ही नहीं, वृक्षों, लताओं और वल्लरियोंसे आतुरतापूर्वक एक ही प्रश्न करता—'देवदेव विनायक कहाँ गये? आपने मेरे जीवनधन विनायकको इधर देखा है? आपलोग बोलते क्यों नहीं? सब-के-सब मौन क्यों हैं? कृपया मुझे विनायक-देवका पता बता दीजिये।'

दक्ष विनायक-वियोगकी असह्य ज्वालासे झुलस रहा था। वह उन्मत्त-तुल्य प्रलाप करता हुआ धरतीपर गिरकर मूर्च्छित हो गया। उक्त अचेतन स्थितिमें उसे पुनः उसी ब्राह्मणके दर्शन हुए। उन्होंने दक्षसे कहा—'कुमार! मैं मुद्गलब्राह्मण हूँ। श्रीगणेशजीके प्रकट होनेपर उनसे तुमने जो कुछ माँगा था, वह सब मैं तुम्हें देता हूँ। तुम्हारी समस्त कामनाएँ पूरी होंगी।'

दक्षके नेत्र खुले। अब वह पूर्ण स्वस्थचित्त था, शान्त था। उसने अनुभव किया, 'जैसे मैं अभी सोकर जगा हूँ।' वह अत्यन्त प्रसन्न था। उसने तुरंत जाते हुए एक ब्राह्मणसे पूछा—'आपने गजमुख-भक्त मुद्गलमुनिका आश्रम देखा है?'

ब्राह्मणने उत्तर दिया—'प्रख्यात महामुनि मुद्गलका पावनतम आश्रम तो अत्यन्त समीप है।' ब्राह्मणने आश्रम-का मार्ग बतला दिया।

दक्ष सर्वाभयप्रद मुद्गलमुनिका ध्यान करता हुआ उनके आश्रमके द्वारपर पहुँचा। आश्रम अत्यन्त दिव्य और नन्दनवनकी भाँति अतिशय सुन्दर तथा सुखद था। वहाँ दक्षने वेद-वेदाङ्गतत्त्वज्ञ एवं सर्व-शास्त्रविशारद सूर्यदीप्ति-तुल्य परम तेजस्वी महामुनि मुद्गलको शिष्योंसे सुशोभित देखा।

महर्षि मुद्गलके सम्मुख चतुर्भुज, त्रिनयन, महाप्रभु विनायककी रत्नकाञ्चननिर्मित, नानालंकारशोभित, परम सुन्दर महनीय मूर्ति थी और वे विधिपूर्वक षोडशोपचारसे उसकी पूजा कर रहे थे।

श्रीगणेशजीके परम प्रेमी महामुनिका दुर्लभ दर्शन प्राप्त होते ही दक्षने अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिपूर्वक उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया। हर्षातिरेकसे उसके नेत्रोंसे अश्रु प्रवाहित होने लगे। मुनिवर मुद्गलने दक्षसे पूछा—'तुम कौन हो? यहाँ किस अभिप्रायसे आये हो? और तुम्हें क्या दुःख है? मुझसे स्पष्ट कहो।'

परमर्षि मुद्गलके वचन सुन कमलानन्दन दक्षने सावधान होकर अत्यन्त श्रद्धाके स्वरमें निवेदन किया—'दयामय! मैं कर्नाटकदेशस्थ भानुनगरके परम पराक्रमी क्षत्रियनरेश बल्लभकी साध्वी पत्नी कमलाका पुत्र हूँ। मैं जन्म-कालसे ही मूकान्धबधिर, कुबड़ा और कुष्ठी था। मेरे शरीरके क्षतोंसे रक्त बहता और दुर्गन्ध निकलती रहती थी। मन्त्रौषधियाँ निष्फल हुईं। मेरे पिताके द्वादशवर्षीय तपका भी कोई परिणाम नहीं निकला, तब उन्होंने कुपित होकर मेरे साथ मेरी माताको भी राज्यसे निकाल दिया। मेरी माता कमला भिक्षाटनपर जीवननिर्वाह करती हुई अत्यन्त दुःख पा रही थी।

'भिक्षा माँगती हुई मेरी माँ कौण्डिन्यनगर पहुँची। वहाँ अत्यन्त आश्चर्यजनक घटना घटी। एक दिन आपकी शरीर-वायुके स्पर्शसे हमारा सारा कष्ट जाता रहा। मैं पूर्ण स्वस्थ और सुन्दर हो गया। माँका सर्वत्र सम्मान होने लगा। तब हमलोगोंने आपका दर्शन प्राप्त करनेकी कठोर प्रतिज्ञा की और सर्वत्र आपको ढूँढ़नेमें लग गये।'

भानु-नरेश बल्लभ-पुत्र दक्ष अत्यन्त विनयपूर्वक आत्मकथा निवेदित कर रहा था—'आपने पुनः कृपा की। आपके आदेशसे हम दोनों निराहार रहकर देवदेव विनायक-का जपाराधन करने लगे। क्षिप्रप्रसादन दयामय प्रभु हमारे सम्मुख प्रकट हो गये। देव, ऋषि, गन्धर्व और किंनरोंसे सेवित उन भक्तिप्रिय परशु-कमल-माला-मण्डित और मोदकधारी चतुर्भुज, त्रिनयन, सर्पयज्ञोपवीतधारी, दिव्य वस्त्रालंकार-भूषित, परम तेजस्वी प्रभु गजमुखके दर्शन कर हम निहाल हो गये; किंतु कुछ ही क्षणोंमें उन्होंने अपना मङ्गल-निकेतन गजवक्त्ररूप समेटकर आपके मङ्गलमय पावन स्वरूपमें दर्शन दिया। मैं हर्ष-गद्गद कण्ठसे उन अनिर्वचनीय प्रभुका स्तवन करने लगा। संतुष्ट होकर प्राणेश्वर गणेशजीने आपके स्वरूपमें कहा—'मैं तुम दोनोंकी निष्ठा और तपसे पूर्ण प्रसन्न हूँ; किंतु तुम्हारे समस्त मनोरथ मुद्गल ब्राह्मण पूर्ण करेगा।'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

"मेरे जीवनसर्वस्व अन्तर्धान हो गये और मैं मणिहीन फणिकी भाँति छटपटाता हुआ मूर्च्छित हो गया। मेरी अचेतावस्थामें पुनः दयाधाम गणेशजीने आपके ही स्वरूपमें मुझे दर्शन दिया और अत्यन्त प्रीतिपूर्वक कहा—'वर माँगो।'

"मैंने परम प्रभुसे याचना की—'मुझे आपके मङ्गलमय चरण-कमलोंकी सुदृढ़ भक्ति और सुस्थिर लक्ष्मीकी प्राप्ति हो।' और मुझे वह वर प्राप्त हो गया। तदनन्तर आपके अनुग्रहसे मुझे आपके आश्रमका भी पता लग गया और अब भगवान् श्रीगणेशजीकी कृपासे आप मेरे नेत्रोंके सम्मुख हैं। निश्चय ही अब मैं पूर्णतया प्रसन्न हूँ। अब मुझे कोई भी प्राप्य शेष नहीं रह जायगा।" इतना कहकर दक्षने पुनः महर्षि मुद्गलके चरणोंमें साष्टाङ्ग प्रणाम किया।

'कमलानन्दन! तुम बड़े भाग्यवान् हो।' महामुनि मुद्गलके नेत्र प्रेमाश्रुओंसे भर गये थे। उन्होंने त्रैलोक्य-पावन मङ्गलमूर्ति गणपतिका ध्यान करते हुए दक्षसे अत्यन्त स्नेहसिक्त स्वरमें कहा—'वल्लभात्मज! तुम अद्भुत भक्त हो। तुम्हारी महिमाका वर्णन सम्भव नहीं। मैं सहस्र वर्षोंसे कठोर तप कर रहा हूँ, किंतु इस प्रकार विश्वत्राता गजमुखका मुझे कभी दर्शन प्राप्त नहीं हुआ। जो सम्पूर्ण जगत्के स्वामी तथा चराचर प्राणि-समुदायके गुरुके भी गुरु हैं; जो रजोगुण, सत्त्वगुण और तमोगुण—इन तीनोंके नियन्ता और सदा समस्त गुणोंके आश्रय हैं; ब्रह्मा, शिव और विष्णु—इन सबके शरीरोंका जो निर्माण करते हैं; इसी प्रकार जो भूत-प्राणियोंके, विभूतियोंके, तन्मात्राओंके, इन्द्रियों-के और बुद्धिके भी कर्ता हैं; जिन्हें देवता, वेद तथा ऋषि भी यथार्थरूपसे नहीं जान पाते, ऐसे गजाननदेवका तुमने प्रत्यक्ष एवं स्पष्ट दर्शन किया है।* अतः मैं तुम्हारे चरणोंमें नमस्कार करता हूँ; क्योंकि तुम मेरे स्वामीके परम भक्त हो।'

महर्षि मुद्गल भक्तवर दक्षके चरणोंमें प्रणाम करने लगे और दक्ष महामुनि मुद्गलके चरणोंमें गिर पड़ा। प्राणप्रिय बन्धु, अनन्य प्रेमी, अभिन्न प्राण और अभिन्न हृदयकी भाँति महामुनि मुद्गल और दक्ष परस्पर आलिङ्गन-बद्ध हो गये। युगल भक्तमूर्तियोंके नेत्र प्रेमाश्रुसे भर गये थे। वे कुछ देरतक इसी स्थितिमें रहे। फिर तो दोनों जैसे दो देह और एक प्राण हो गये। दोनों विघ्नेश्वर विनायकके एकाक्षर-मन्त्रका जप करने लगे।

फिर परम तपस्वी विप्रवर मुद्गलने भी अपने प्रिय दक्षको श्रीगणेशजीके एकाक्षर-मन्त्रका उपदेश करते हुए कहा—'तुम इस मन्त्रका प्रतिदिन अनुष्ठान करते ही रहना। इससे करुणावरुणालय गजवक्त्र तुमपर सदा प्रसन्न रहेंगे और तुम्हारा मनोवाञ्छित पूर्ण करेंगे। इससे तुम राज्य, सुख, सम्पत्ति और सुयश आदि सब कुछ प्राप्त कर लोगे। इतना ही नहीं, इन्द्रादि लोकपाल भी तुम्हारे वशमें हो जायँगे। तुम जीवनमें समस्त भोगोंका उपभोग करोगे और जीवनान्तमें मोक्ष तुम्हारे करतलगत रहेगा।'

भक्तवर दक्ष अपनी माता कमलाके साथ कुछ समयतक परमर्षि मुद्गलऋषिके आश्रममें रहा और फिर उनकी अनुमति प्राप्त कर कौण्डिन्यनगरके समीपस्थ सुरम्य अरण्यमें चला गया। वहाँ विविध प्रकारके पुष्पों और मधुर फलोंके वृक्ष थे। मृगादि पशु एवं पक्षी वहाँ निर्भय विचरण किया करते थे। उक्त वनमें स्वच्छ जलपूरित अत्यन्त रमणीय एक सरोवर था और सरोवरके तटपर एक गणेश-मन्दिर स्थित था। मन्दिर तो जीर्ण हो गया था, किंतु गणेशजीकी मूर्ति अत्यन्त सुन्दर एवं मनो-मोहक थी।

क्षत्रिय-पुत्र दक्ष अपनी माताके साथ वहीं रहने लगा। वह वहाँ स्नानादिसे निवृत्त होकर अत्यन्त प्रीतिपूर्वक सिन्दूरारुण लम्बोदरकी सविधि पूजा करता। फिर उसने भगवान् गणेशकी प्रीतिके लिये महामुनि मुद्गलप्रदत्त एकाक्षर-मन्त्रका जपानुष्ठान प्रारम्भ किया। वह मङ्गल-मोद-निधान गजमुखकी षोडशो-पचारसे पूजा कर दिनभर मन्त्र-जप करता रहता। इस प्रकार वह बारह वर्षतक तप करता ही रहा।

एक दिन प्रतिदिनकी भाँति रात्रिमें दक्षने अपने आराध्यकी पूजा-प्रार्थना की और उनका ध्यान करते हुए शयन किया। रात्रिके चतुर्थ प्रहरमें उसने एक मदमत्त हाथीको

---

* तपामि सुदृढं चाहं दशवर्षशतं तपः।
न मे एतादृशो देवो दृष्ट आसीत् कदाचन॥
यः सर्वजगतां नाथश्चराचरगुरोर्गुरुः।
यो रजःसत्त्वतमसां नेता नित्यं गुणाश्रयः॥
यो ब्रह्मशिवविष्णूनां शरीराणि करोति हि।
भूतानां च विभूतीनां मात्रेन्द्रियधियामपि॥
यं न देवा विदुः सम्यङ् न वेदा नर्षयोऽपि च।
एनं गजाननं त्वं हि प्रत्यक्षं दृष्टवान् स्फुटम्॥
(गणेशपुराण १। २१। ४३–४६)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

देखा। हाथीके समस्त अङ्ग सिन्दूरसे लाल थे। उसके गण्डस्थलसे मदका स्राव हो रहा था। उसके दाँत बड़े सुन्दर थे। भ्रमर उसके चारों ओर मँडरा रहे थे। सुन्दर गजको देखकर दक्षको लगा, जैसे यह मेरे जीवनधन दूसरे गणेशजी हैं। उसने उक्त गजके कण्ठमें रत्नोंकी माला पहनायी और गजने उसे उठाकर अपने कंधेपर बैठा लिया। तदनन्तर वह हाथी ध्वजा और पताकाओंसे सुशोभित नगरमें प्रविष्ट हुआ। उसी समय दक्षकी निद्रा भङ्ग हो गयी।

कमलानन्दनने तुरंत अपनी माताको स्वप्न सुनाकर उसका फल पूछा। कमलाने प्रसन्नमनसे उत्तर दिया—'बेटा! तुम धन्य हो। तुमने स्वप्नमें गजरूपी विनायकका दर्शन किया है और उनके कंधेपर चढ़नेका फल निश्चय ही राज्य-प्राप्ति है।'

दक्षने तुरंत कहा—'माँ! यदि मुझे राज्य प्राप्त हुआ तो मैं तुमको बहुमूल्य पालकीपर बैठाकर हीरे-मोतीके आभूषण पहनाऊँगा। स्वस्थ सवत्सा गौ एवं सुवर्णादिका दान तो करूँगा ही, व्रतादिके साथ धर्ममय जीवन व्यतीत करूँगा और सर्वोपरि अपने प्राणधन देवदेव विनायककी पूजा-आराधनामें सर्वस्व समर्पित कर दूँगा।'

अपने पुत्रके वचन सुन प्रसन्नतापूर्वक कमलाने कहा—बेटा! तू राजसिंहासनपर आसीन होगा तो मुझे भी बड़ी प्रसन्नता होगी। तू चिरायु हो। तेरी धर्ममें मति हो और तू देवता और ब्राह्मणोंकी सेवामें ही अपना जीवन व्यतीत करता रहे।'

उसी समय कौण्डिन्यनगरके परम धर्मात्मा एवं बुद्धिमान् प्रजापालक नरेशका शरीरान्त हो गया। राजाकी पत्नी सुलभा, उसके अमात्यद्वय—सुमन्त और मनोरञ्जन तथा समस्त प्रजा इससे अत्यन्त दुःखी थी। और्ध्वदैहिक क्रियाके अनन्तर अत्यधिक चिन्ताकी बात यह थी कि राजाके कोई पुत्र न होनेके कारण राज्यका (शासन करनेवाला) उत्तराधिकारी किसे नियुक्त किया जाय?

महारानी और अमात्यद्वय परस्पर यही मन्त्रणा कर रहे थे कि उसी समय महामुनि मुद्गल वहाँ पहुँच गये। मन्त्रियोंने महर्षिके चरणोंमें प्रणाम कर उन्हें श्रेष्ठ आसन दिया और फिर उन लोगोंने मुनिवर मुद्गलसे राज्यके उत्तराधिकारीके सम्बन्धमें अत्यन्त विनयपूर्वक पूछा।

महामुनिने परामर्श दिया—'स्वर्गीय नरपाल चन्द्रसेनके प्रसिद्ध गज गहनकी सूँड़में कमलोंकी माला दे दो। हाथी जिस पुरुषको वह माला पहना दे, वही कौण्डिन्यनगरका श्रेष्ठ नरेश हो सकेगा।'

महारानी और अमात्योंने महामुनिका आदेश स्वीकार कर लिया। फिर शुभ ग्रह, शुभ योग और शुभ नक्षत्रयुक्त शुभ वारको नगर-निवासियोंकी उपस्थितिमें चन्द्रसेन-पत्नी रानी सुलभाने आभूषणोंसे सजे उक्त दन्तीकी सूँड़में रत्नोंकी माला रखकर उससे प्रार्थना की—'तुम अपने भूतपूर्व राजाके स्थानपर योग्यतम नरेशका चयन करो। तुम जिस पुरुषके कण्ठमें यह माला डाल दोगे, वही इस नगरका और तुम्हारा स्वामी हो जायगा।'

उक्त गहन-नामक गजराजने अपनी सूँड़ ऊपर उठा ली। ब्राह्मण उसके पीछे आशीर्वचन बोलते हुए चल रहे थे। वन्दीजन विरुदावलि गा रहे थे और अन्य जन जय-जयकार कर रहे थे। हाथी धीरे-धीरे चला। नगरमें पङ्क्तिबद्ध पुरुष खड़े थे। राज्य-लोभसे माताएँ अपने सजाये बच्चोंको हाथीके आगे कर देती थीं, किंतु जब गहन आगे बढ़ जाता, तब वे निराश हो जातीं। राज्यकी कामनासे कितने ही नरपति, योद्धा और सम्मानित व्यक्ति खड़े थे, किंतु हाथी सबको देखता और सूँघता हुआ नगरके बाहर निकल गया। निराश जन-समुदाय अपने-अपने घर लौट गया; किंतु ब्राह्मण, वन्दी और कुछ व्यक्ति उसके पीछे-पीछे जय-जयकार करते चले जा रहे थे।

हाथी धीरे-धीरे वहाँ पहुँचा, जहाँ महिमामयी माता कमलाका अनन्य गणेश-भक्त पुत्र दक्ष देवदेव विनायककी पूजा कर उनके ध्यान एवं मन्त्र-जपमें तल्लीन था। सबके सम्मुख हाथीने उक्त बल्लभनन्दन दक्षके कण्ठमें माला डाल दी। उपस्थित ब्राह्मण मङ्गल-पाठ और वन्दीजन यशोगान करने लगे तथा जन-समुदायके जय-जयकारके उच्च स्वरसे सम्पूर्ण वन-प्रान्त ध्वनित हो उठा।

फिर तो अत्यन्त आदरपूर्वक कमलानन्दन दक्षको राजोचित नवीनतम वस्त्रालंकारोंसे विभूषित किया गया। ध्वजा-पताका एवं तोरणोंसे सजे नगरमें गजारूढ़ दक्ष प्रविष्ट हुआ। उस समय अनेक प्रकारके वाद्य बज रहे थे। मङ्गल-गीत गाये जा रहे थे और जय-जयकारके साथ उसपर पुष्प-वृष्टि होती जा रही थी।

श्रीगणेशजीका अनन्य भक्त और महर्षि मुद्गलका अन्यतम प्रीति-भाजन दक्ष राज्यके सिंहासनपर आसीन हुआ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उसने अपनी पूजनीया जननी कमलाको वस्त्रालंकार आदिसे पूर्ण संतुष्ट कर अमात्योंसहित अन्य सबको सम्मानित एवं पुरस्कृत किया। ब्राह्मणोंकी पूजा कर उन्हें सवत्सा गायें प्रदान कीं तथा विविध प्रकारके दान देकर उनका शुभाशीर्वाद प्राप्त किया।

कौण्डिन्यनरेश दक्ष अनेक नृपतियों, अमात्यों एवं सम्मानित पुरुषोंके साथ राजसिंहासनपर बैठे हुए थे। उन्होंने राजसभामें महर्षि मुद्गलको प्रवेश करते देखा ही था कि तुरंत सिंहासनसे उतरकर द्रुतगतिसे उनके समीप पहुँचे और उन परमर्षिके चरणोंमें दण्डकी भाँति गिरकर प्रणाम करने लगे। महर्षिने उन्हें उठा लिया।

दक्षने अत्यन्त आदरपूर्वक उन्हें अपने सिंहासनपर बैठाया और उनके संकेत करनेपर दूसरे आसनके समीप बद्धाञ्जलि खड़े होकर उन्होंने अत्यन्त विनीत वाणीमें कहा—'सर्वसमर्थ दयामय प्रभो! मुझ मूकान्धबधिर, कुबड़े-कुष्ठीकी वर्तमान स्थिति आपकी ही कृपाका प्रसाद है। आप मेरी दृष्टिमें साक्षात् देवदेव विनायक ही हैं। आप कृपापूर्वक मेरे मस्तकपर अपना वरद कर-कमल रख दें, जिससे मैं दीर्घकालतक सर्वकाम-भाजन बना रहूँ।'

महामुनि मुद्गलने संतुष्ट होकर कौण्डिन्यनरेश दक्षको आशीर्वाद प्रदान किया—

न ते भयं रिपुकृतं भविष्यति कदाचन।
यं यं कामयसे कामं सर्वतस्ते भविष्यति॥
(गणेशपुराण १। २६। २१)

'तुम्हें शत्रुसे कभी भय नहीं होगा और तुम जो-जो इच्छा करोगे, वह सब पूरी होगी।'

राजा दक्षने महर्षि मुद्गलको अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति-पूर्वक ग्राम, वस्त्र, धन और रत्नादि भेंटस्वरूप प्रदान किये। उन्होंने महर्षिके पधारनेपर ब्राह्मणोंको फिर स्वस्थ सवत्सा गायें और वस्त्रादि प्रदान किये। प्रसन्न ब्राह्मण आशीर्वाद देते हुए अपने-अपने घर गये। दक्षने अमात्यों तथा अन्य लोगोंको भी ग्राम, वस्त्र और आभूषणादि देकर पूर्ण संतुष्ट कर दिया।

कौण्डिन्यनगरमें एक छोटा-सा गणेश-मन्दिर था। राजा दक्षने उसे अत्यन्त विशाल और भव्य बनवाया। वहाँ प्रत्येक समय विधिपूर्वक पूजा, पाठ एवं जपादिकी समुचित व्यवस्था की गयी। राजा स्वयं अपनी माताके साथ उक्त मन्दिरमें दर्शन करने जाते।

स्वप्नमें भगवान् गणेशके आदेशसे वल्लभ-नामक नरेश अपनी परम रूप-लावण्य-सम्पन्ना वीरसेना-नामकी प्रसिद्ध पुत्रीके साथ कौण्डिन्यनगरमें पहुँचे और उन्होंने अपनी परम गुणवती और शीलवती कन्या वीरसेनाका विवाह दक्षके साथ कर दिया।

कमलानन्दन दक्ष धर्मपूर्ण शासन करते हुए जीवनान्त श्रीगणेशोपासनामें संलग्न थे। महामुनि मुद्गलके वे अत्यन्त कृतज्ञ थे। देवदेव विनायककी कृपासे उन्होंने पृथ्वीपर समस्त भोगोंका निर्विघ्न उपभोग किया और अन्ततः भगवान् गजवक्त्रके वर-प्रभावसे वे आवागमनसे सदाके लिये मुक्त होकर अखण्ड सुख-शान्तिमें निमज्जित हो गये।

दक्षके यशस्वी पुत्रका नाम बृहद्भानु था। बृहद्भानुके खड्गधर-नामक प्रसिद्ध पुत्र हुआ और उसके पुत्रका नाम सुलभ था। सुलभकी साध्वी पत्नीने पद्माकर-नामक पराक्रमी पुत्रको जन्म दिया। पद्माकरका शरीरान्त होनेपर उसका पुत्र वपुर्दीप्त राज्यका अधिकारी हुआ। वपुर्दीप्तके पुत्रका नाम चित्रसेन था। दक्षके वंशज ये सभी नरेश पराक्रमी, न्यायप्रिय एवं धर्मपरायण थे।

राजा चित्रसेनके वीर पुत्रका नाम भीम था। कौण्डिन्य-नरेश भीम परम पराक्रमी एवं दानी थे। उनकी भाग्यशालिनी साध्वी पत्नीका नाम चारुहासिनी था। संतान-रहित होनेके कारण चारुहासिनी अत्यन्त दुःखी थी। सहधर्मिणीके दुःखका अनुभव कर राजा भीम भी चिन्तित हो जाया करते।

एक दिन कौण्डिन्यनरेश भीम अपने राज्यका दायित्व अमात्योंको सौंपकर अपनी पत्नी चारुहासिनीके साथ वनमें चले गये। सौभाग्यवश वे श्रेष्ठ मुनि विश्वामित्रके समीप पहुँचे। राजाने महामुनिके चरणोंमें प्रणाम निवेदन कर अपनी पुत्र-विषयक कामना व्यक्त की।

मुनिवर विश्वामित्रने प्रजापालक भीमसे कहा—'पूर्व-जन्ममें तुम धन-सम्पन्न व्यक्ति थे। तुम्हारे पूर्वज श्रीगणेश-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीके भक्त थे। वे सदा श्रद्धा और भक्तिपूर्वक गणेशजीकी आराधना किया करते थे; किंतु तुमने सर्वथा विपरीत आचरण करना प्रारम्भ किया। तुमने समस्त लौकिक और पारमार्थिक धर्मोंको त्याग दिया और अधर्ममय कुत्सित कर्म करने लगे। इस कारण अब तुम संतान-सुखसे वञ्चित हो गये हो।

'इस जन्ममें आजसे पूर्व तुम्हारी सातवीं पीढ़ीमें परम पराक्रमी बल्लभ-पुत्र मूकान्धबधिर और कुष्ठी दक्ष गणेशजी-का अनन्य भक्त था। उसने गणेशजीकी भक्तिसे नवजीवन तो प्राप्त किया ही, समस्त लौकिक सुखोंके साथ परम शान्तिप्रदायिनी मुक्ति भी प्राप्त कर ली।'

महामुनि विश्वामित्रने कौण्डिन्यनरेश भीमको श्रीगणेशजी-का एकाक्षर-मन्त्र प्रदान कर कहा—'तुम भी कौण्डिन्यनगर-के दक्षनिर्मित गणेश-मन्दिरमें श्रीगणेशजीकी पूजा और इस एकाक्षर-मन्त्रका जप और अनुष्ठान करो। विश्वास करो, श्रीविनायकजी प्रसन्न होकर तुम्हें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—सब कुछ प्रदान करेंगे। तुम्हें योग्यतम पुत्र तो उत्पन्न होगा ही, तुम्हारी समस्त कामनाओंकी पूर्ति भी हो जायगी। सर्वफलप्रद भगवान् गणेश तुम्हारा प्रत्येक अभीष्ट तुम्हें प्रदान कर देंगे।'

कौण्डिन्यनरेश भीमने सपत्नीक मुनिवर विश्वामित्रके चरणोंमें अत्यन्त श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया और उनका आशीर्वाद प्राप्त कर प्रसन्न मन अपने नगरमें लौट आये। फिर शुभ मुहूर्तमें राजा भीमने अपने परम पुण्यमय पूर्वज दक्षद्वारा निर्मित गणेश-मन्दिरमें पहुँचकर देवदेव विनायकके चरणोंमें भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और पुनः उन परम-प्रभु विनायककी षोडशोपचारसे पूजा कर उनके प्रिय एकाक्षर-मन्त्रका वे जप करने लगे।

सुन्दरी चारुहासिनीके पति भीमने उपवासके साथ भगवान् गणेशकी आराधना प्रारम्भ की। वे पूजनोपरान्त दिनभर गणेशजीके एकाक्षर-मन्त्रका जप करते रहते और सोते-जागते, उठते-बैठते तथा चलते-फिरते अहर्निश अपने आराध्यदेव गणेशजीका ही स्मरण, चिन्तन, ध्यान एवं भजन करते रहते थे। श्रीगणेशजीकी प्रीतिसे उनके नेत्रोंसे अश्रुपात होता रहता था।

कुछ ही समयमें उनकी बड़ी विचित्र स्थिति हो गयी। जल, थल, आकाश, मार्ग, मनुष्य, वृक्ष, लता, भक्ष्य और पेयादि जिस वस्तुपर उनकी दृष्टि जाती, वहीं उन्हें विनायक प्रभुकी भावना होने लगती। वृक्षोंको अपने प्राणसर्वस्व देवदेव विनायक समझकर वे आलिङ्गन करने लगते। उनके सम्मुख जो भी जाता, उसे ही विनायक समझकर राजा भीम उसके चरणोंमें प्रणाम करते और उसका आलिङ्गन करनेके लिये आतुर हो जाते। नगरनिवासी अपने प्रजा-पालक धर्मपरायण नरेशको सर्वथा उन्मत्त और पिशाच समझने लगे।

राजा भीमकी अनन्यतासे देवदेव विनायक अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने राजाके सम्मुख प्रकट होकर उनके मस्तकपर अपना त्रयतापनिवारक मङ्गलमय पाणि-पङ्कज रख दिया और वे अत्यन्त स्नेहसिक्त स्वरमें बोले—'मेरी अनन्य भक्तिसे तुम मुक्त हो गये। अब तुम अपने इच्छानुसार वर माँग लो।'

परम सौभाग्यशाली राजा भीम अपने प्राणाराध्यका प्रत्यक्ष दर्शन कर उनके चरणोंपर गिर पड़े। फिर गद्गद कण्ठसे उन्होंने कहा—'दयामय! मुझे आपके मङ्गलमय चरणाम्बुजकी सुदृढ़ भक्तिके अतिरिक्त अन्य कुछ अभीष्ट नहीं। आप कृपापूर्वक मुझे यही प्रदान कर दें।'

सर्पयज्ञोपवीतधारी सिन्दूरारुण लम्बोदरने प्रसन्न होकर कहा—'अब तुम राज-सदन जाओ। तुम्हें शीघ्र ही अत्यन्त सुन्दर एवं शुभगुण-सम्पन्न यशस्वी पुत्र प्राप्त होगा। तुम यहाँसे जाकर ब्राह्मणोंको पूजादिसे संतुष्ट करो; तुम्हारी समस्त कामनाएँ पूरी होंगी। मुझमें तुम्हारी भक्ति सतत सुदृढ़ रहेगी।'

इतना कहकर प्रभुवर विनायक अन्तर्धान हो गये।

कृतार्थ कौण्डिन्यनरेश अपने भवन लौटे। उन्होंने सर्वभयापह सर्वकामद गणपतिकी तुष्टिके लिये ब्राह्मणोंकी भक्तिपूर्वक पूजा कर उन्हें प्रत्येक रीतिसे संतुष्ट किया। वे अपना अधिकांश समय देवदेव विनायककी पूजा और जपमें ही व्यतीत करते।

कुछ ही दिन बाद राजा भीमके अत्यन्त बलवान्, सर्वशास्त्रविशारद, सुन्दर गणेशभक्त पुत्र उत्पन्न हुआ। वही बालक रुक्माङ्गद नरेशके नामसे प्रख्यात हुआ।

—शि० दु०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भक्त गणपतिभट्ट और श्रीजगन्नाथ महाप्रभु

(लेखक—पद्मश्री पं० श्रीसदाशिवरथजी शर्मा)

लगभग सोलहवीं शताब्दीके मध्यकी बात है। महाराष्ट्रमें गणपतिभट्ट नामक गणपतिके एक अनन्य भक्त थे। भगवान् श्रीगजवक्त्रके पूजन, उन्हींके स्मरण-चिन्तन, उन्हींकी मङ्गलमयी लीला-कथाके गान और श्रवण तथा परमप्रभु लम्बोदरके नाम-जपमें ही वे काल-यापन करते। परमप्रभु एकदन्त ही उनके सर्वस्व थे। श्रीभट्टजी किसी देवताका असम्मान तो नहीं करते थे, किंतु श्रीगणेशजीके चरण-कमलोंमें उनकी इतनी प्रगाढ़ निष्ठा थी कि वे भगवान् गजमुखके अतिरिक्त अन्य किसी देवताके सम्मुख प्रणाम भी नहीं करते थे।

एक बारकी बात है। श्रीभट्टजी तीर्थ-यात्राके निमित्त निकले। विभिन्न तीर्थोंमें स्नान करते, जहाँ-कहीं श्रीगणेशजीका मङ्गल-विग्रह होता, वहाँ उसका पूजन-आराधन करते, फिर इतर तीर्थके लिये प्रस्थित हो जाते थे। इस प्रकार तीर्थाटन करते हुए वे पुरीधाममें पधारे।

महान् गणेश-भक्त गणपतिभट्टने पुरीमें गणेशजीका कोई मन्दिर या उनका विग्रह नहीं देखा। इस कारण वे निराश और उदास हो गये। उन्होंने पुरीमें जाकर भी परम-प्रभु श्रीजगन्नाथजीके चरणोंमें प्रणाम तो किया ही नहीं, पुरी-धाम छोड़कर अन्यत्र चल पड़े।

मार्गमें मुक्तेश्वर महादेवका मन्दिर पड़ा। श्रीभट्टजी वहाँ विश्राम कर अपने आराध्यदेवके नामका जप करने लगे। उसी समय उनके सम्मुख एक तेजस्वी ब्राह्मण पहुँचे। ब्राह्मणदेव बिना कुछ पूछे श्रीभट्टजीसे कहने लगे—'भट्ट महोदय! क्या आप नहीं जानते कि श्रीजगदीश्वर जगन्नाथजी विशुद्ध भक्तकी तीव्रतम कामनासे अपना स्वरूप भी परिवर्तित करके दर्शन दे देते हैं? आपने दयामय प्रभुके सम्मुख प्रेमपूर्वक उत्तम स्तोत्रका पाठ क्यों नहीं किया?' इतना कहकर ब्राह्मण वहीं अन्तर्धान हो गये।

श्रीभट्टजी अत्यन्त चकित हुए। 'ये ब्राह्मणदेवता कौन थे? मेरे अन्तर्मनकी बात उन्होंने कैसे जान ली? और फिर वे तुरंत चले कहाँ गये? निश्चय ही यह मेरे देवदेव गजकर्ण प्रभुकी प्रेरणा है। उन्होंने ही कृपापूर्वक मेरा मार्ग-निर्देश किया है।'

वे अपने प्राणसर्वस्व गणपतिका स्मरण करते हुए पुनः पावनतम पुरीधामको लौटे। ज्येष्ठ पूर्णिमाका पुनीत दिन था। श्रीभट्टजी श्रीजगन्नाथ महाप्रभुका दर्शन करने पहुँचे। दैववशात् स्नानपूर्णिमाके उत्सवके कारण श्रीविग्रह रमणीय स्नानमण्डपमें विराजमान थे। उक्त मङ्गलावसरपर भक्तराज गणपतिभट्ट भक्तिपूर्वक 'श्रीगणेश-स्तवराज'का प्रेमपूर्वक पाठ करने लगे। श्रीभट्टजीकी श्रद्धा और विश्वासके फलस्वरूप अद्भुत चमत्कार हुआ। भक्तवत्सल महाप्रभु भक्तके भावानुरूप स्वयं श्रीगजवक्त्ररूपमें प्रकट हो गये।

'गणानां त्राणकर्ता च गणेशो ग्राहको ग्रही।'—(गोपाल-सहस्रनाम) श्रीजगन्नाथजीका सर्वथा अद्भुत, अलौकिक विघ्नेश्वर गजमुखके रूपमें प्राकट्य देखकर संतों और भक्तोंका हृदय आनन्दपूरित हो गया। जय-जयकारकी ध्वनि गूँज उठी। श्रीगणेशजीके अनन्य भक्त गणपतिभट्ट भगवान्के श्रीचरणोंमें बार-बार दण्डवत् प्रणाम करते हुए श्रीभगवान्के लिये अपने मधुरतम स्तोत्रोंकी वाक्सुमनाञ्जलि अर्पित करने लगे। उनके नेत्रोंसे अजस्र वारिधारा प्रवाहित हो रही थी। कृतार्थ भक्त गणपतिभट्टने अन्यत्रके लिये यात्रा प्रारम्भ की।

केवल उसी पावन तिथिमें श्रीजगन्नाथ भगवान् उक्त प्राकट्य-लीलाकी पुनीत स्मृतिमें श्रीगणेशजीका स्वरूप धारण करते हैं। ज्येष्ठ पूर्णिमाका श्रीगणेश-स्वरूप-दर्शन मुख्य कृत्य माना गया है। श्रीराघवदास मठ तथा श्रीगोपाल्तीर्थ मठकी ओरसे मूल्यवान् उपकरणोंसे निर्मित श्रीगणेशजीका शृङ्गार श्रीजगन्नाथजीको चढ़ाया जाता है और महाज्येष्ठामें प्रार्थना की जाती है—

भक्तप्रिय महाबाहो भक्तसंघविग्रह।
गणेशरूपधृग् विष्णो प्रणमामि जगत्पते॥
गणाध्यक्ष जगन्नाथ सर्वमङ्गलमूर्त्तये।
नमो विघ्नहरः साक्षाज्जगन्नारायणो हरिः॥

* श्रीरामदासकृत उड़िया भक्तमाला 'दाबता भक्ति' (दारुवता भक्ति) में 'गणपतिभट्टस्य गणेशमूर्ति-दर्शनाध्याय'के आधारपर।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भक्त श्रीगणेश योगीन्द्र

(लेखक—पं० श्रीदामोदर प्रह्लाद पाठक, शास्त्री, पूर्वोत्तरमीमांसक, व्युत्पत्तिचूड़ामणि, शिक्षाशास्त्री, काव्यतीर्थ, राष्ट्रभाषाकोविद)

वर्तमान गाणपत्य सम्प्रदायके अनुयायियोंके मूलपुरुष एवं गुरुतुल्य विप्रवर गणेश योगीन्द्र ही हैं। ये महात्मा प्रख्यात मुद्गलमुनिके अवतार माने जाते हैं।

इनके पवित्र वंशमें प्रायः सभी उद्भट विद्वान् और गाणपत्य थे। इनके पितामह विप्र सोमनाथ गुजरातमें सोरटी सोमनाथके आंबी-नामक गाँवमें रहते थे। सोमनाथ विद्वान्, धर्मात्मा एवं तेजस्वी ब्राह्मण थे। इनकी सहधर्मिणी उमादेवी भी पतिपरायणा एवं धर्मानुरागिणी थीं। इनके चिन्तामणि और मोरेश्वर-नामक दो सुयोग्य पुत्र उत्पन्न हुए। दोनों पुत्र वेद-शास्त्रोंके विद्वान् थे।

एक दिन स्वप्नमें धर्मात्मा सोमनाथसे शृङ्गेरीमठकी अधिष्ठात्री देवी शारदाने कहा—'शृङ्गेरीमठके यति मरणासन्न हैं। उक्त पदका दायित्व सँभालनेके लिये तुम अपने ज्येष्ठ पुत्र चिन्तामणिको वहाँ भेज दो।'

सोमनाथ पत्नी और पुत्रोंसहित शृङ्गेरी पहुँचे। वहाँ पीठस्थ यति नृसिंहाश्रमाचार्यने भी ऐसा ही स्वप्न देखा था। उन्होंने ब्राह्मण सोमनाथात्मज चिन्तामणिको संन्यासकी दीक्षा देकर उन्हें उक्त पवित्र पीठपर नियुक्त कर दिया।

सोमनाथ अपनी सहधर्मिणी और पुत्र मोरेश्वरके साथ आंबी लौट आये। मोरेश्वर सविधि गृहस्थ हुए, किंतु अधिक दिन व्यतीत होनेपर भी उनके कोई संतान नहीं हुई। पौत्र-मुख देखे बिना ही सोमनाथ और उनकी पत्नी उमा-देवीका यथासमय शरीरान्त हो गया।

आचार्यपीठस्थ चिन्तामणि आचार्यने अद्वैतसिद्धान्तकी स्थापनामें सहयोग प्राप्त करनेके लिये विद्वान् मोरेश्वरको शृङ्गेरी बुलाया। मोरेश्वरने उनकी आज्ञाका पालन किया। उन्होंने विरुद्ध मतोंका खण्डन कर चिन्तामणि योगीन्द्राचार्यकी बड़ी सहायता की। तदनन्तर वे आंबी लौट आये।

विद्वान् मोरेश्वर वंश-परम्पराकी रक्षाके लिये चिन्तित थे। वे सपत्नीक महाराष्ट्रके जाग्रत् गणेश-पीठ मोरगाँव जाकर मयूरेश्वरकी उपासना करने लगे। एक मासतक निरन्तर उपासना कर वे पुनः आंबी आ गये। भगवान् मयूरेश्वरके अनुग्रहसे उनकी धर्मपत्नीने श्रावणशुक्ल ५ शकाब्द १४९९में पुत्र-प्रसव किया। शृङ्गेरीपीठस्थ आचार्य चिन्तामणिके अनुज गणेशोपासक विद्वान् पं० मोरेश्वरका यही पुत्र श्रीगणेश योगीन्द्राचार्यके नामसे प्रख्यात हुआ।

श्रीगणेश परम ज्ञान-पिपासु थे। उपनयनके अनन्तर उन्होंने सर्वप्रथम अपने पिता और फिर विनायकशास्त्री-नामक गुरुके चरणोंमें बैठकर वेदादि शास्त्रोंका ज्ञान प्राप्त किया। इसके अनन्तर उन्होंने प्रसिद्ध विद्वानोंके पास जाकर बड़े परिश्रमसे षट्शास्त्र, स्मृति, इतिहास, पुराण, ज्यौतिष और योग आदि समस्त शास्त्रोंका सविधि अध्ययन कर लिया। घर लौटनेतक उनके हेरम्ब-नामक एक अनुज भी हो गया था।

समस्त शास्त्रोंके प्रकाण्ड विद्वान् श्रीगणेश विद्यासे तृप्त नहीं थे। उन्होंने अपने पिताके चरणोंपर मस्तक रखकर अत्यन्त श्रद्धापूर्वक विनीत वाणीमें निवेदन किया—'पिताजी! आपने स्वानन्द-गणेशकी कृपाका जो अलौकिक आनन्द प्राप्त किया, उस आनन्दकी प्राप्तिके लिये आप मुझपर दया कीजिये।'

गणेश-भक्त पिताने पुत्रकी पवित्र कामनासे प्रसन्न होकर पहले तो उससे आवश्यक शास्त्रोक्त तपश्चर्या करवायी, तदनन्तर उसे श्रीगणेश-मन्त्रकी दीक्षा दे दी।

श्रीगणेश-मन्त्र प्राप्त हो जानेपर गणेशने सविधि अनुष्ठान प्रारम्भ किया। उनकी श्रद्धा-भक्तिसे प्रसन्न होकर गजमुखने प्रकट होकर कहा—'वर माँगो।'

परम भक्त गणेशने अपने आराध्य गजवक्त्रसे याचना की—'मुझे आपके चरणोंकी सुदृढ़ भक्ति प्राप्त हो।' (मुद्गलमुनिने भी भगवान् गणेशके सम्मुख यही इच्छा व्यक्त की थी।)

परमप्रभु गजाननने कहा—'आर्यधरापर गणेश-मार्ग लुप्तप्राय है। तुम उक्त भक्ति-योगप्रधान मार्गकी स्थापना करो। तुम शृङ्गेरी जाकर अपने ज्येष्ठ पितृव्य चिन्तामणि योगीन्द्रसे संन्यासकी दीक्षा लेकर पुनः इस भूस्वानन्द-क्षेत्रमें मेरे समीप आकर अनवरतरूपसे लोकोद्धारका कार्य करते रहो।'

भगवान् मयूरेश्वरने अपना प्रसाद-मोदक भक्त गणेशके मस्तकपर रखा और अदृश्य हो गये। उक्त दुर्लभतम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रसादके ग्रहण करते ही भक्त गणेशका सम्पूर्ण शरीर अत्यन्त कान्तिमान् हो गया।

माता-पिताकी आज्ञा प्राप्तकर गणेश शृङ्गेरी पहुँचे। उन्होंने अपने ज्येष्ठ पितृव्यको सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाया। उन्होंने कहा—'मुझे भी सुरेन्द्रपाद योगीन्द्रसे यही आज्ञा प्राप्त हुई है।' उन्होंने गणेशको संन्यासकी दीक्षा दे दी और उनका नामकरण किया—'गणेश योगीन्द्र'।

श्रीगणेश योगीन्द्र मोरगाँव आकर मयूरेश्वरके पीछे एक अहातेमें रहते हुए श्रीगणेशोपासनाके साथ लोकोद्धारके शुभ कार्यमें जुट गये। किंतु उनके मनकी एक कामना उत्तरोत्तर तीव्र होती गयी—'साक्षात् स्वानन्द गणेशने मुद्गलऋषिको जो शतोपनिषद्-ज्ञान प्रदान किया, वह उपनिषत्पुराण कहाँ मिलेगा?' एतदर्थ श्रीगणेश योगीन्द्र भारत-भ्रमण करने लगे। उक्त प्राचीन ग्रन्थके जहाँ प्राप्त होनेकी सूचना मिली, वहीं वे गये। इसके लिये उन्होंने काशीमें भी अधिक समयतक निवास किया; किंतु ग्रन्थ कहीं प्राप्त नहीं हुआ। विवशतः वे मोरगाँव जाकर अपने आराध्यदेव प्रभु मयूरेश्वरसे करुण-प्रार्थना करने लगे।

एक दिन श्रीगणेश योगीन्द्रके समीप एक ब्राह्मण देवताने आकर कहा—'आप कृपापूर्वक कुछ देरके लिये मेरी यह पोथी अपने पास रख लीजिये। मैं अभी स्नान करके लौटता हूँ।'

ब्राह्मण देवता स्नान करके लौटे। उन्होंने संध्या-वन्दनादिके पश्चात् उक्त ग्रन्थका पाठ करना प्रारम्भ किया। अत्यन्त तेजस्वी, पर सर्वथा सरल ब्राह्मणको देखते ही श्रीगणेश योगीन्द्रका मन उनकी ओर आकृष्ट हो गया। वे ब्राह्मणकी प्रत्येक क्रिया ध्यानपूर्वक देख रहे थे। ब्राह्मणने पाठ-समाप्तिके अनन्तर श्रीगणेश योगीन्द्रके चरणोंमें साष्टाङ्ग प्रणाम किया। श्रीगणेश योगीन्द्रने ब्राह्मणसे पूछा—'आप किस ग्रन्थका पाठ कर रहे थे?'

ब्राह्मणने अत्यन्त विनयपूर्वक उत्तर दिया—'स्वामिन्! यह 'मौद्गलपुराण'का प्रथम खण्ड है। इसका प्रतिदिन पाठ करनेका नियम होनेसे मैं प्रवासमें भी इसे अपने पास रखता हूँ।'

'मौद्गल'! नाम कानमें पड़ते ही गणेश योगीन्द्रकी विचित्र दशा हो गयी। उनके नेत्र भर आये। 'मैं इसी ग्रन्थ-रत्नके लिये सर्वत्र भटक आया।'—गद्गद कण्ठसे श्रीगणेश योगीन्द्रने कहा—'यह ग्रन्थरत्न आपके पास है, इस कारण आप निश्चय ही भाग्यवान् हैं।'

ब्राह्मणने सहज भावसे कहा—'इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? गाणपत्योंको 'मौद्गलपुराण'का नित्य पाठ आवश्यक है। मेरे पास तो यह सम्पूर्ण 'मुद्गलपुराण' है।'

अत्यन्त व्याकुलतासे श्रीगणेश योगीन्द्रने कहा—'मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि आपके मनुष्य-वेषमें मेरे यहाँ साक्षात् भगवान् गणेश ही पधारे हैं। इस ग्रन्थके लिये मैं दीर्घकालसे आकुल हूँ। यदि आप कुछ समयके लिये मुझे इसे दे देनेकी कृपा करें तो मैं इसकी प्रतिलिपि कर शीघ्र ही इसे आपको लौटा दूँगा।'

ब्राह्मणने उत्तर दिया—'गणेश-भक्तोंका वचन कैसे टाला जा सकता है? मैं प्रत्येक चतुर्थीको इसका एक-एक खण्ड आपको देता जाऊँगा। इस प्रकार मुझे भगवद्दर्शनका लाभ प्राप्त होता रहेगा और आपकी लालसाकी पूर्ति भी हो जायगी।'

ब्राह्मण देवता 'मुद्गलपुराण'का उक्त प्रथम खण्ड श्रीगणेश योगीन्द्रको देकर चले गये। इसी प्रकार वे प्रत्येक चतुर्थीको एक खण्ड श्रीस्वामीजीको दे देते और श्रीस्वामीजी उसकी प्रतिलिपि करके ठीक दूसरी चतुर्थीको उन्हें लौटा देते। इस प्रकार उन्होंने सम्पूर्ण 'मुद्गलपुराण' लिख लिया।

उसी ब्राह्मणसे प्राप्त कारिकासहित 'मौद्गलादेश'का लेखन श्रीगणेश योगीन्द्रने चतुर्थीसे नवमीतक छः दिनोंमें ही पूरा कर लिया। ब्राह्मण देवता तो आगामी चतुर्थीतक पधारेंगे, यह सोचकर श्रीगणेश योगीन्द्रने उसके शुद्धाशुद्धको देखनेका विचार किया; किंतु ठीक उसी समय ब्राह्मण देवताने आकर कहा—'मौद्गलादेश दीजिये।'

आश्चर्यचकित होकर श्रीगणेश योगीन्द्रने ब्राह्मणसे पूछा—'आप निर्धारित समयसे पूर्व ही कैसे पधारे? मैंने प्रतिलिपि पूरी कर ली, यह आपको कैसे विदित हुआ?'

ब्राह्मणने उत्तर दिया—'इस क्षेत्रमें मेरा एक भाई रहता है। वह महागणेश है। मैं उसीसे मिलने आ गया।'

'आपका भाई? महागणेश? वे इसी क्षेत्रमें रहते हैं और आजतक मैं उन्हें नहीं जान सका? चलिये, मैं भी उनके दर्शन कर लूँ।' कहते हुए श्रीगणेश योगीन्द्र ब्राह्मणका हाथ पकड़कर उनके साथ चल पड़े। ब्राह्मण देवता श्रीगणेश योगीन्द्रके साथ मयूरेश्वर-मन्दिरमें पहुँचे। प्रदक्षिणा पूरी कर दोनों श्रीभगवान्के विग्रहके समीप गये ही थे कि ब्राह्मण देवता अदृश्य हो गये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेश योगीन्द्र उदास हो गये। वे सोचने लगे—"कितनी करुणा है परमप्रभु गणेशमें! वे कृपापूर्वक स्वयं मेरे यहाँ पधारे और मैं उन्हें पहचान भी नहीं सका; किंतु मेरी कामना-पूर्तिके लिये उन्होंने स्वयं मुझे 'मौद्गलपुराण' एवं 'मौद्गलादेश' प्रदान करनेका अनुग्रह किया। यह सोचकर वे प्रसन्न भी हुए और आनन्दमग्न होकर उन्होंने उसी समय भगवान् मयूरेश्वरका गद्गद कण्ठसे स्तवन किया। वह 'विघ्नेशाष्टक स्तुति'के नामसे प्रसिद्ध है।

श्रीगणेश योगीन्द्रने 'मुद्गलपुराण' और 'कारिकासहित मुद्गलादेश'—इन दोनों ग्रन्थोंपर भाष्य लिखा। इनके अतिरिक्त उन्होंने सर्वसारनिर्णय टीका, गाणकप्रस्थानत्रयी भाष्य, गणेशपुराणान्तर्गत सहस्रनामका शुद्धिकरण और भाष्य, गणेशपुराण-टिप्पणी, पातञ्जलसूत्रभाष्यपर शान्तिभाष्य, व्यासके ब्रह्मसूत्रोंपर सिद्धान्तलेश-नामक निबन्ध-ग्रन्थ और गणेशगीतापर योगेश्वरीनामक (ओवीबद्ध) टीकाके द्वारा विशाल एवं समृद्ध वाङ्मय निर्माण कर श्रीगणेशोपासकोंका मार्ग प्रशस्त कर दिया।

वे प्रचारक भी अद्भुत थे। श्रीगणेशजीके १०८ क्षेत्रोंमें घूम-घूमकर आपने सर्वत्र गणेश-भक्तियोगका प्रचार किया और इस शुभ कार्यमें उन्हें अकल्पित सफलता भी प्राप्त हुई। श्रीगणेशजीके अनन्य भक्त श्रीगणेश योगीन्द्रने गणेश-गुरुपीठका उद्धार भी किया।

श्रीगणेश योगीन्द्रके भाष्यसे संतुष्ट होकर महामुनि मुद्गलने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन देकर आदेश दिया—'गणेश-मार्ग लुप्तप्राय हो गया है और शुद्ध शास्त्रीय उपासना कहीं नहीं रह गयी है। इस प्रचलित पाषण्डका नाश कर गणेश-पथ-प्रदर्शित करनेके लिये तुम्हारा जन्म मेरे वंशमें हुआ है। तुम ब्रह्मानन्द योगीन्द्रकी शरण ग्रहण कर पूर्वके धर्माचार्योंकी तरह अद्वैत मतकी स्थापनाके लिये कार्य करो।'

महामुनि मुद्गलके आज्ञानुसार श्रीगणेश योगीन्द्र ब्रह्मानन्द योगीन्द्रका शिष्यत्व स्वीकार कर भूस्वानन्द-पीठका कार्य करने लगे।

इस भूतलपर श्रीगणेश योगीन्द्र २२७ वर्षतक जीवित रहे। इतनी दीर्घायु प्राप्त कर उन्होंने महान् कार्य भी किया। उन्होंने जीवनके प्रथम शतकमें गणेशाद्वैत सिद्धान्त एवं द्वितीय शतकमें मिश्रमार्ग (भक्तियोगप्रधान मार्ग) की स्थापना की।

बौद्ध-धर्मके हीनयान और महायान—दो पंथोंकी तरह श्रीगणेश योगीन्द्रने गणेश-तत्त्वके प्रचार और प्रसारके लिये दो मार्गोंका निर्देश किया। एक तो शुद्ध गणेशयोगमार्ग अर्थात् दीक्षाप्रधान वैदिक मार्ग। किंतु सर्वत्र मन्त्रसंकर होनेके कारण वैदिक-पथपर आरूढ़ होना कठिन प्रतीत हुआ, इस कारण उन्होंने उक्त मार्गके कुछ भागमें मन्त्रोपदेश अर्थात् भक्तियोगप्रधान भागका मिश्रण कर दूसरे भक्तियोग-प्रधान मिश्रमार्गकी स्थापना की। इस प्रकार उनके द्वारा सर्वसाधारणके लिये गणेशतत्त्वका पथ प्रशस्त हो गया।

श्रीगणेश योगीन्द्रके कितने ही शिष्य थे, किंतु उनके यति शिष्योंमें ये पाँच प्रमुख थे—सिद्धेश्वर, सुब्रह्मण्य, ढुण्ढिराज, कृष्णेन्द्र और राघवेन्द्र। इनमें सिद्धेश्वर श्रीगणेश योगीन्द्रके देहावसानतक उनके पास ही थे। सुब्रह्मण्य दक्षिण भारतके विद्याधीशपुरमें गणेश महाक्षेत्रके योगीन्द्रमठमें गणेश-तत्त्वके प्रचार-प्रसारके लिये भेज दिये गये थे। ढुण्ढिराज काशी भेजे गये थे। कृष्णेन्द्रको श्रीगङ्गाजीके उत्तरभागमें निर्मित मठ-शाखामें तथा राघवेन्द्रको इसी पवित्रतम कार्यके लिये हिमालय पर्वतके प्रदेशोंमें भेजा गया था।

श्रीगणेश-तत्त्वज्ञानके प्रमुख उद्गाता, गणेश-सम्प्रदायके प्रवर्तक, मुद्गलमुनिके अवतार श्रीगणेश योगीन्द्रकी गुरु-परम्परा भी महागाणपत्योंकी है। (१) श्रीगौडपादाचार्य योगीन्द्र—ये गणेशाथर्वशीर्ष, माण्डूक्योपनिषद्-भाष्यकार, महावाक्यदर्शनकर्ता एवं गणेश-गीतासार ग्रन्थके लेखक थे। इनके शिष्य (२) श्रीमत् शंकराचार्य योगीन्द्रने प्रस्थान-त्रयीपर भाष्य प्रस्तुत किया। इनके शिष्य (३) श्रीगिरिजासुत योगीन्द्र थे। इन्होंने गणेशाद्वैतसिद्धान्तकी स्थापना एवं श्रीक्षेत्र मयूरेश्वरके महासिद्धपीठ नामक गणेश-गुरुस्थानादिके उद्धारके साथ अनेक उपयोगी ग्रन्थोंकी रचना की। इनके शिष्य (४) श्रीब्रह्मानन्द योगीन्द्र हुए। और इन्हींके शिष्य (५) महान् गाणपत्य श्रीगणेश योगीन्द्र हुए।

स्वनामधन्य श्रीगणेश योगीन्द्रने शक संवत् १७२७ माघ कृष्ण १० (सन् १८०५ ई०) के दिन समाधि ले ली। उनकी समाधि मोरगाँवमें कर्‌हा नदीके तटपर है। श्रीगणेश योगीन्द्रके मराठी-स्तवनकी एक पङ्क्ति इस प्रकार है—

ॐ नमो गणेशपायांसी। जया नमनें सर्वांसी। सकल-सिद्धि सरसासीं। पावनी अनंत॥

'जिनके नमनसे समस्त सिद्धियाँ अनन्त कालतक प्राप्त होती हैं, उन गणेशके चरणोंमें मेरा प्रणाम है।'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेश-स्तवनका प्रत्यक्ष फल

(लेखक—श्री १०८ स्वामी नारायणदास प्रेमदासजी उदासीन)

पञ्चम वेद 'महाभारत'के लेखक श्रीगणपतिकी मङ्गलमयी लीला-कथाएँ अनेक पुराणादि सद्ग्रन्थोंमें वर्णित हैं; किंतु मैं यहाँपर एक सत्य घटनाका उल्लेख कर रहा हूँ।

सन् १९५६ ई०की बात है। तीन-चार पीढ़ियोंसे दरिद्रताका कष्ट भोगता हुआ एक गृहस्थ परिवार व्याकुल हो गया था। दरिद्रता-निवारणके लिये उसके सारे उपाय और श्रम निष्फल हो चुके थे। एक दिन उस परिवारके एक सदस्य मेरे श्रीदादागुरु (ब्रह्मलीन श्रीमहंत श्री १०८ स्वामी अमरदासजी उदासीन) के पास आकर अपना दुःख सुनाते हुए रो पड़े—'महाराजजी ! हमने जी-तोड़ परिश्रम ही नहीं किया, सब उपाय करके थक गये, किंतु समझमें नहीं आता कि हम किस देवताकी अवज्ञासे इतने कष्ट झेल रहे हैं ?'

श्रीगुरुजी महाराजने मुस्कराकर कहा—'बेटा ! अब सब ठीक हो जायगा।'

इतना सुनते ही उक्त सज्जनके हृदयमें मानो प्रसन्नताके मारे बिजली दौड़ गयी। बोल उठे—'सच ?'

श्रीस्वामीजीने उत्तर दिया—'हाँ, सच। पर तुम्हें एक काम करना होगा।'

उक्त सज्जनने तुरंत कहा—'बाबा ! आप जो कुछ कहेंगे, हम सब करनेके लिये तैयार हैं। हमें चाहे कितना भी कष्ट हो, पर हम आपकी आज्ञाका अक्षरशः पालन करेंगे।'

श्रीस्वामीजीने कहा—'तो सुनो। अभी भाद्रमासके शुक्लपक्षकी श्रीगणेश-चतुर्थी आ रही है। उस दिनसे प्रारम्भ कर दूसरे वर्षकी श्रीगणेश-चतुर्थीतक—पूरे बारह मास प्रतिदिन प्रातःकाल स्नानके पश्चात् एक धोती और उत्तरीय धारण करके किसी एकान्त कक्षमें पवित्र आसनपर बैठ जाओ और फिर श्रीगणेशजीका ध्यान करते हुए १०८ दानोंवाली मालासे (श्रीस्वामीजी महाराजने उन्हें चन्दनकी माला दी थी) सात बार भक्तिमूर्ति श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी महाराजके इस स्तोत्रका जप किया करो—

गाइये गनपति जगबंदन। संकर-सुवन भवानी-नंदन॥
सिद्धि-सदन,गज-बदन बिनायक। कृपा-सिंधु,सुंदर,सब लायक॥
मोदक-प्रिय, मुद-मंगलदाता। बिद्या-बारिधि, बुद्धि-बिधाता॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे। बसहिं राम सिय मानस मोरे॥

यह स्तोत्र लगभग दस सेकंडमें पूर्ण होता है और इस प्रकार २० मिनटमें एक मालाका जप हो जाता है। सात मालामें प्रतिदिन ७५६ बार जप होता है, जो एक वर्षमें करीब ढाई लाख हो जाता है।'

उक्त सज्जनने अत्यन्त श्रद्धा एवं प्रीतिपूर्वक भाद्रशुक्ल श्रीगणेश-चतुर्थीसे दूसरे वर्षकी श्रीगणेश-चतुर्थीतक उक्त स्तोत्रका विधिवत् जप किया। श्रीगजाननकी असीम कृपासे वह दरिद्री कुटुम्ब धीरे-धीरे सम्पन्न होता गया और इस समय उसकी आर्थिक, सामाजिक और नैतिक स्थिति सराहनीय है।

उक्त सज्जन अब तो भाद्रपद शुक्लकी श्रीगणेश-चतुर्थीका व्रत-पूजन श्रद्धा और विश्वासपूर्वक ब्राह्मणके द्वारा कराया ही करते हैं और प्रत्येक मासकी कृष्णपक्षकी श्रीगणेश-चतुर्थीके व्रतका पालन भी करते हैं। जो भी सज्जन उपर्युक्त विधिसे श्रीगोस्वामी तुलसीदास-विरचित स्तोत्रका विधिवत् जप करेंगे, अवश्य ही उनकी समस्त दरिद्रता और रोगादि नष्ट होंगे और वे विघ्न-विनाशन, मङ्गलमूर्ति, सिद्धि-सदन श्रीगणपतिजीकी कृपासे सुख एवं आनन्द-मङ्गलमय जीवन व्यतीत करेंगे।

श्रीगजानन भगवान्‌की जय !

श्रीगणेशके पाद-पद्मोंमें प्रणति

सुंदर लसत बिसाल भाल सिंदूर पूरबर।
मनहुँ मुदित गिरि उदित अरुन प्रतिबिंब सूर-कर॥
सुंडादंड सुरेस बेष इक रदन बिराजत।
लंबोदर भुज चारि चारु उत्तम बपु छाजत॥
अघहर गिरीस-गिरिजातनय भयो जासु जस धवल जग।
कर जोरि 'बीर' अति मुदित मन करत प्रनति प्रति तासु पग॥

—'बीर' कवि

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भगवान् श्रीगणेशके कुछ प्रसिद्ध भक्त

(१)

भक्त श्रीमोरया गोसावी

भगवान् गणेशके अनन्य भक्त श्रीवामनभट्ट कर्नाटकके बीजापुर जनपदान्तर्गत शालग्राम-नामक गाँवमें शकाब्द १२०२में उत्पन्न हुए। उनके अन्तर्धानका काल शकसंवत् १३३२ है। श्रीभट्टजी इस धरतीपर पूरे १३० वर्षतक जीवित थे, किंतु उनके पिताका शरीरान्त थोड़ी अवस्थामें ही हो गया। श्रीभट्टजी पिताकी अस्थिका विसर्जन करनेके लिये कल्हा नदीके पाण्डेश्वरी क्षेत्रमें कमण्डलुतीर्थ गये। वहाँ सविधि अस्थि-विसर्जन करके वे वहींसे अष्टविनायकोंके प्रमुख मोरगाँव (मयूरेश्वर) चले गये। वहाँ उन्होंने मोरेश्वरका भक्तिपूर्वक दर्शन और पूजन किया। उक्त पवित्र क्षेत्र एवं वहाँके श्रीगणेश-विग्रह उन्हें इतने प्रिय लगे कि वे वहीं रहकर उपासना करने लगे। वहाँ उन्होंने आत्म-संयमपूर्वक तीन तपोंका पुरश्चरण किया, फिर चौथा पुरश्चरण सिद्धटेकमें पूर्ण किया।

भक्त वामनभट्टकी निष्ठा एवं उनकी श्रद्धा-भक्तिके वश हो भक्तप्रिय गजमुख उनके सम्मुख प्रकट हो गये। परमप्रभु विनायकने कहा—'तुम्हें यशस्वी भक्त पुत्र प्राप्त होगा और तुम्हारे वंशधरोंकी भावी सात पीढ़ियोंतक उन्हें समस्त सिद्धियोंका लाभ प्राप्त होता रहेगा।'

कृतार्थ-जीवन भक्तवर वामनभट्ट पुनः मयूरेश्वर आ गये। वहाँ प्रसिद्ध विद्वान् रामशास्त्रीने अपनी सुयोग्य पुत्री रेणुकाका पाणिग्रहण कर लेनेके लिये भट्टजीसे साग्रह प्रार्थना की। आराध्यके आदेशानुसार भट्टजीने परिणय स्वीकार कर लिया। उन्होंने अपनी साध्वी सहधर्मिणी रेणुकाका नाम पार्वती रखा। पार्वती प्रत्येक रीतिसे पतिकी सेवा कर उन्हें प्रसन्न रखती। उसके कारण श्रीभट्टजीका गार्हस्थ्य-जीवन सुखी था। उनकी उपासनामें किंचित् व्यवधान नहीं पड़ता था।

श्रीभट्टजीने पचास वर्ष पूरे किये और उस समय (माघ शुक्ल ४ शकाब्द १२९७)की पवित्र तिथिमें उन्हें पुत्र-रत्नकी प्राप्ति हुई। पार्वतीकी प्रसन्नताकी सीमा नहीं थी और श्रीभट्टजी भी जगत्त्राता श्रीगणेशजीके आशीर्वादका स्मरण कर मन-ही-मन मुदित हुए। उन्होंने पुत्रका नामकरण-संस्कार करवाया—'मोरेश्वर'। अतिशय स्नेहवश माता-पिता उसे 'मोरया' भी कहते। बालक मोरयाकी अद्भुत क्रीड़ासे माता-पिता आनन्दमग्न होकर त्रैलोक्यपति श्रीगणेशजीकी प्रीति-पूर्वक पूजा एवं उनके मङ्गलमय नामका जप करने लगते।

किंतु एक दुःखद घटना हो गयी। तब मोरया पाँच वर्षके थे। वे घरके समीप खेल रहे थे। एक विषधर सर्पने अचानक रेंगते हुए आकर फन फैलाया और अबोध शिशु मोरयाको डँस लिया। अत्यन्त तीक्ष्ण विष था उसका। शिशु मूर्च्छित हो गया। उसका सुन्दर मुख श्याम हो गया।

भक्त वामनभट्टकी पचास वर्षकी आयुमें उत्पन्न एकमात्र प्रिय पुत्र। सभी घबरा गये। सभी दुःखी थे। और माता पार्वती—उनकी व्यथा-कथा कैसे व्यक्त की जाय। वे गोदमें अपने मूर्च्छित प्राणप्रिय पुत्रको लिये छाती पीटकर चीत्कार एवं करुण विलाप कर रही थीं। नवनीतोपम शिशुका मुख उत्तरोत्तर नीला होता जा रहा था और रह-रहकर उसके मुँहसे फेन निकल आता था।

माताका करुण-क्रन्दन सुनकर समीपस्थ मठसे एक गोसाईं आये। उन्होंने बच्चेको ध्यानपूर्वक देखा और फिर उसके शरीरपर धीरे-धीरे अपना हाथ घुमाया। तदनन्तर उन्होंने पार्वतीदेवीसे कहा—'माँजी! आप चिन्ता न करें। बालक स्वस्थ हो जायगा।' गोसाईंजी चले गये।

वे चले तो गये, पर चमत्कार कर गये। शिशु मोरयाकी मुखाकृति परिवर्तित होने लगी और कुछ ही देरमें उसका मुख पूर्ववत् अरुण हो गया। नेत्र खोलते हुए वह उठकर बैठ गया। कालके गालसे लौटे अपने एकमात्र पुत्र मोरयाको पार्वतीने हर्षोन्मत्त होकर कण्ठसे लगा लिया और वामन-भट्ट दौड़े श्रीगजवक्त्रके पाद-पद्मोंमें।

गोसाईंजीकी कृपासे बालकने पुनर्जन्म प्राप्त किया, इस कारण माता-पिताने बालकका नाम 'गोसावी' रखा। ये ही गोसावी भविष्यमें प्रसिद्ध गणेशभक्त मोरया गोसावीके नामसे प्रख्यात हुए। श्रीवामनभट्ट एवं उनकी धर्मपत्नीने उन्हें विघ्ननाशक परमप्रभु लम्बोदरके कृपाप्रसादके रूपमें प्राप्त किया था।

मोरया गोसावीने जब आठवें वर्षमें प्रवेश किया, तब उनके पिता श्रीवामनभट्टने उनका उपनयन-संस्कार करवा दिया। शिक्षा प्रारम्भ हुई। कुशाग्रबुद्धि थी मोरयाकी। वे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो कुछ पढ़ते, थोड़े-से परिश्रमसे वह उन्हें कण्ठस्थ हो जाता। वे वेद और शास्त्रोंका गहन अध्ययन कर रहे थे; किंतु जैसे-जैसे उनके शास्त्र-ज्ञानकी वृद्धि हो रही थी, वैसे-ही-वैसे उनकी करुणामय गिरिजानन्दनके चरणकमलोंमें निष्ठा सुदृढ़ होती जाती थी।

उसी समय उनका एक सिद्ध योगिराजसे सम्पर्क स्थापित हो गया। मोरया गोसावीने उनसे योगका ज्ञान प्राप्तकर अभ्यास प्रारम्भ कर दिया। योगाभ्यास करते-करते उनका मन विरक्त होने लगा। कुछ ही समय बाद एक दिन उन्होंने चुपचाप घर त्याग दिया और मोरगाँव पहुँचे। यह मोरगाँव (मयूरेश्वर) क्षेत्र गणेश-भक्तोंके लिये मातृगया-स्वरूप है। उक्त पावन क्षेत्रमें मोरया गोसावीपर नयन भारती-नामक एक जितेन्द्रिय महात्माने कृपा की और उनकी संनिधिमें मोरयाने योगाभ्यास किया। उन्हें सहज ही समाधि लगने लगी। तदनन्तर भक्त गोसावीने ४२ दिनोंतक निष्ठा-पूर्वक एक पुरश्चरण किया। मोरयाकी श्रद्धा-भक्ति एवं उपासनासे आकृष्ट होकर प्रभु चिन्तामणिने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिये। तब कृतार्थ-जीवन मोरया अपने घर लौट गये।

गोसावी दत्तचित्त होकर माता-पिताकी सेवा करने लगे। इस प्रकार आपने ९५ वर्षकी आयुतक घरपर निवास किया। बीचमें पुण्यमयी माता पार्वतीका निधन हो गया और पिता श्रीवामनभट्टने संन्यास ग्रहण कर घर त्याग दिया। भक्तवर गोसावीकी दृष्टिसे अब कोई कार्य शेष नहीं था। इस कारण वे चुपचाप घर छोड़कर पवना नदीके तटपर कविजाईदेवीके मन्दिरमें एकान्त शान्त-जीवन व्यतीत करते हुए भजन करने लगे।

लीलाविहारी भगवान् सुमुखकी कल्याणमयी लीला सर्वथा अकल्पनीय एवं अद्भुत होती है। सर्वथा विरक्त भक्त मोरया गोसावीकी ९६वर्षकी आयुमें उनके प्राणाराध्य एकदन्तने प्रकट होकर आज्ञा प्रदान की—'गृहस्थाश्रम स्वीकार कर लो।' और देवदेव अन्तर्धान हो गये।

वैराग्यपूर्ण जीवन व्यतीत करनेवाले परम योगी मोरया गोसावी। ९६वर्षकी आयु। और कन्या-परिणय! सर्वथा अकल्पित और आश्चर्यजनक! पर देवदेव गजमुखका आदेश। मङ्गलमूर्ति सर्वेश्वर प्राणधनका आशोल्लङ्घन—गोसावीके लिये असम्भव, सर्वथा असम्भव था। करिवरवदनकी जैसी इच्छा!

हालाहलको अमृतमें परिवर्तित करनेवाले सर्वान्तरात्मा गजकर्णने विधि भी बैठा दी। पुनवले ग्रामके गोविन्दराव कुलकर्णीकी लक्ष्मीस्वरूपा प्रौढ़ा पुत्री उमा जैसे इन्हींकी प्रतीक्षा कर रही थी। परम विरक्त, परम भक्त और परम योगी वृद्ध गोसावी दूल्हा बने। उमाके साथ विवाह हुआ और वे सविधि गार्हस्थ्य-जीवन व्यतीत करने लगे; किंतु परम अनासक्तभावसे।

गार्हस्थ्य-जीवनमें भी उनकी उपासना निरन्तर चलती ही रहती थी। वे सतत अपने आराध्य गजवक्त्रका स्मरण करते रहते। मोरया प्रत्येक संकष्टी चतुर्थीके अवसरपर मोरगाँव जाते। प्रतिपदासे चतुर्थीतक भगवान् लम्बोदरकी पूजा एवं आराधना करते। पञ्चमीको अन्न ग्रहण करते। कुछ ही दिन बाद उनके यहाँ पुत्र उत्पन्न हुआ। आपने उसका नामकरण किया—'चिन्तामणि'।

मोरया गोसावी संकष्टीके आगमनपर मोरगाँव जाया ही करते। उनके इस यात्राक्रममें गृहस्थीके कारण कभी व्यवधान उत्पन्न नहीं हुआ। किंतु अत्यधिक आयु हो जानेके कारण उनका शरीर यात्राके योग्य नहीं रह गया। मोरया मन-ही-मन व्याकुल हो गये। वे अपने आराध्यके दर्शन और पूजनके बिना अधीर और अशान्त रहते थे। उनकी अत्यधिक व्याकुलता देखकर परमप्रभु गणेशने प्रकट होकर उनसे कहा—'अब तुम मेरे यहाँ आनेका विचार छोड़ दो। मैं ही तुम्हारे यहाँ रहूँगा।'

यह घटना शकाब्द १४१४की है। मोरया गोसावी कन्हा नदीमें स्नान कर रहे थे कि जलमें डुबकी लगाते ही उनके हाथमें श्रीगणेशकी एक सुन्दर मूर्ति आ गयी। मोरयाकी प्रसन्नताकी सीमा नहीं थी। उन्होंने नदीके समीप ही अत्यन्त श्रद्धापूर्वक उक्त श्रीगणेश-विग्रहकी पूजा की। उसे शाक आदिका नैवेद्य अर्पित किया। इसीलिये मोरगाँवमें उक्त स्थल 'पोवली' नामसे आज भी प्रसिद्ध है।

फिर मोरया गोसावीने उक्त मूर्तिको लाकर चिंचवड़में स्थापित किया। मोरया प्रसिद्ध संत थे। अब जगत्त्राता शुभ-गुण-सदन गजवक्त्रके श्रीविग्रहकी प्राप्ति एवं महान् गणपति-भक्तके कर-कमलोंसे उनकी स्थापनासे सर्वत्र उसकी ख्याति हो गयी। चिंचवड़के गणेशजी सबकी श्रद्धाके केन्द्र हुए

मार्च ४—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

और वह चिंचवड़-क्षेत्र श्रीगणेश-भक्तोंका प्रसिद्ध तीर्थ-स्थल बन गया।

भगवान् गजाननके अनन्य भक्त मोरया गोसावी सिद्ध महात्मा थे। उनके द्वारा कितने ही दीन, दुःखी एवं रोगियोंने अपनी आपदाओंसे मुक्ति प्राप्त की थी। इस कारण समीपके ही नहीं, दूरके भी छोटे-बड़े श्रद्धालु-जन उक्त श्रीगणेश-विग्रहके दर्शन एवं पूजनके लिये आने लगे। कुछ भक्त श्रीगणेशोपासनाकी शीघ्र सफलताके लिये वहाँ आकर रहने भी लगे। भक्तोंके निवास एवं पूजा-अर्चाके लिये धनके साथ पर्याप्त भूमि भी प्राप्त हो गयी।

सर्वथा विरक्त मोरया गोसावी तो श्रीगणेशाराधनमें तल्लीन रहते, किंतु उनके योग्यतम गणेशभक्त पुत्र चिन्तामणिने व्यवस्थाका सारा दायित्व सँभाल लिया। धन-सम्पत्तिकी सुरक्षा एवं अन्न-वितरण आदिका उन्होंने अत्यन्त सुन्दर प्रबन्ध किया। कुछ ही समय बाद उस स्थानने विशाल संस्थानका स्वरूप ग्रहण कर लिया। स्वयं छत्रपति शिवाजी और अनेक हिंदू सरदारोंने वहाँ जाकर प्रभु गजवक्त्रका दर्शन-पूजन तो किया ही, पुष्कल धनराशि भी प्रदान की। इतना ही नहीं, इस पवित्र संस्थानके लिये मुसल्मान बादशाहोंने भी प्रचुर धन दिया।

चिन्तामणिकी सेवाका एक सुपरिणाम यह हुआ कि उनके जन्मदाता सिद्ध संत एवं गणेश-भक्त पिता ही उनके दीक्षागुरु हो गये। फलतः वे भी प्रसिद्ध यथार्थ गणेश-भक्त बन गये। भक्त पिताके भक्त पुत्र संस्थानका कार्य अत्यन्त सुचारुरूपसे करते। इस प्रकार मोरया गोसावीकी दीर्घतम आयु १८६ वर्षकी हो गयी। उन्होंने जीवित समाधि लेनेके अपने निश्चयकी सूचना अपने पुत्ररत्न चिन्तामणिको दे दी।

मार्गशीर्ष कृष्ण ६, शक संवत् १४८३ की बात है। भगवान् गजमुखके अनन्य नैष्ठिक भक्त, श्रीगणेश-भक्तिके प्रचारक, त्याग, तपस्या एवं आदर्श-जीवनकी प्रतिमूर्ति मोरया गोसावीने अपने योग्यतम पुत्र-शिष्यको आध्यात्मिक उपदेश देकर शान्त-चित्तसे समाधिमें प्रवेश किया। वे पद्मासन लगाकर बैठ गये। उनके दोनों ओर घृत-दीप जल रहे थे। सम्मुख 'श्रीगणेशपुराण' था।

समाधिकालके कुछ ही पूर्व परम गणेश-भक्त चिन्तामणिने पत्नीसहित अपने सद्गुरु पिताका अन्तिम दर्शन कर उनके चरणोंमें श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया और फिर समाधि-द्वारपर एक शिला रख दी। मोरया गोसावी अपने परम सुहृद्, परम दयालु, परम प्रेमी, सर्वशक्तिमान्, सर्वाधार, सर्वेश्वर, श्रीगणेशमें विलीन हो गये।

शकाब्द १७२७तक मोरया गोसावीकी सात पीढ़ियों-तक संस्थानका कार्य उनके वंशधर करते रहे। वे सब-के-सब गजवक्त्रके श्रद्धालु भक्त थे, किंतु बादमें उनकी औरस संतान-परम्परा समाप्त हो गयी। पर गणपति-सम्प्रदायमें भक्तवर मोरया गोसावीका आदरणीय स्थान तो सुरक्षित ही रहा। इनके रचे सुन्दर पद तो महाराष्ट्रमें प्रायः सर्वत्र आदरपूर्वक गाये जाते हैं। मोरया गोसावीकृत गणराज-स्तवनकी कुछ पङ्क्तियाँ इस प्रकार हैं—

अहो मूषकवाहन हो देव देखिले गहन।
महाविघ्नविध्वंसन हो गणराज (मायबाप)॥
अहो फरशु, अंकुश कटी वा घेउनियां झडकरी।
आपुलें ब्रीद साच करी हो गणराज (महाराज)॥
अहो मोरया गोसावी हो मोरया गोसावी देव योगिया गहन।
त्यांचे त्यांचे, हृदयीं संपूर्ण हो नांदतसे॥
(पदांचा गाथा : ३४ वें पदसे)

'हे मूषकवाहन! मैंने बहुत बड़े देव देखे हैं, किंतु महाविघ्नोंका विध्वंस करनेवाला गणराज तू ही है। हे गणराज महाराज! परशु-अङ्कुश लेकर तू अपना काम पूरा कर। मोरया गोसावी कहता है—'यह मोरया देव योगियोंके लिये भी असाध्य है। जो (उसके) भक्त हैं, उनके हृदय-सिंहासनपर वह विराजमान है।'

(२)

भक्त गोसावीनन्दन

महाराष्ट्रके प्रसिद्ध गणेशोपासकोंमें गोसावीनन्दनको सम्मानित स्थान प्राप्त है। इनके पूर्वज मुरारी पण्डित भी भगवान् गजवदनके भक्त थे। वे भगवान् गणपतिको तुष्ट कर उनकी कृपा-प्राप्तिके लिये मोरगाँव पहुँचे। वहाँ उन्होंने देव-देवेश परमप्रभु गणेशकी अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक उपासना प्रारम्भ की। वे अहर्निश गजमुखके ही ध्यानमें तल्लीन रहते थे। सद्यःसिद्धिदाता लम्बोदरने प्रसन्न होकर आज्ञा प्रदान की—'सिंदखेड (जि० बुलढाणा) जाकर निर्लिप्त रहते हुए गार्हस्थ्य-जीवन व्यतीत करो।' अतएव मुरारी पण्डित सिंदखेड लौटे एवं गृहस्थाश्रममें प्रविष्ट हुए। उन्होंने वहाँ एक सुन्दर गणेश-मन्दिर बनवाया और वहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अपने आराध्यका भजन-पूजन करते हुए जीवन व्यतीत करने लगे । इन्हीं गणेश-भक्त मुरारी पण्डितकी चौथी पीढ़ीमें प्रसिद्ध गणपति-भक्त गोसावीनन्दनने जन्म लिया । इनका वेदान्त, योग एवं काव्यशास्त्रपर असाधारण अधिकार था ।

गोसावीनन्दनने समर्थकालीन ख्यातिप्राप्त योगी एवं संत गोपालाश्रमसे दीक्षा प्राप्त की थी । इनकी कुलदेवी तो रेणुकादेवी थीं, किंतु ये उपासक त्रैलोक्यत्राता एकदन्त गणेशके ही थे । श्रीगणेशजीमें इनकी अद्भुत निष्ठा थी । ये अपना अधिकांश समय श्रीगजमुखकी सेवा-पूजा, आराधना एवं जप-प्रार्थनामें ही व्यतीत करते । अपनी रचनाओंके माध्यमसे ये अपने इष्टदेवता श्रीगणेशकी ही अर्चना करते रहते ।

वृद्धावस्था निकट आते देखकर भक्त गोसावीनन्दनने नासिक, प्रयाग, अयोध्या और काशी आदि पावनतम तीर्थोंकी यात्रा कर ली । भगवान् सुमुखकी आराधना चलती रही; किंतु शरीरके वृद्ध होनेपर इनकी नेत्र-ज्योति जाती रही । वैसी परिस्थितिमें गोसावीनन्दन दूसरेसे भगवान् गणेशकी पूजा करवाते; किंतु अन्न-ग्रहणके पूर्व दूर्वार्चन तो स्वयं ही कर लेते ।

गणेश-भक्त गोसावीनन्दन आदर्श गृहस्थ थे । इनकी पत्नीसे एक कन्या उत्पन्न हुई थी । विदर्भमें उसका वंश आज भी चल रहा है ।

गणेश-भक्त गोसावीनन्दनकी समाधि पुण्यतोया गोदावरीके दक्षिणतटपर श्रीक्षेत्र पैंठणके पास कावसन-नामक स्थानमें है । इनके समाधि लेनेके संवत्का तो पता नहीं, किंतु इनकी पुण्य-तिथि फाल्गुन शुक्ल पञ्चमी मानी जाती है ।

इनकी कृतियाँ 'ज्ञानदेवी' और 'दासबोध' ग्रन्थोंसे प्रभावित प्रतीत होती हैं । इनकी रचनाओंमें 'ज्ञानमोदक' अथवा 'प्राकृत वेदान्तसार' और 'सीता-स्वयंवर' अधिक प्रसिद्ध हैं । इन ग्रन्थोंमें अभंग, अष्टक, पद और आरती हैं । इन ग्रन्थोंके देवी-अष्टक, रेणुकाष्टक, गजाननाष्टक और मल्हारी अष्टक विशेष प्रसिद्ध हैं ।

परमप्रभु गजाननका स्तवन करते हुए ये कहते हैं—

जवली भक्ति आणि मुक्ति ! त्याचि शुद्धबुद्धि शोभति !
अभयवरदा गणपति ! तूंचि असे ॥

'भक्ति और मुक्ति,दोनों तेरे पास हैं ! दोनोंकी शुद्ध बुद्धि तुझमें शोभित है । इससे अभयका वरदान देनेवाला तू ही गणेश है ।'

(३)

भक्त श्रीगोपालाश्रम

श्रीगोपालाश्रमजी भगवान् गणपतिके कितने प्रसिद्ध एवं सिद्ध भक्त थे, यह इसीसे स्पष्ट हो जाता है कि श्रीगणेशजीके प्रख्यात भक्त गोसावीनन्दनने इन्हें ही गुरुके रूपमें स्वीकार किया था । भक्तवर गोसावीनन्दनके मनमें श्रीगोपालाश्रमजीके प्रति अद्भुत श्रद्धा एवं भक्ति थी और वह निम्न पङ्क्तियोंसे विदित भी हो जाती है—

सद्गुरु गणेशा अचला । सद्गुरु गणेशा अमला ।
सद्गुरु गणेशा गोपला । नमो तुज ॥
भक्त तारावया गणपति । धरिली गोपालाश्रमाकृति ।
आतां मजला हेचि गमति । अवयव ॥

'हे अचल, अमल, सद्गुरुरूप, गोपालरूप गणेश ! तुझे मेरा प्रणाम है । मुझे प्रतीत होता है कि तूने भक्तोंका उद्धार करनेके लिये गोपालाश्रमका स्वरूप धारण किया है ।'

(४)

भक्त निरञ्जनस्वामी करहाडकर

गणपति-भक्त श्रीनिरञ्जनस्वामी करहाडकर करहाड ग्राममें श्रीनरसिंह पाठककी साध्वी सहधर्मिणी कृष्णाबाईकी कोखसे माघशुक्ल चतुर्थी (शकाब्द १५५९)के दिन उत्पन्न हुए थे । बाल्यकालमें ही इनका मन भुवनपावन गजमुखकी ओर आकृष्ट हो गया । अतएव ये भवानीनन्दन गणेशके ध्यान, नाम-जप एवं उनकी लीला-कथा-श्रवण आदिमें ही अपना अधिक समय व्यतीत करते थे । यौवनमें प्रवेश करने-पर तो आपने अपने आराध्यको संतुष्ट करनेके लिये तपश्चरण प्रारम्भ कर दिया । इनके मन, इन्द्रिय एवं प्राण—सभी प्राणधन कृपासिन्धु गजवक्त्रकी-कृपाके लिये आतुर थे और उनकी सच्ची प्रीतिके वश हो दयामूर्ति गणेशने उनपर दयाकी दृष्टि कर दी । आदर्श पवित्र चरित्रके कारण वे सर्वसाधारणमें 'देव' नामसे प्रख्यात थे ।

प्रत्येक परिस्थितिमें संतुष्ट रहनेवाले श्रीनिरञ्जनस्वामी पैंठणके गजानन-भक्त काशिराजस्वामीके शिष्य थे । ये सर्वथा अकिंचन थे, किंतु अतिशय श्रद्धाके कारण गणेशक्षेत्रोंके दर्शनार्थ कष्ट सहकर भी यात्रा करते । इसी प्रकार इन्होंने काशीकी भी यात्रा की ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अनेक मुमुक्षुओंने श्रीस्वामीजीसे अत्यन्त श्रद्धापूर्वक दीक्षा प्राप्त की और गणेशोपासनामें लग गये। इन्होंने शकाब्द १६१४में पंढरपुरमें 'गणेशगीता'पर टीका लिखी। भगवान् गणेश-सम्बन्धी इनकी स्फुट पद्यबद्ध रचनाएँ भी प्राप्त हैं। श्रीस्वामीजीके पौत्र भगवन्तने इनका जीवन-चरित्र लिपिबद्ध किया है।

(५)

भक्त निरञ्जनदास बल्लाल

गणेश-भक्त श्रीनिरञ्जनदासजी सद्गृहस्थ थे। प्रथम पत्नीका शरीरान्त होते ही आपने दूसरा विवाह कर लिया; किंतु कुछ ही समय बाद वह भी मृत्यु-मुखमें चली गयी। उसके वियोगसे निरञ्जनदासजी अत्यन्त दुःखी हुए, किंतु उसी दुःखके आवेगमें वे संसारके नश्वर स्वरूपका चिन्तन करने लगे। उनका मन क्रमशः विरक्त होता गया। अन्ततः वे घर छोड़कर गणेशगीताके टीकाकार परम गणेश-भक्त श्रीनिरञ्जनस्वामी करहाडकरके समीप पहुँचे। उनके चरणोंमें साष्टाङ्ग प्रणाम निवेदन कर उन्होंने अत्यन्त विनयपूर्वक कहा—'स्वामिन्! मेरा चित्त इस असार संसारकी कुटिल गति देखकर अत्यन्त व्याकुल हो गया है। आप कृपापूर्वक मुझे शिष्य बनाकर मेरा अशेष हित करनेका अनुग्रह करें।'

श्रीनिरञ्जनस्वामीने उनकी अनेक विधियोंसे परीक्षा की और उन्हें योग्यतम पात्र समझकर दीक्षा दे दी। सदाचार-सम्पन्न निरञ्जनदासजी दत्तचित्त होकर उपासना करने लगे। धीरे-धीरे उनके हृदयमें ज्ञान-प्राप्तिकी कामना उदित हुई। वे अपने गुरुके समीप पहुँचे। उनके चरणोंमें प्रणाम किया और उनसे ज्ञान-दानकी प्रार्थना की।

योग्य शिष्यके योग्यतम गुरुने आशिष दी—'तुम्हें बिना पढ़े संस्कृत-ज्ञान प्राप्त हो जायगा' और उन्होंने निरञ्जनदासको गणेशपुराणपर टीका लिखनेका आदेश देते हुए उनका नामकरण किया—'बल्लालदेव'।

निरञ्जनदास बल्लालने अपने गुरु निरञ्जनस्वामी करहाडकरके आदेशानुसार 'गणेशगीता'की टीका नामलगाँवमें ज्येष्ठकृष्ण ४ शक संवत् १६५१को पूर्ण कर ली। वह टीका प्रसाद-गुणमयी है। ग्रन्थ-समापन करते समय उन्होंने संत ज्ञानेश्वरकी तरह 'प्रसाद-दान'की याचना की है।

(६)

भक्त यदु माणिक

ये नेवासा गाँवके रहनेवाले थे। इनके कुलदेवता 'माणिक' थे। यह शब्द कैलासान्तर्गत 'माणिकेश्वर' शिवस्थान-का संक्षिप्त रूप है। इन्होंने गणेशपुराणके सिंदूराख्यान एवं गणेशगीताकी 'संजीवनी' नामक टीका की थी। कहा जाता है कि यह टीका इन्होंने माणिकेश्वरकी कृपासे लिखी।

इन्होंने अजंठा-समीपस्थ रुद्रेश्वर-नामक स्थानमें भगवान् गणपतिकी अत्यन्त निष्ठापूर्वक उपासना की थी। यदु माणिककी प्रीतिसे भगवान् गजानन प्रसन्न हो गये थे। इनकी तपोभूमि रुद्रेश्वर थी, जो अजंठासे लगभग ८ मील दूर सर्वथा एकान्त मनोरम स्थल है। वहाँ श्रीगणेशजीकी एक भव्य प्रतिमा भी है।

गणेश-भक्त यदु माणिकके कितने ही सुन्दर गणेश-स्तवन प्राप्य हैं।

(७)

भक्त अङ्कुशधारी महाराज

कथनमात्र ईशता व्यवहार जाणा।
साक्षादात्मा ब्रह्म गणेश म्हणा॥
नमनमात्र सर्वत्र शांतियोगपणा।
सार्वभौमता ही गणराजीं॥

(अङ्कुशधारी महाराज)

'जीवात्मासे भिन्न ईश्वर है—यह व्यवहार कथनमात्रके लिये ही है, यह मैंने जाना है। वास्तवमें आत्मा साक्षात् ब्रह्म-गणेश ही है। उनको नमस्कार करनेमात्रसे शान्तियोगकी प्राप्ति होती है। यही गणेशजीकी सार्वभौमिकता है।'

* * *

रत्नागिरि जिलेके टिके ग्राममें भगवन्त गङ्गाधर (नाना-साहब टिकेकर) नामक प्रसिद्ध धार्मिक व्यक्ति निवास करते थे। उनकी धर्ममय जीवन व्यतीत करनेवाली पत्नीका नाम अन्नपूर्णा था। मार्गशीर्षशुक्ल ७ (शक संवत् १८०१) के दिन इनके यहाँ एक पुत्र-रत्न पैदा हुआ। शिशुका नामकरण किया गया—'गजानन'। गजानन अद्भुत गजानन-भक्त थे और यही अङ्कुशधारी महाराज अथवा टिकेकर शास्त्रीके नामसे प्रख्यात हैं।

गजानन बाल्यकालसे ही अध्यात्म-प्रेमी थे। नौ वर्षकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

आयुमें ही उन्होंने मन-ही-मन सर्वश्रेष्ठ देवकी आराधनाका निश्चय कर लिया और इसके लिये वे दत्तचित्त होकर ग्रन्थोंका अध्ययन करने लगे। गजानन बारह वर्षकी आयुतक इंदूरमें विद्याध्ययन कर रहे थे।

शकाब्द १८१३के मार्गशीर्षकृष्ण चतुर्थी तिथिका मध्याह्नकाल था। उसी समय अत्यन्त मधुर स्वरमें गणपति-गान करता हुआ एक भिक्षुक गजाननके द्वारपर आया। गजाननने उसे भिक्षा दी और पुनः वे घरमें चले गये; किंतु भिक्षुककी मर्मस्पर्शिणी स्वर-लहरीसे आकृष्ट होकर वे पुनः भिक्षुकके दर्शनार्थ द्वारपर आये; पर वहाँ भिक्षुक नहीं था। गजाननने समीपस्थ घरोंमें पूछा, पर सबने एक ही उत्तर दिया—'यहाँ तो कोई भिक्षार्थी नहीं आया था।'

गजाननने स्वयं भिक्षुकको गणपति-पद-गायन करते दूसरे घर जाते देखा था और उसकी मधुर वाणी ही नहीं, उसके शान्त एवं तेजस्वी मुखमण्डलको देखकर वे उसकी ओर आकृष्ट हो गये थे। वे हृदयस्पर्शी तेजस्वी गायकके समीप कुछ देर बैठना चाहते थे, उससे कुछ वार्तालाप करना चाहते थे, पर कोई वश नहीं था। वे उक्त आकर्षक भिक्षुकका मन-ही-मन स्मरण करते हुए लौट आये।

कुछ समय बाद गजानन इंदूर-समीपस्थ सावेर-नामक स्थानपर गणेश-संस्थानके दर्शनार्थ पहुँचे। वहाँ उन्होंने जब उक्त संस्थानके अधिपति गणपतिबुवाका भी दर्शन किया, तब वे अत्यन्त चकित होकर सोचने लगे—'मैं जिस मधुर गायक भिक्षुकसे मिलना चाहता था, वे तो ये ही प्रतीत होते हैं।' गजाननने धीरेसे दो-एक व्यक्तियोंसे मनकी बात कही किंतु, वे हँसते हुए कहने लगे—'संस्थानके अधिपति तुम्हारे यहाँ भिक्षाटनके लिये जायँ! सम्भव नहीं, कदापि सम्भव नहीं।'

'तुम्हारा ज्ञातव्य क्या है?' गणपतिबुवाने स्वय गजाननसे पूछा। सर्वथा सरल एवं निश्छल गजाननने गणपतिबुवाके सम्मुख मनकी बात स्पष्ट व्यक्त कर दी।

गजाननके निष्कपट हृदयका परिचय पाकर सिद्ध गणपति-भक्त गणपतिबुवाने अत्यन्त प्रसन्न होकर उत्तर दिया—'निश्चय ही मेरे वेषमें मङ्गलमूर्ति श्रीगणेशने ही तुम्हारी भिक्षा ग्रहण कर तुम्हें आज्ञा प्रदान की है।' गणपतिबुवाने प्रतिभाशाली सरलतम गजाननको अपने समीप रहनेका परामर्श दिया और उन्होंने गणपतिबुवाके चरणोंमें रहकर साधन-भजन करना सहर्ष स्वीकार कर लिया।

'आप मुझे कृपापूर्वक गणेशोपासनाका मार्ग बताइये।' गजाननकी अत्यन्त विनीत प्रार्थना सुनकर सिद्ध महात्मा गणपतिबुवाने उन्हें गणेशाराधनका यथार्थ अधिकार प्राप्त करनेके लिये तप करनेकी आज्ञा दी और गणेश-चरणानुरागी गजानन उनके समीप रहकर उन्हींके निर्देशानुसार तपश्चर्यामें लग गये। उनके सदाचरण एवं तपश्चरणसे प्रभावित होकर परम गाणपत्य गणपतिबुवाने उन्हें गणेशका एकाक्षर-मन्त्र प्रदान कर दिया। गणेशानुरागी गजाननने सविधि अनुष्ठान सम्पन्न कर लिया। वे यथार्थ गणेशोपासक होकर शास्त्र-विधिकी बतायी दिनचर्याका सोत्साह पालन करने लगे।

एक बारकी बात है। गणपतिभक्त गजानन रात्रिमें संस्थानके श्रीगणेश-विग्रहके समीप गणेशगीताका पाठ कर रहे थे। वहीं सद्गुरु गणपतिबुवाके पुत्र गजानन और वासुदेव भी प्रेमपूर्वक पाठमें तन्मय थे।

'जय गजानन!' सहसा एक संन्यासीने भिक्षाकी याचना की।

गजानन तुरंत उठे। उन्होंने दिव्य और तेजस्वी संन्यासी महात्माके चरणोंमें अत्यन्त आदरपूर्वक प्रणाम किया और बोले—'स्वामिन्! इस समय तो मेरे पास ये कुछ दूर्वादल और शमीपत्र ही हैं। आप कृपया इन्हें ही स्वीकार कर लें।'

'कुछ दूर्वादल और शमीपत्र! सर्वोत्तम भिक्षा प्रदान की तुमने!' कहते हुए संन्यासीने गजाननके मस्तकपर अपना हाथ रखा और उनकी ओर वे स्नेहपूर्ण दृष्टिसे देखने लगे।

गणेश-भक्त गजाननके तन, मन और प्राणमें जैसे सहसा परिवर्तन हो गया। द्वैतभावके विलीन हो जानेकी अनुभूतिके साथ उनके रोम-रोम आनन्दसे पुलकित हो गये। उसी समय वैदिक मन्त्रोंके उच्चारणके साथ तेजस्वी संन्यासीने गजाननका नवीन नामकरण किया—'अङ्कुशधारी'।

अलौकिक संन्यासी अदृश्य हो गये। अङ्कुशधारी कुछ समझ न सके। उनकी बड़ी विचित्र दशा हो रही थी। वे स्वानन्दमें निमग्न हो गये थे। उन्होंने वहीं दोनों हाथ जोड़े और मन-ही-मन उन महात्माके चरणोंमें श्रद्धापूर्ण प्रणाम निवेदित किया। गजाननके मनने निर्णय दिया—'निश्चय ही तुमपर अनुग्रह करनेके लिये दयालु श्रीगणेश योगीन्द्र प्रकट हुए थे।'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गजानन और वासुदेव—गुरुपुत्रोंने भक्त गजाननसे पूछा—'अरे, आप द्वारपर प्रणाम किसे कर रहे हैं ?'

अङ्कुशधारीने उत्तर दिया—'जय गजाननका उद्घोष करनेवाले तेजस्वी यतिको आपने नहीं देखा ! वे बड़े कृपालु थे।'

इतना ही नहीं, श्रीगणेश योगीन्द्रने इन गणपति भक्त अङ्कुशधारी महाराजपर अद्भुत कृपा-वृष्टि की। वे प्रतिदिन स्वप्नमें अङ्कुशधारीजीको विधिवत् दीक्षाक्रम बताने लगे। उन्होंने अपने इस कृपा-भाजनको गणपति-सम्प्रदायसे समुचित रीतिसे परिचित कराकर अपने समस्त ग्रन्थोंका ज्ञान प्रदान कर दिया। उनके आदेशानुसार उन ग्रन्थोंका प्रकाशन भी हुआ। श्रीगणेश योगीन्द्रने योग्यतम पात्र अङ्कुशधारी महाराजको भूस्वानन्द-क्षेत्रमें जाकर उसके पुनरुद्धार करनेका आदेश प्रदान किया और परम कृतज्ञ अङ्कुशधारी महाराज सोत्साह आज्ञा-पालनमें लग गये। परम भाग्यवान् अङ्कुशधारी (गजानन) श्रीगणेश योगीन्द्रके अनुग्रहसे महान् गणेशोपासक गणेशपीठके पुनरुज्जीवनकर्ता तो हुए ही, ग्रन्थकर्ता भी बन गये। परम यति श्रीगणेश योगीन्द्रकी सत्प्रेरणासे उन्होंने श्रीब्रह्मभूय महासिद्धिपीठके शुद्ध वैदिक गणेश-मार्गका कार्य पुनः सुन्दर रीतिसे आगे बढ़ाया।

अङ्कुशधारी महाराजने संस्कृत और मराठी—दोनों भाषाओंमें काव्य प्रस्तुत किये। उन्होंने १७५ प्रकरणोंमें कुल मिलाकर लगभग पचास हजार पदोंकी रचना की है। उनके जीवनकी विशालतम काव्यकृति 'श्रीयोगीन्द्रविजय' है। यह ओवीबद्ध ग्रन्थ गणेशोपासकोंके लिये अत्यन्त उपयोगी एवं प्रेरणाप्रद है। इस ग्रन्थमें गणेशमार्गका सम्पूर्ण तत्त्वज्ञान, पुराणोंमें दिये गये योगीन्द्रोंके उपदेश, उनकी कथाएँ और श्रीगणेश योगीन्द्रका उद्बोधक चरित्र आदि प्रभावोत्पादक ढंगसे सविस्तर वर्णित हैं।

अङ्कुशधारी महाराजके जीवनमें पद-पदपर श्रीगणेश योगीन्द्रकी सहायता प्राप्त होती रही। वे सद्गुरु श्रीगणेश योगीन्द्रके जीवनसे सम्बन्धित घटनाओंको लिखनेकी दृष्टिसे 'गणेशविजय'-नामक ग्रन्थ पानेके लिये आतुर थे। सर्वत्र प्रयत्न करनेके अनन्तर उन्होंने द्रविड़देशके तुकिली नामक गाँवमें रहनेवाले गणपतिके परम भक्त, सिद्ध पुरुष साम्बशिवशास्त्रीको पत्र लिखा। उन्होंने स्पष्ट उत्तर दिया—'मेरे पास श्रीगणेश योगीन्द्रसे सम्बन्धित कोई ग्रन्थ नहीं है।'

अङ्कुशधारी महाराज उनका चरित्र लिखनेके लिये आतुर और अधीर हो रहे थे। विवशतः उन्होंने अपने दो शिष्योंके साथ श्रीगणेश योगीन्द्रकी समाधिके समीप बैठकर २१ दिनोंका अनुष्ठान प्रारम्भ किया। श्रीगणेश योगीन्द्रने स्वप्नमें उन्हें आदेश दिया—'अनुष्ठान त्यागकर अनुसंधान करो।'

दो-चार दिनमें ही उनके पास हस्तलिखित 'योगीन्द्र-चरित्र'-नामक ग्रन्थ डाकसे प्राप्त हुआ और आश्चर्यकी बात तो यह थी कि उसके प्रेषक थे— साम्बशिवशास्त्री।

अङ्कुशधारी महाराजने प्रसन्नतापूर्वक श्रीशास्त्रीजीको पत्र लिखकर पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया—'यह आश्चर्य-जनक घटना मैं श्रीमयूरेश्वरके दर्शनार्थ आनेपर बता दूँगा।'

चार मास बाद श्रीसाम्बशिवशास्त्री श्रीमयूरेश्वरके दर्शनार्थ मोरगाँव पहुँचे तो उन्होंने अङ्कुशधारी महाराजसे मिलकर बताया—'मेरे गाँव तुकिलीके समीप श्रीमध्यार्जुन-नामक शैव क्षेत्रमें मौन-व्रतधारी, दिगम्बर सिद्ध पुरुष दत्त योगीन्द्र रहते हैं। उनकी आयु, विद्या एवं उपासना आदिके सम्बन्धमें किसीको कुछ पता नहीं। एक दिन उनके शिष्यके द्वारा संदेश प्राप्त कर मैं उनके चरणोंमें उपस्थित हुआ।

"कुशलोपरान्त उन्होंने कहा—'समाधिकी स्थितिमें मुझे विदित हुआ कि भूस्वानन्द मयूरेश्वरमें कोई अङ्कुशधारी नामक गाणपत्य योगीन्द्र-चरितके लिये व्याकुल है और आपका उनसे परिचय है। श्रीगणेश योगीन्द्रको अङ्कुशधारी-के माध्यमसे गणेशधर्मका प्रचार-प्रसार अभीष्ट है। वह चरित्र मैंने स्वयं लिखा है। उसे आप उनके पास भेज देनेका कष्ट स्वीकार करें।' फिर उक्त ग्रन्थ मैंने तुरंत आपकी सेवामें भेज दिया।"

सद्गुरुकी अद्भुत कृपाका अनुभव कर अङ्कुशधारी महाराजकी विचित्र दशा हो गयी। उनके नेत्र सजल हो गये और वाणी सर्वथा मूक थी। उन्होंने इस चामत्कारिक घटनाका उल्लेख श्रीगणेश योगीन्द्रके उपोद्घातमें स्वयं किया है।

गणेश-धर्मके प्रचार और प्रसारके शुभ कार्यमें निरन्तर श्रम करते रहनेसे उनका शरीर उत्तरोत्तर व्याधिग्रस्त एवं अशक्त होता गया। इस कारण वे शक संवत् १८४१ (सन् १९१९ ई०) वैशाख पूर्णिमाके अवसर-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पर अपना भौतिक कलेवर त्यागकर अपने परमाराध्यके शाश्वत आनन्दनिकेतन चरण-कमलोंमें विलीन हो गये।

(८)

भक्त साम्बशिवशास्त्री

भगवान् गणपतिके परम भक्त साम्बशिवशास्त्री द्रविड़ देशके तुकिलो-नामक गाँवमें रहते थे। 'योगीन्द्र-विजय'-नामक ग्रन्थ-रत्नकी प्राप्तिके लिये अङ्कुशधारी महाराजने इनसे पत्र-व्यवहार किया था। इन्होंने उन्हें स्पष्ट लिख दिया था कि 'उक्त ग्रन्थ मेरे पास नहीं है।' किंतु गजाननकी प्रेरणासे सिद्ध मौनी दत्त योगीन्द्रने इन्हें बुलाकर अङ्कुशधारी महाराजको भेजनेके लिये उक्त ग्रन्थ प्रदान किया था, जिसे इन्होंने उनकी सेवामें तुरंत भेज दिया और स्वयं मयूरेश्वरक्षेत्रमें जाकर अङ्कुशधारी महाराजको ग्रन्थ-प्राप्तिकी चामत्कारिक घटनाका विवरण सुनाया। *

परम भक्तियोगी साम्बशिवशास्त्रीने श्रीचोलदेशमें अपना नाम 'श्रीभक्तपालक भक्त' बतलाया था। ये शिवांशरूप माने जाते हैं। तीव्रतम उपासनाके प्रभावसे इन्होंने स्वानन्ददेशकी कृपा प्राप्त की और उसी शक्तिके प्रभावसे ये पाखण्ड-पथका खण्डन करनेमें समर्थ सिद्ध हुए। भगवान् गजमुखके आदेशानुसार मोरेश्वरके 'श्रीब्रह्मभूय महासिद्धि-पीठ'के उद्धारार्थ निर्वाणदीक्षासिद्ध श्रीसाम्बशिवयोगीके बुलाये जानेका उल्लेख मिलता है। इन्हें श्रीपीठपर स्थापित कर अङ्कुशधारी योगीन्द्र इनके शिष्य हुए और इन्हींकी संनिधिमें रहकर उन्होंने भारतधरापर गणेश-सम्प्रदायका प्रचार और प्रसार करनेमें सफलता प्राप्त की।

(९)

भक्त लम्बोदरानन्दस्वामी

कर्‌हाड गाँवके रहनेवाले श्रीरामचन्द्र गणेश जोशी बाल्यकालसे ही भगवान् गजमुखके भक्त थे। वयस्क होते ही इन्होंने मोरगाँव जाकर योगीन्द्रमठके ब्रह्मानन्द योगीन्द्रसे गणेशोपासना और योगीन्द्र सम्प्रदायकी दीक्षा ग्रहण कर ली। इनका साम्प्रदायिक नाम गणेशानन्द था, पर सर्वसाधारणमें ये लम्बोदरानन्दस्वामीके नामसे प्रख्यात हुए।

लम्बोदरानन्दस्वामीके मनमें कुछ कामना थी। इस कारण वे अपने एक मित्रके साथ श्रीपरशुरामजीके दर्शनार्थ यत्र-तत्र भ्रमण करने लगे। इस प्रकार रेणुकानन्दनके दर्शनार्थ उन्होंने पावनतम नर्मदाकी परिक्रमा प्रारम्भ की। एक दिन परिक्रमाके मार्गमें सहसा इनके सम्मुख श्रीपरशुरामजी प्रकट हो गये। श्रीस्वामीजीने अत्यन्त विनयपूर्वक उनसे अपनी कामना व्यक्त की। श्रीपरशुरामजीने उत्तर दिया—'लालसा-पूर्तिके लिये तपश्चरण करो।'

'मैं कहाँ, किस प्रकार तपश्चर्या करूँ?' परम भाग्यवान् लम्बोदरानन्दजीके पूछनेपर स्थान और विधि बतलाते हुए श्रीपरशुरामजीने कहा—'मैंने जिस ब्रह्मगिरि (सह्याद्रि) पर तप किया था, तुम उसी कनकेश्वर-नामक पुण्यक्षेत्रमें रहकर श्रीलक्ष्मी-गणेशकी आराधना करो। वहाँ तुम्हारी कामना पूर्ण हो जायगी।'

इतना ही नहीं, उसी समय श्रीपरशुरामजीने श्रीस्वामीजीको पीतवर्ण शुभ्र संगमर्मरकी श्रीगणेश-लक्ष्मीकी और क्षेम-लाभ-सहित बुद्धि-सिद्धिकी एक छोटी, पर अत्यन्त सुन्दर मूर्ति देते हुए आदेश दिया—'इस प्रतिमाको सम्मुख रखकर ध्यान-धारणा करना। केवल ध्यान-धारणा ही करना; यह मूर्ति पूजाके लिये नहीं है।' इतना कहकर भक्त-हितैषी परम दयालु श्रीपरशुरामजी अन्तर्धान हो गये।

श्रीस्वामीजीने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़कर मन-ही-मन श्रीपरशुरामजीके चरणोंमें प्रणाम किया और वहाँसे कनकेश्वर चल पड़े। यह पुनीत क्षेत्र (कनकेश्वर) कुलाबा जनपदान्तर्गत अलिबाग तहसीलमें प्रसिद्ध है। समुद्रतलसे लगभग २००० फीटकी ऊँचाईपर अवस्थित इस स्थलकी प्राकृतिक छटा अत्यन्त मनोहर है। इस एकान्त, शान्त एवं पावन क्षेत्रसे पश्चिमके विशाल समुद्रका सौन्दर्य दीखता रहता है। करुणामूर्ति पार्वतीवल्लभ शिवका निवास होनेके कारण इस पवित्र भूमिकी बड़ी महिमा है।

लम्बोदरानन्दस्वामी पुण्यभूमि कनकेश्वर पहुँचकर श्रीपरशुरामजीके आदेशानुसार अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति एवं विश्वासपूर्वक श्रीलक्ष्मी-गणेशको संतुष्ट करनेके लिये उनका ध्यान, भजन एवं आराधना करने लगे। भगवान् परशुरामकी अव्यर्थ वाणी यथाशीघ्र फलद सिद्ध हुई। श्रीस्वामीजीका मनोरथ सफल हुआ।

श्रीस्वामीजीने उक्त पवित्र क्षेत्रमें एक सुन्दर गजानन-मन्दिर निर्माण करानेका निश्चय किया। उनके उद्योगसे

* शक संवत् १८३० से १८३३ के मध्य।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गणेश-मन्दिर तैयार हो गया। तदनन्तर उन्होंने श्रीगणेश-प्रतिमाके लिये बड़ोदाके नवकोटनारायण और प्रसिद्ध गणेश-भक्त गोपालराव मैराळसे सम्पर्क स्थापित किया। श्रीमैराळजीने श्रीस्वामीजीकी शुभेच्छाका आदर करते हुए अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक सिद्धि-बुद्धि और क्षेम-लाभसहित श्रीगणेशजीकी सुन्दर मूर्ति कनकेश्वर भिजवा दी। उक्त प्रतिमा शक संवत् १९७८ की ज्येष्ठकृष्ण चतुर्थी (सन् १८७६ ई०) के दिन सविधि स्थापित हुई। श्रीगणेशजीके उक्त विग्रहका नाम 'श्रीरामसिद्धि-विनायक' है। श्रीपरशुरामजीद्वारा प्रदत्त मूर्ति तो उन्हींके आदेशानुसार पूजित नहीं हुई। हाँ, उसका दर्शन अवश्य करा दिया जाता है।

श्रीलम्बोदरानन्दस्वामीने अपना सम्पूर्ण जीवन श्रीरामसिद्धि विनायककी सेवा और आराधनामें व्यतीत किया। उक्त मन्दिरमें प्रायः पूजनोत्सव होता रहता है, किंतु अत्यन्त करुणहृदय श्रीस्वामीजी दूसरेके दुःखका अनुभव करते ही व्याकुल हो जाते थे। वे दीन-दुःखियोंके दुःख एवं रोगियोंके व्याधि-निवारणके कार्यमें भी लगे रहते। गणेशोपासकोंका मार्ग-दर्शन एवं उन्हें प्रत्येक रीतिसे सहयोग प्रदान करना तो उनका परम धर्म था।

श्रीगणेश-प्रीति-प्रतिमा श्रीलम्बोदरानन्दस्वामीने शक संवत् १८२४ की ज्येष्ठ कृष्ण सप्तमी (सन् १९०२ ई०) को समाधि ले ली। उनकी समाधि श्रीरामसिद्धिविनायक-मन्दिरके समीप ही स्थित है।

(१०)

भक्त राघवचैतन्य

भक्त राघवचैतन्य संत तुकारामकी गुरु-परम्पराके आदि पुरुष कहे जाते हैं। ये गिरनारसे महाराष्ट्र गये थे। इन्होंने लेण्याद्रिके समीप भगवान् गणेशकी उपासना की थी। इनकी रचनाओंसे विदित होता है कि ये तन्त्रके साधक थे। 'महागणपतिस्तोत्र'के रचयिता गणपति-भक्त राघवचैतन्य ही थे।

(११)

भक्त गणेश दैवज्ञ

समुद्रके तटपर नन्दिग्राम (नांदगाँव)में जोशी-कुलोत्पन्न ज्यौतिषके प्रसिद्ध विद्वान् कमलाकरभट्ट भगवान् गजमुखके अनन्य भक्त थे। उनके यहाँ प्रतिदिन प्रेम और उत्साह-पूर्वक गणपतिकी उपासना होती रहती थी। उनके पुत्र केशव-भट्ट भारतीय ग्रह-गणितके क्रान्तिकारी पुरुष कहे जाते हैं।

उस समय आर्य, सौर और ब्राह्म—ग्रहगणितके तीन पक्ष थे और प्रत्येक पक्ष अपने दृष्टिकोणसे पञ्चाङ्ग-निर्माण करता था। किंतु अत्यन्त प्रतिभाशाली श्रीगणेशचरणानुरागी केशवभट्टने ग्रहगणित और प्रत्यक्ष व्यवहारमें कुछ अन्तर देखा तो उन्होंने पक्षपात-शून्य होकर ग्रहोंका परिशीलन प्रारम्भ किया। उन्होंने लघु-वेधशाला स्थापित की और प्रत्यक्ष ग्रह-स्थितिका अध्ययन-अनुशीलन करनेके अनन्तर ग्रहगणित-विषयक 'ग्रहकौतुक'-नामक प्रामाणिक ग्रन्थ लिखा, जिसे प्रसिद्ध ज्योतिर्विदोंने भी स्वीकार किया।

किंतु एक बार केशवभट्टके ग्रहणविषयक गणितमें कुछ अन्तर पड़ गया। बस, द्वेष रखनेवाले विपक्षियोंने उनकी आलोचना शुरू कर दी। जब एक मुस्लिम सूबेदारने केशव-भट्टका उपहास किया, तब वे अत्यन्त दुःखी हुए। दुःखके आवेशसे व्याकुल होते ही उन्होंने अपने कुलदेवता श्रीगणेशजीकी आराधना कर अनुष्ठान प्रारम्भ किया और अन्तमें उन्होंने अत्यन्त करुण स्वरसे प्रार्थना की—'प्रभो! उपहाससे मेरा हृदय अधीर और अशान्त हो गया है। मुझे तो केवल आपके मङ्गलमय चरण-कमलोंका ही अवलम्ब है। शीघ्र संतुष्ट हो जानेवाले प्रभु! मुझपर अनुग्रह कीजिये। दयासागर दया कीजिये!'

करुणामय गजमुख प्रसन्न हुए। उन्होंने केशवभट्टसे स्वप्नमें कहा—'तुम्हारे ज्यौतिषकी महत्त्व-वृद्धिके लिये मैं स्वयं तुम्हारे पुत्रके रूपमें प्रकट होऊँगा।'

भाग्यवान् केशवभट्टकी अधीरता और अशान्ति दूर हुई। उनकी व्यथा तो शान्त हुई ही, वे अत्यन्त प्रसन्न होकर निरन्तर मन-ही-मन भगवान् गणेशका ध्यान और स्मरण करने लगे। इस प्रकार भगवान् गणेशकी कृपासे नन्दिग्राम (शकाब्द १४२०)में केशवभट्टकी सौभाग्यशालिनी साध्वी सहधर्मिणी लक्ष्मीदेवीके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। वही बालक भारतवर्षका प्रख्यात ज्यौतिषशास्त्रज्ञ गणेश दैवज्ञके नामसे प्रख्यात हुआ।

गणेश कुलपरम्परानुसार ज्यौतिषके अध्ययन-अनुशीलन-से प्रसिद्ध दैवज्ञ हुए। आकाशके ग्रहोंको देख-देखकर पञ्चाङ्ग-साधनके लिये उन्होंने ग्रहलाघव, लघुनिधिचिन्तामणि, बृहत्-तिथिचिन्तामणि, लीलावतीटीका, सिद्धान्तशिरोमणि-टीका और मुहूर्त्ततत्त्वटीका आदि ग्रन्थोंकी रचना की। साथ ही उन्होंने आर्य, सौर और ब्राह्म—तीनों पक्षोंके ग्रह-गणित-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

शास्त्रकी त्रुटियोंको दूरकर सर्वथा निर्दोष पञ्चाङ्गगणित सर्वसाधारणके लिये सुलभ कर दिया। उक्त शास्त्रको देखते ही तीनों पक्षधरोंने अपना आग्रह छोड़कर ग्रहलाघव गणितका आश्रय ले लिया। 'ग्रहलाघव' ग्रन्थ पञ्चाङ्गशास्त्रका गुरुग्रन्थ स्वीकार किया जाता है। वेधशास्त्रमें गणेश दैवज्ञ भास्कराचार्यसे भी श्रेष्ठ माने जाते हैं। गणेश-भक्त केशवभट्टके आत्मज गणेशकी 'दैवज्ञ' उपाधि सार्थक सिद्ध हुई।

केशवभट्ट एवं उनके सुयोग्य पुत्र गणेश दैवज्ञ—ये दोनों भगवान् गणेशके कृपाफल हैं। इनके निवाससे नांदगाँव भारतीय ज्योतिर्विदोंका तीर्थस्थल बन गया।

गणेश दैवज्ञके पुत्रका नाम भी केशव था और उनके पुत्र (अर्थात् गणेश दैवज्ञके पौत्र)का नाम भी गणेश ही था। उक्त केशवात्मज (गणेश दैवज्ञके पौत्र) गणेशने 'सिद्धान्तशिरोमणि' ग्रन्थकी 'शिरोमणिप्रकाश'-नामक टीका लिखी।

(१२)

हरभटबाबा पटवर्धन

श्रीहरभटबाबाके जन्म एवं देह-त्यागकी सुनिश्चित तिथि विदित नहीं, पर इतना तो निर्विवाद है कि वे रत्नागिरिसे ग्यारह मील दूर कोतवड़े-नामक गाँवमें उत्पन्न हुए थे। बाल्यकालमें ही कटूक्तियोंसे क्षुब्ध होकर उन्होंने घर त्याग दिया और घूमते-फिरते एक सुन्दर गणेश-मन्दिरपर पहुँचे। वहाँ उन्होंने एकभुक्त रहकर गजवक्त्रको प्रसन्न करनेके लिये अनुष्ठान प्रारम्भ किया। कुछ दिनों बाद उन्होंने सोचा, 'इस प्रकार गजानन प्रसन्न नहीं होंगे।' बस, वे केवल दूर्वाङ्कुरका रस ग्रहण कर आराधना करने लगे। दुर्बल हो जानेपर भी वे अपने दृढ़ निश्चयसे विचलित नहीं हुए; श्रद्धा-भक्तिपूर्वक गणेशोपासना करते ही रहे। इस प्रकार कई वर्ष व्यतीत हुए। हरभटबाबाका अनुष्ठान चलता ही रहा।

देवदेव गजमुख प्रसन्न हुए। उन्होंने स्वप्नमें कहा—'तुम्हें विद्या प्राप्त होगी। तुम्हारी दरिद्रता नष्ट हो जायगी और तुम्हारे वंशज राजवैभव प्राप्त करेंगे।'

वरद गणपतिके समस्त आशीर्वचन सर्वथा सत्य प्रमाणित हुए। श्रीहरभटबाबाका विवाह गणपति बुवे स्थानके शेंड्ये शास्त्रीकी पुत्रीके साथ हुआ।

कापशीकर सरदार घोरपड़ेके उपाध्याय होनेके कारण वे उनके साथ कोंकण पहुँचे और इचलकरंजीके जागीरदार नारो महादेवके आश्रयमें रहने लगे। कुछ समय बाद नारो महादेवके पुत्र चि० व्यंकटराव घोरपड़ेका परिणय श्रीमंत पेशवा बालाजी विश्वनाथजीकी सुन्दरी पुत्री अनुबाईके साथ हुआ।

श्रीहरभटबाबा विवाहकी सारी व्यवस्था कर रहे थे। श्रीपेशवा उनके श्रम एवं सद्गुणोंसे अत्यन्त प्रभावित हुए। उन्होंने आग्रहपूर्वक श्रीहरभटबाबाको अपने पास रख लिया। वहाँ हरभटबाबाके सात पुत्र हुए। वे सभी सुयोग्य एवं पराक्रमी हुए। श्रीमंत पेशवाने उनके एक पुत्र गोविन्द पंतकी नियुक्ति सरदारके पदपर कर दी।

इस प्रकार सम्मानित गार्हस्थ्य-जीवनका निर्वाह करते हुए भी हरभटबाबा मनसे सर्वथा विरक्त थे। वे नित्य नियमित-रूपसे श्रीगणेशोपासना करते। कुछ समय बाद तो उन्होंने गृह-त्याग कर सविधि संन्यास ग्रहण कर लिया।

श्रीहरभटबाबाने सम्पूर्ण भारतवर्षकी यात्रा की। तीर्थोंमें स्नान-दर्शन करते हुए वे पूना पहुँचे। वहाँ मूठा नदीके तटपर ओंकारेश्वर-मन्दिरके समीप उन्होंने अपना आश्रम स्थापित कर लिया। त्याग, वैराग्य, उपासना एवं परहित-साधनके कारण वे सर्वप्रिय रहे। श्रीहरभटबाबा पटवर्धन मिरज, सांगली और तासगाँव संस्थानोंके मूल पुरुष स्वीकार किये जाते हैं।

मार्गशीर्षकृष्ण १ श्रीहरभटबाबा पटवर्धनकी पुण्य-तिथि मानी जाती है।

(१३)

गणपति बुवा सावेरकर

रत्नागिरिके समीप शिरगाँव-नामक ग्राममें सदाशिवभट गणेशभट म्हसकर नामक एक आस्तिक पुरुष रहते थे। वे भगवान् गणपतिके अनन्य भक्त थे; किंतु चालीस वर्षकी आयु हो जानेपर भी किसी संतानके न होनेसे चिन्तित रहते थे। वे पुत्र-प्राप्तिकी कामनासे पत्नीसहित श्रीबल्लालेश्वर (जि० कुलाबा) पहुँचे। पति-पत्नी दोनों अत्यन्त श्रद्धापूर्वक कठोर नियमोंका पालन करते हुए भगवान् गजाननकी उपासना करने लगे। म्हसकरजी स्वयं प्रतिदिन तीन सहस्र गायत्री-मन्त्र जपते और अपनी सहधर्मिणीके साथ श्रीगणेशकी २१०० परिक्रमा करते थे। अत्यन्त सात्त्विक जीवन व्यतीत करते हुए वे नियमित रूपसे यह कार्यक्रम चलाते। इस प्रकार इक्कीस वर्षतक पति-पत्नी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वाञ्छितफलदाता श्रीगणेशकी अनवरत उपासना करते ही रहे। श्रीबल्लालेश्वर प्रसन्न हुए। दम्पतिने पुत्र प्राप्त किया। शिशुका नामकरण किया गया—'वासुदेव बुवा।'

उपनयनके अनन्तर वासुदेव बुवाकी शिक्षा प्रारम्भ हुई। उन्होंने ग्यारह वर्षकी आयुमें ही वेदाध्ययन कर लिया। गुरुजीके समीप प्रायः श्राद्ध-भोजनका निमन्त्रण आता; किंतु वासुदेव बुवा गुरुके कहनेपर भी श्राद्धान्न ग्रहण करने नहीं जाते थे। एक बार तो गुरुके श्राद्ध-भोजनका आग्रहपूर्ण आदेश भी उन्होंने अस्वीकार कर दिया, तब क्रुद्ध होकर गुरुने कहा—'तुम्हें जहाँ सात्त्विक राजभोग सुलभ हो, वहीं चले जाओ।'

वासुदेव बुवाने अत्यन्त शान्तिपूर्वक गुरु-चरणोंमें प्रणाम किया और चुपचाप सांगली चले गये। वहाँ उन्होंने मधुकरी माँगकर अपनी शिक्षा पूरी की।

एक बारकी बात है। भीषण गर्मीका मध्याह्नकाल था। वासुदेव बुवा मधुकरी माँगने गये थे। मधुकरी तो प्राप्त हो गयी थी; किंतु तप्त धरतीपर उनके पैर बुरी तरह जल रहे थे। इस स्थितिमें वासुदेव बुवा वेदकी आवृत्ति करते हुए पुण्यतोया कृष्णाके तटपर पहुँचे।

कृष्णा-तटपर कवठेकर-नामक एक योगी बैठे थे। उन्होंने वासुदेव बुवाकी स्थितिका अनुमान कर उन्हें अत्यन्त प्रेमपूर्वक अपने समीप बुलाकर कहा—'बेटा! तू प्रतिदिन इक्कीस दूर्वाङ्कुरोंसे गणेशकी पूजा करना। तुम्हें मोरयाकी कृपा प्राप्त होगी।'

वासुदेव बुवाने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक गणेशकी उपासना प्रारम्भ की। नौ दिनोंके बाद वे श्रीमन्त चिन्तामणिराव अप्पासाहेब सांगलीकरके यहाँ भिक्षार्थ पहुँचे। स्वप्नादेशके अनुसार उन्होंने वासुदेव बुवाको अपने यहाँ रहकर अध्ययन करते रहनेका अनुरोध किया। वासुदेव बुवाने उनके यहाँ रहना स्वीकार कर लिया, किंतु तितिक्षामय वासुदेव बुवाको सम्पन्न परिवारकी सुविधा सह्य नहीं हो सकी। उन्होंने अपनी झोली उठायी और वहाँसे चल दिये। मधुकरी वृत्तिसे अन्यत्र रहने लगे।

योगिराज कवठेकरके पुनः दर्शन हुए तो वासुदेव बुवाने उनके चरणोंमें श्रद्धापूर्वक प्रणाम कर गणेशोपासनाकी दीक्षा प्रदान करनेकी प्रार्थना की। योगिराजने उन्हें दीक्षा देकर आशीर्वाद भी प्रदान किया—'अब मोरया तुम्हारा सर्वत्र कल्याण करेंगे।'

वासुदेव गणेशवाड़ी पहुँचे। वहाँ उन्होंने खेड़ी गणपतिकी सेवा की। फिर कुछ समय बाद वे भूस्वानन्द-क्षेत्र (मोरगाँव) में जाकर कठोर तप करने लगे। वे प्रातःकाल नित्यकर्मसे निवृत्त होकर प्रतिदिन तीन सहस्र गायत्री-जप, तदनन्तर तीन सहस्र उपासना-मन्त्रका जप पूरा कर मधुकरीके लिये निकलते। कुछ समय बाद तो वे माँगी हुई मधुकरी दूसरोंको देकर स्वयं दूर्वाङ्कुरोंका रस पीकर साधन-भजन करने लगे। वे दूर्वाएँ भी स्वयं खेतोंमें जाकर ले आते।

इस प्रकार उन्हें गणेशोपासना करते हुए पूरे नौ वर्ष व्यतीत हो गये। तब माघशुक्ल चतुर्थीको स्वप्नमें प्रकट होकर मयूरेश्वरने उनसे कहा—'तुम्हारी उपासना पूरी हुई। अब तुम लुप्तप्राय गणेशोपासनाके पुनरुज्जीवनका कार्य करो।'

वासुदेवने केवल गणेश-सेवाकी याचना की। तब मयूरेश्वरने कहा—'मैं सदाके लिये तुम्हारे पास आ गया हूँ।' इतना कहकर देवदेव मयूरेश्वरने वासुदेव बुवाके हाथमें एक मन्दार-मूर्ति और उपोषणके पारणार्थ पक्वान्न-पूरित थाली दे दी।

गणेश-भक्त वासुदेव बुवाके नेत्र खुले तो स्वप्नमें प्राणाराध्य मयूरेश्वरप्रदत्त मन्दारमूर्ति और पक्वान्नोंकी थाली देखकर उन्होंने उनकी आज्ञाके पालनका निश्चय किया। उन्होंने सविधि पारण किया और दयाधाम गणेशके आदेशानुसार कार्यमें लग गये। अब वे गणपति बुवाके नामसे सर्वत्र प्रख्यात हो गये।

गणपति बुवाके समीप जानेके लिये अनेक व्यक्तियोंको स्वप्नमें आदेश प्राप्त हुआ। फलतः लोग उनके चरणोंमें उपस्थित होकर उनके कथनानुसार गाणपत्य सम्प्रदायके प्रचारका कार्य करने लगे। बंबईके 'धागजी काका', बड़ोदाके नवकोटनारायण गोपालराव मैराळ, इंदूरके दाजी साहेब किबे, ग्वालियरके सदाशिवभाऊ फडनवीस, संभाजीराव आंग्रे आदि बहुसंख्यक सम्मानित व्यक्ति गणपति बुवाकी सेवामें उपस्थित हो उनके परामर्शके अनुसार गणेश-कार्यमें सहयोग प्रदान करने लगे।

स्वयं गणपति बुवा गाणपत्य सम्प्रदायके प्रचारार्थ सर्वत्र भ्रमण कर रहे थे। वे इंदूर गये। उन्होंने मालवाके काशी-रामेश्वरके मार्गपर अवस्थित सावेर-ग्रामको अपने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पवित्रतम उद्देश्यकी पूर्तिमें उपयोगी समझकर वहीं रहनेका निश्चय किया। वहाँ उन्होंने गजाननकी स्थापना की और एक संस्थानका निर्माण किया। वहाँ अभ्यागतोंके निवास और भोजनकी व्यवस्था की। उक्त संस्थानमें धर्म और जातिका विचार किये बिना अतिथिमात्रको अन्न प्रदान किया जाता था।

मोरगाँवके योगीन्द्रमठके संस्थापक अङ्कुशधारी महाराज-को दीक्षा देनेवाले गणपति बुवा ही थे।

गणपति बुवा अपने अन्तिम श्वासतक गाणेश-मार्गका प्रचार-प्रसार करते रहे। वे श्रावणशुक्ल २, संवत् १९१८ को शरीर त्यागकर अपने आराध्यमें विलीन हो गये।

(१४)

श्रीनागेश्वर बाबा

गणेश-भक्त नागेश्वर बाबाका जन्म सन् १८३८ ई०में महाड (जि० कुलाबा) में हुआ था। उनके व्यवसायी पिता जहाजोंसे माल मँगाने और भेजनेका काम करते थे। अतएव नागेश्वर भी बाल्यकालसे यही काम सीख रहे थे। व्यावसायिक दृष्टिसे अठारह वर्षकी आयुमें उन्हें मालवा जानेका अवसर प्राप्त हुआ। उस समय (सन् १८५७ ई०) उत्तरभारतमें स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिये संग्राम छिड़ा था। युवक नागेश्वर भी उसमें सम्मिलित हो गये।

घटना-विशेषके कारण सहसा उनका मन परिवर्तित हुआ और वे स्वतन्त्रता-संग्रामसे पृथक् होकर तीर्थ-यात्राके लिये चल पड़े। वे अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिसे तीर्थोंमें स्नान, पूजन और दर्शन करते जा रहे थे कि मार्गमें उन्हें एक गोसावी मिले। उन्होंने नागेश्वरको एक शालग्राम देकर श्रीरामोपासनाकी विधि बता दी। नागेश्वर श्रद्धा और विधिपूर्वक प्रतिदिन शालग्रामजीकी पूजा करने लगे।

एक बार वे एक धर्मशालामें ठहरे। वहाँ उनकी अन्य वस्तुओंके साथ शालग्रामजी भी चोरी चले गये। इस घटनासे नागेश्वर अत्यन्त दुःखी हुए। उन्होंने तुरंत उपवास प्रारम्भ कर दिया। श्रीशालग्रामजीके वियोगमें निष्ठापूर्वक उपवास करते समय उन्हें स्वप्नमें आदेश प्राप्त हुआ—'मैं प्रयाग-दुर्गमें अमुक स्थानपर हूँ। तुम वहाँ जाओ।'

नागेश्वर प्रयाग पहुँचे और स्वप्नके आदेशके अनुसार दुर्गके उक्त स्थलको खोदनेपर एक गोल पाषाण निकला। नागेश्वरने वर्तुलाकार पाषाण उठा लिया, पर वे मन-ही-मन सोचने लगे—'मैं इसे किस दृष्टिसे देखूँ? इसका नामकरण क्या करूँ?' इसी प्रकार सोचते हुए वे सो गये। रात्रिमें पुनः स्वप्न हुआ—'पाषाण फोड़ो। उसमें तुम्हारे उपास्यदेव हैं।'

पत्थर फोड़ते ही उससे श्रीगणेशकी मन्दारमूर्ति निकली। नागेश्वरने मूर्तिको मस्तकपर चढ़ाया और तबसे वे नागेश्वर बाबा (और गणपति बुवा करमरकर) कहे जाने लगे। किंतु श्रीगणेशोपासनाके लिये उन्हें मन्त्रकी आवश्यकता प्रतीत हुई। इस कारण वे उज्जैनके समीप सावेर-नामक गणेश-स्थलपर महान् गाणपत्य वासुदेव बुवा म्हसकरके चरणोंमें पहुँचे। उन्होंने कृपापूर्वक नागेश्वर बाबाको दीक्षा दी और फिर वे विधिपूर्वक श्रीगणेशोपासनामें लग गये।

नागेश्वर बाबा उस समय ग्वालियरमें थे। ग्वालियरके तत्कालीन महाराजा जयाजीराव शिंदेजीने ग्वालियरमें ही रहनेके लिये उनसे प्रार्थना की, किंतु नागेश्वर बाबाने सुस्पष्ट कह दिया—'तपश्चरणार्थ नर्मदा-तट श्रेष्ठ है; मैं वहीं जाऊँगा।'

नागेश्वर बाबा चांदोदमें नर्मदा-तटपर पहुँचे; किंतु उस समय उनके छोटे भाई वामनराव बड़ोदामें रह रहे थे। इस कारण बाबा बड़ोदा चले गये। नागेश्वर बाबाके पवित्र चरित्र एवं तपश्चर्यासे बड़ोदा-निवासी अत्यन्त प्रभावित हुए। उनके भावपूर्ण मधुर कीर्तनसे तो श्रोता झूम उठते। नागेश्वर बाबाके कीर्तनमें अधिकांश नगर-निवासी एकत्र होते। वहाँके प्रेमी भक्तोंके अतिशय प्रेमाग्रहके कारण बाबाके लिये वहाँसे बाहर जाना उत्तरोत्तर कठिन होता गया।

उस समय बड़ोदामें महमदवाड़ी-नामक स्थान सुन्दर और श्रेष्ठ था। नागेश्वर बाबाके गुरु-घरानेका एक गणपति-मन्दिर भी उसी क्षेत्रमें था। महागाणपत्य नवकोटनारायण गोपालराव मैराळके ऐश्वर्यसे महमदवाड़ीकी ख्याति सर्वत्र थी। वहीं नागेश्वर बाबाने एक भव्य एवं विशाल गणपति-मन्दिर निर्माण करानेका संकल्प किया। समस्त बड़ोदावासियोंने इस शुभ कार्यके लिये उत्साह प्रकट किया।

सिद्धनाथ सरोवरके पश्चिम सुविस्तृत भागमें मन्दिरकी आधारशिला रखी गयी और कुछ ही समयमें मन्दिर बनकर तैयार हो गया। तदनन्तर मन्दिरमें प्रतिमा प्रतिष्ठित करनेका प्रश्न उपस्थित हुआ। गोपालराव मैराळने नागेश्वर बाबासे निवेदन किया—'मेरे पास शुभ्र संगमर्मरसे निर्मित एक सुन्दर गणेश-प्रतिमा है; किंतु उसके गण्डस्थलपर किंचित्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

काले दाग हैं। इस कारण अबतक वह मूर्ति कहीं स्थापित नहीं की जा सकी।'

नागेश्वर बाबाने उस प्रतिमाको मँगवाकर देखा तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा—'यह तो भगवान् गणपतिके अवतारकी मूर्ति है। सिन्दूरासुरके वधके समय क्रोधावेशमें भगवान् गजाननके गण्डस्थलसे जो मदस्राव होने लगा था, ये काले दाग उक्त मदस्रावके ही चिह्न हैं। इस मन्दिरमें यही दुर्लभ मूर्ति प्रतिष्ठित होगी।'

श्रीनागेश्वर बाबाने श्रावणकृष्ण ५ (संवत् १९२९) के दिन समारोहपूर्वक उक्त मूर्तिकी प्रतिष्ठा करायी। वहाँ उक्त अवतार-मूर्तिकी पूजा-अर्चा विधिपूर्वक की जाती है और प्रतिवर्ष वैशाख पूर्णिमा, ज्येष्ठ शुक्ल चतुर्थी, भाद्रपदशुक्ल चतुर्थी और माघशुक्ल चतुर्थीके अवसरोंपर अत्यन्त उत्साहपूर्वक गणेश-जन्मोत्सव मनाया जाता है।

बड़ोदानरेशके राजवंशके सभी लोग नागेश्वर बाबाको पिता-तुल्य सम्मान प्रदान करते थे। गणेशजीके अनन्य भक्त परम तपस्वी बाबा १५ फरवरी, सन् १९२८ ई० के दिन स्वानन्द-धामवासी हुए।

(१५)

गणेशोपासक गोपालराव मैराळ

गोपालराव मैराळ बड़ोदाके धन-सम्पन्न ब्राह्मण-वंशमें उत्पन्न हुए थे। वे बाल्यकालसे ही भगवान् गणेशके भक्त थे। गोपालराव सदाचार-सम्पन्न तो थे ही, शम, दम, त्याग एवं तितिक्षासे पूर्ण जीवन-निर्वाह करते थे। सम्पत्तिजनित दोष उन्हें स्पर्शतक नहीं कर सके। ब्राह्मण-पुत्र होनेके कारण प्रारम्भमें उन्होंने अध्ययन किया और गार्हस्थ्य-जीवनमें प्रविष्ट होते ही बड़ोदामें अपने आराध्यदेव भगवान् गणपतिका एक सुन्दर मन्दिर निर्माण करवाया।

गोपालरावजी सर्वसाधन-सम्पन्न थे, तथापि श्रीगणेशके विग्रहकी सेवा-पूजा प्रातःकालसे शयनपर्यन्त अत्यन्त श्रद्धा एवं प्रीतिपूर्वक वे स्वयं करते। परशु, कमल, मोदक एवं अभयदयुक्त प्राणाराध्यकी सेवाके बिना उन्हें कुछ भी प्रिय नहीं लगता था और उनके उपास्य देव विनायक उनकी सेवासे संतुष्ट थे, इसका प्रमाण भी प्राप्त हो जाता था।

भगवान् गणेशके अनन्य भक्त गोपालराव प्रतिदिन देवदेव गणेशका षोडशोपचारसे पूजन करते, उन्हें षड्रस नैवेद्य अर्पित करते, तदनन्तर ब्राह्मणोंको भोजन प्रदान कर ही पत्नीसहित प्रसाद ग्रहण करते। गोपालरावने अपने मनुष्य-जीवनका प्रत्येक पल और सम्पत्तिका एक-एक पैसा अपने इष्टकी सेवा-पूजा, उनके मन्दिरोंके जीर्णोद्धार तथा गणेशोपासकोंकी प्रत्येक रीतिसे सत्कार-सहायतामें व्यय किया। वे प्रतिपल गणेश-नामका जप करते रहते। गणेशभक्ति उनके जीवनका आधार थी। वे महाराजा मल्हारराबके दीवान थे।

मैराळ-मन्दिरके द्वारा आज भी उनका पावन स्मरण हो जाया करता है।

(१६)

रघुनाथ महाराज गोडबोले

रघुनाथ महाराज गोडबोलेका जन्म शकाब्द १८०४ की मार्गशीर्ष पूर्णिमाके दिन हुआ था। अत्यन्त प्रतिभाशाली रघुनाथ महाराजके पूर्वके संस्कार अत्यन्त शुभ थे। दसवें वर्षमें ही जब वे पाठशाला जा रहे थे, एकान्त वनमें उन्हें श्रीविट्ठलका प्रत्यक्ष दर्शन हो गया। बस, उन्होंने अध्ययन छोड़कर शास्त्रोक्त उपासना-ज्ञानके लिये काशीकी यात्रा कर दी, किंतु काशीमें किसी योग्य गुरुके न मिलनेसे वे पुनः वापस लौट आये।

परम भाग्यवान् रघुनाथ महाराजको भुसावल गाँवमें जगज्जननी ललिताम्बाने दर्शन देनेकी कृपा की। भगवती जगदम्बाकी सत्प्रेरणासे नांदेड गाँवमें सिद्धपुरीके रहनेवाले नागेश शास्त्रीने उन्हें 'श्रीगुरु-परम्परा'-नामक ग्रन्थ पढ़नेके लिये दिया। श्रीरघुनाथ महाराज संस्कृतसे सर्वथा अपरिचित थे; किंतु जगदीश्वरीके अनुग्रहसे ग्रन्थका स्पर्श करते ही उन्हें संस्कृतका ज्ञान स्वतः हो गया। वे रघुनाथ महाराजके नामसे प्रख्यात हुए।

रघुनाथ महाराज गोडबोले देशाटनके लिये निकले। वे दक्षिण भारत, काश्मीर और नेपाल आदि घूमते हुए बुलडाणा पहुँचे। वहाँ उन्हें गणेश-मन्त्रकी प्राप्ति हुई। उन्होंने अपने समीप आनेवाले स्त्री-पुरुषोंको गणेशाराधनके मार्गमें प्रवृत्त किया। आज भी उनके शिष्य-परिवार भगवान् गजाननकी उपासनामें लगे रहते हैं।

उन्होंने १ अगस्त, सन् १९४६ ई० को समाधि-ग्रहण की।

(१७)

नागेशपण्डित शेष

नागेशपण्डित नांदेडके प्रसिद्ध विद्वान् गोपालपण्डितके पुत्र

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

थे। सद्यःसिद्धिदाता भगवान् गणेशकी इनपर अद्भुत कृपा थी। एक प्रख्यात आख्यायिकामें प्रसिद्ध है कि अपने भक्त नागेशपण्डितके पुत्रको सुलाते समय स्वयं भगवान् गणेश डोरी पकड़कर पालनेको झुलाया करते थे। नागेशपण्डितकी निम्नाङ्कित संस्कृत आरती महाराष्ट्रमें अत्यधिक प्रिय है—

विघ्नध्वान्तविनाशनसुप्रभमुखकमलं
दिव्यज्ञानानन्दितमेकामलरदनम्।
मोदकमोदं देवं जय मङ्गलसदनं
वाञ्छितफलदं वन्दे स्तम्बेरमवदनम्॥
जय देव जय देव जय मङ्गलमूर्ते
दीपार्तीमङ्गीकुरु पूजां सुमुहूर्ते॥
भ्रमदलिकुम्भं शुण्डास्तम्भितमददम्भं
सिन्दूरारुणशोभं कृतरिपुसंक्षोभम्।
शंकरवंशस्तम्भं निर्जितमददम्भं
व्यापितसकलारम्भं वन्दे ब्रह्मनिभम्॥जय देव०॥
वृन्दारकवृन्दैरपि वन्दितपदकमलं
कमलजकमलाधववर्णितगुणगणममलम्।
विद्यामण्डितदेहं पण्डितकुलपालं
शेषस्त्वामहमीडे सततं खलकालम्॥जय देव०॥

'जिनका उत्तम प्रभासे विभासमान मुखारविन्द विघ्नरूपी अन्धकारका विनाश करनेवाला है; जो दिव्य ज्ञान-जनित आनन्दमें मग्न रहते हैं; जिनके एक ही निर्मल दन्त प्रकाशमान है; जो मोदक (मिष्ठान्न)से मुदित होनेवाले देवता हैं; विजय और मङ्गलके आवासस्थान हैं; जिनका मुख हाथीके मुखके सदृश है तथा जो मनोवाञ्छित फल देनेवाले हैं, उन श्रीगणेशकी मैं वन्दना करता हूँ।

'हे मङ्गलमूर्ति देवता! आपकी जय हो, जय हो, जय हो। शुभ मुहूर्तमें आपकी पूजा की गयी है; इसे तथा इस दीपमयी आरतीको आप स्वीकार करें। जय देव! जय देव!

'जिनके कुम्भस्थलपर भ्रमरोंकी भीड़ मँड़रा रही है; जिन्होंने शुण्डदण्डके प्रहारसे मदासुरके दम्भको स्तम्भित कर दिया था; जिनके अङ्गोंपर सिन्दूरकी अरुण शोभा फैल रही है; जिन्होंने शत्रुदलमें हलचल मचा दी थी; जो शंकरकुलके रक्षास्तम्भस्वरूप हैं; जिन्होंने मद एवं दम्भको पराजित कर दिया है; जो सम्पूर्ण कर्मोंके आरम्भमें प्रथमपूज्यके रूपमें व्याप्त हैं; उन ब्रह्मतुल्य महामहिम गणेशकी मैं वन्दना करता हूँ। जय देव! जय देव!

'देवताओंके समुदाय भी जिनके चरणारविन्दोंकी वन्दना करते हैं; ब्रह्मा और विष्णु भी जिनके गुणोंका बखान करते हैं; जिनका स्वरूप निर्मल है; जिनकी देह विद्यासे मण्डित है; जो पण्डितकुलके पालक हैं तथा दुष्टोंके लिये कालरूप हैं, उन आप गणपतिकी मैं नागेश निरन्तर वन्दना करता हूँ। जय देव! जय देव!'

(१८)

गजानन दैवज्ञ

ज्यौतिष-परम्पराके विद्वान् पण्डित गजानन दैवज्ञ नांदेड-निवासी थे। ये राजमान्य दैवज्ञ थे। सद्गुण-सम्पन्न एवं भगवान् गणेशके उपासक थे। इन्हें पुण्यतोया गोदावरीमें श्रीगणेशकी प्रतिमा प्राप्त हुई थी, जिसे दैवज्ञ महोदयने कार्तिककृष्ण ४ (संवत्का पता नहीं) के दिन जोसालगली (नांदेड)में सविधि स्थापित कर दिया। गजानन दैवज्ञ नियमित रूपसे विविध उपचारोंके द्वारा अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक अपने प्राणाराध्य गजवक्त्रकी उपासना करते थे। इन्हें मङ्गलमूर्ति गणेशकी कृपा प्रत्यक्ष प्राप्त थी।

(१९)

रामकृष्ण बापू सोमयाजी

माझा प्राणसखा गणराज।
जो स्मरणमात्रें निजभक्तांचें येउनि करितो काज॥
सुंदर उंदिर वाहन ज्याचें
सिंदुर अंगीं साज॥ माझा प्राण सखा गणराज॥
सिद्धिप्रद मयूरेश्वर - राखी
रामकृष्णाची लाज॥ माझा प्राणसखा गणराज॥

"मेरा प्राणसखा गणराज है, जो केवल स्मरणमात्रसे ही अपने भक्तोंका कार्य करता है। जिसका सुन्दर वाहन 'मूषक' है और जिसके शरीरपर सिन्दूर सुशोभित है, मेरे प्राणसखा गणराज, सिद्धिप्रदाता मयूरेश्वर! 'रामकृष्ण'की लाज रखो।"

× × ×

रामकृष्ण बापू नांदेडके रहनेवाले थे। वे स्वयं पण्डित, कवि एवं अनुष्ठान करनेवाले अत्यन्त सदाचारी पुरुष थे। दामोदरानन्दस्वामी उनके गुरु थे। पण्डित श्रीमयूरेश्वर उर्फ बाबा महाराजके वे विशिष्ट कृपाभाजन थे।

रामकृष्ण बापू भगवान् गणेशके भक्त थे। उन्होंने अपने गुरुके आदेशानुसार 'गुरु-परम्परा'-नामक संस्कृत ग्रन्थ लिखा। उक्त ग्रन्थमें १०७ अध्याय हैं। इसके अतिरिक्त

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

अन्य पद, अभंग और आरती आदि उनकी अनेक रचनाएँ प्राप्त हैं।

शकाब्द १८२२में उन्होंने संन्यास ग्रहण कर लिया। उनकी वस्त्रसमाधि सिद्धनाथपुरीमें उनके घरमें ही है। समाधिके समीप उनकी स्थापित श्रीगणेश-प्रतिमा भी है।

वे गणपतिका भजन करनेके लिये सबको प्रेरणा प्रदान करते रहते थे। वे स्वयं कहते हैं—

गणराज दयाळु भजावा हो ॥
देवी, रवी, हरी, हर संतोषा एकच सतत पुजावा हो ॥ ध्रु० ॥
दुर्लभ जाणुनिया नरदेह विषयसंग त्यजावा हो ॥
रामकृष्ण म्हणे प्रबोधमय तो नच मनांतुनी जावा हो।
गणराज दयाळु भजावा हो ॥

"दयालु गणराजका भजन कीजिये। देवी, सूर्य, विष्णु, शंकर—इन्हें संतुष्ट करनेके लिये निरन्तर इन्हींकी पूजा कीजिये। दयालु गणराजका भजन कीजिये। यह मनुष्य-शरीर अत्यन्त दुर्लभ है, यह जानकर विषय-सङ्गको त्याग दीजिये। 'रामकृष्ण' कहते हैं—ज्ञानमय गणराजका स्मरण होता रहे, उनका मनसे कहीं न जाना हो। दयालु गणराजका भजन कीजिये।"

(२०)

दामोदरानन्द स्वामी

अधिकारी सत्पुरुष एवं कल्याणमूर्ति श्रीगजाननके प्रसिद्ध भक्तोंमें श्रीदामोदरानन्दस्वामीका नाम आदरपूर्वक लिया जाता है। वे संत श्रीशुकानन्द महाराजके शिष्य थे। 'गुरु-परम्परा'-जैसे प्रसिद्ध ग्रन्थके रचयिता गणपति-भक्त कवि रामकृष्ण सोमयाजीके विद्यागुरु थे। इसीसे उनकी विद्या एवं साधन-सम्पन्नताका अनुमान किया जा सकता है।

(२१)

मोरेश्वर शास्त्री जोशी

नांदेड-निवासी मोरेश्वर शास्त्री जोशी न्याय और संस्कृत-के विद्वान् तो थे ही, त्याग, तपस्या एवं गणेश-भक्तिकी जैसे प्रतिमा थे। उनका अधिकांश समय गणेशाराधनमें ही व्यतीत होता। 'नांदेडक्षेत्रविजय'-नामक एक ओवीबद्ध ग्रन्थ उन्होंने शकाब्द १८२६के मध्य लिखा था। 'विघिशकुलजाल मयूरेश्वरवाणी। श्रीगणेशकृपें वदे निर्वाणीं।.....'यह उनका उद्गार है। अन्तमें उन्होंने संन्यास ग्रहण कर लिया था।

इसी प्रकार रामानन्दस्वामी त्रिकुटकर, चिन्तामणि गोसावी, गणपतिस्वामी, प्रमेहशास्त्री और अण्णासाहेब देशपांडे—ये सभी गणपतिके प्रसिद्ध भक्त नांदेड-परिसरमें रहते थे। अपनी परम्पराका निर्वाह करनेवाले ये गणपति-भक्त अपने पवित्रतम कर्मोंसे अत्यधिक यशस्वी हो चुके हैं।

(२२)

श्रीमत् शंकराचार्य शिरोळकर स्वामी (मठ संकेश्वर)

श्रीमत् शंकराचार्य शिरोळकर स्वामी अपने पूर्वाश्रममें भगवान् गणेशके अनन्य भक्त थे। इस कारण उन्होंने पहले मोरगाँव, तदनन्तर चिंचवड़में परमप्रभु गजवक्त्रको संतुष्ट करनेके लिये अत्यन्त कठोर तपस्या की। उनके निष्ठापूर्ण तपसे प्रसन्न मयूरेश्वरने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन देनेकी कृपा की थी।

'श्रीशंकराचार्यके पीठपर अधिष्ठित होकर मैं वैदिक तत्त्वज्ञानका प्रचार-प्रसार करता।'—श्रीस्वामीजीकी यह कामना थी। अपनी इस अभिलाषाकी पूर्तिके लिये उन्होंने चिंचवड़में अत्यन्त कठोर तप किया। उनकी तपस्या सफल हुई। वे शंकराचार्य-पीठपर नियुक्त कर दिये गये।

श्रीशिरोळकर स्वामी अपने पूर्वाश्रममें सुपटु चित्रकार थे। उन्होंने अपने हृदयमें श्रीमोरया गोसावीके जिस स्वरूपका दर्शन किया, उसे चित्रित कर दिया। वह चित्र प्रामाणिक माना जाता है और देऊलवाड़ामें भगवान् श्रीगजाननके विग्रहके निकट दर्शनार्थ सुरक्षित है।

'तूझिये भेटिची बहू आस रे मोरया'—श्रीस्वामीजी जब इस पदका गद्गद कण्ठसे गान करना प्रारम्भ करते तो उनके नेत्रोंसे अश्रु-प्रवाह चलने लगता। उनका मोरया-सम्बन्धी प्रिय श्लोक यह है—

गणेशो वः पायात् प्रणमत गणेशं जगदिदं
गणेशेन त्रातं नम इह गणेशाय महते।
गणेशान्नास्त्यन्यत् त्रिजगति गणेशस्य महिमा
गणेशे मच्चित्तं निवसतु गणेश त्वमव माम् ॥

'गणेश तुमलोगोंकी रक्षा करें; गणेशको प्रणाम करो; गणेशने इस जगत्की रक्षा की है; इस लोकमें महान् देवता गणेशको नमस्कार है; गणेशके सिवा दूसरी कोई वस्तु नहीं; तीनों लोकोंमें गणेशकी महिमा विख्यात है; मेरा चित्त गणेश-में निवास करे और हे गणेश! तुम मेरी रक्षा करो।'

उक्त श्लोकमें गणेश शब्दका सभी विभक्तियोंमें प्रयोग हुआ है। श्रीशिरोळकर स्वामीकी समाधि मोरगाँवमें मयूरेश्वर-मन्दिरके पिछले प्राङ्गणमें है।

(२३)

भक्तराम मल्हारि

गणेश वाङ्मयोपासकोंमें भक्तराम मल्हारि (अथवा मल्हारी) का नाम विशेषरूपसे प्रख्यात है। 'श्रीमद्गणेशगायत्री-जप-विधानम्'-नामक उनके प्रसिद्ध ग्रन्थसे उनकी उपासना-मार्गकी योग्यता समझी जा सकती है। 'छप्पन गणेश-स्थान'-नामक (मराठी भाषामें) उनका एक प्रसिद्ध 'कटाव' है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भक्तराम मल्हारिके कुलदेवता मल्हारि थे, पर उनके उपास्यदेव गणेश थे। उनकी रचनाएँ तो प्राप्त होती हैं, किंतु उनके समयका पता नहीं चलता। मराठीमें भगवान् गणेश एवं चतुर्थी-व्रत आदिपर उनके अनेक सुन्दर पद प्राप्त हैं।

गणेश-स्तवन

गजानन गजानन भज रे मना,
अशी काय नरतनु येईल पुन्हां ॥
विषयाचें सुख येथें वाटे तुज जरि गोड।
परि अवघड पुढें यमयातना ॥ गजानन० १ ॥
घटांत गं गंगारे छटांत गं गंगारे,
पटांत गं गंगारे, नटांत गं गंगारे ॥ गजानन० २ ॥
वनांत गण गंगारे, जनांत गण गंगारे,
मनांत गण गंगारे, खणांत गं गंगारे,
भक्तराम चिंतन उमजुनि प्रातःस्मरणा
गजवदना ॥ गजानन० ३ ॥

चतुर्थी-व्रत

विघ्नेशा व्रत हे चतुर्थी बरवि कां
माझा (माझी) न पुरवि ॥ १ ॥
भक्तां मङ्गल गौरवि सुखकरवि।
अज्ञानता दूर करवि ॥ २ ॥
कार्या लागुनि गौरवि
तरि भक्तजना तरवि ॥ ३ ॥
ते मी वर्णित शांभवि शुभ रवि।
मल्लारी नामें कवि ॥ ४ ॥

(२४)

इस्लामपुरकर

प्रख्यात गणपति-उपासकोंमें इनका नाम लिया जाता है। ये प्रसिद्ध कीर्तनकारोंके वंशज थे और स्वयं भी अत्यन्त सुन्दर कीर्तन करते थे। कहा जाता है, रेटरे (महाराष्ट्र)में अब भी उनके वंशज रहते हैं।*

—शिवनाथ दुबे

भगवद्भक्तोंकी अलौकिक महिमा

भगवान्‌के भक्त भगवत्स्वरूप ही होते हैं। उनकी मन-बुद्धि लीलामय भगवान्‌में ओत-प्रोत रहती है और मन एवं बुद्धिद्वारा ही इन्द्रियादिका व्यापार परिचालित होता है। इसलिये भक्तोंके कार्य-कलाप और विचार-व्यापारको भी भगवान्‌की ही लीलाके तुल्य समझना चाहिये। जैसे भगवान्‌के धाम, लीला-क्षेत्र आदि तीर्थस्थल हैं, उसी प्रकार भक्तोंके निवास-स्थान और कर्म-क्षेत्र भी तीर्थ ही बन जाते हैं।

भगवान् प्रेमके कारण भक्तोंके पीछे-पीछे घूमा करते हैं; उनके सुख-दुःखमें अपना सुख-दुःख मानते हैं। उनके लिये अपनी आन-बान और स्वयं श्रीलक्ष्मीजीकी चिन्ता नहीं करते। भक्तोंकी मान-मर्यादा और सुख-दुःखको अपना समझनेका तो उन्होंने मानो अटल व्रत ही ले रखा है—

हम भगतन के भगत हमारे।
सुन अरजुन ! परतिग्या मेरी, यह व्रत टरत न टारे ॥

ऐसे महामहिम, भाग्यवान् और भगवत्स्वरूप भक्तोंके स्मरण-ध्यानमात्रसे ही पाप-राशि भस्म हो जाय, मुक्ति दासीकी तरह पीछे-पीछे घूमे और प्रभुके चरणोंमें अचल मति, रति और गति प्राप्त हो जाय तो कौन-सा आश्चर्य है। भगवान्‌की तरह महापुरुषोंके ध्यानसे भी कल्याण हो सकता है। उनके स्वरूपका ध्यान करनेसे उनके भाव, गुण और चरित्र हृदयमें आ जाते हैं, उनका स्वरूप चित्तमें अङ्कित हो जाता है और जैसे प्रकाशके आते ही अन्धकार मिट जाता है, वैसे ही भक्तोंके चरित्र-गुणादिकी स्मृति अन्तःकरणमें आते ही समस्त कलुषको नष्ट कर देती है।

भगवान्‌के भक्तोंकी महिमा अनन्त और अपार है। श्रुति-स्मृति-इतिहास-पुराण आदिमें जगह-जगह उनकी महिमा गायी गयी है; किंतु उसका किसीने पार नहीं पाया। वास्तवमें भक्तोंकी तथा उनके गुण, प्रभाव और सङ्गकी महिमा कोई वाणीके द्वारा गा ही नहीं सकता। शास्त्रोंमें जो कुछ कहा गया है अथवा वाणीके द्वारा जो कुछ कहा जाता है, उससे भी उनकी महिमा अत्यन्त बढ़कर है।

परमश्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

* यहाँ दिये गये गणेश-भक्तोंके अधिकांश चरित्र मराठीके 'श्रीगणेश-कोश'के आधारपर प्रस्तुत किये गये हैं। एतदर्थ हम उक्त कोशके सम्पादक एवं श्रीगणेश-भक्तोंके चरित्र-लेखक महोदयोंके हृदयसे आभारी हैं।—लेखक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशपुराण—एक परिचय

अत्यन्त प्राचीन कालकी बात है। सौराष्ट्रदेशके प्रसिद्ध देवनगरमें शास्त्र-मर्मज्ञ सोमकान्त नामक धर्मपरायण एक नरेश थे। वे अतिशय सुन्दर, विद्वान्, धनवान्, तेजस्वी एवं पराक्रमी थे। उनकी बुद्धिमती, अनिन्द्य सुन्दरी, धर्मपरायणा सती पत्नीका नाम सुधर्मा था। सुधर्माके गर्भसे हेमकण्ठ नामक अत्यन्त सुन्दर, शूर, पराक्रमी एवं विद्या-विनय-सम्पन्न पुत्र उत्पन्न हुआ। हेमकण्ठ अपने माता-पिताके सर्वथा अनुकूल था और वह सोमकान्तके शासन-कार्यमें दक्षतापूर्वक सहयोग प्रदान करता रहता था। रूपवान्, विद्याधीश, क्षेमकर, ज्ञानगम्य और सुबल-नामक पाँच स्वामिभक्त अमात्य भी राजा सोमकान्तकी प्रत्येक रीतिसे सेवा किया करते। सोमकान्तके राज्यमें प्रजा समृद्ध एवं सुखी थी। वह सर्वथा निरापद जीवन व्यतीत करती थी। साधु और ब्राह्मण निश्चिन्त होकर श्रीभगवान्‌की आराधना किया करते थे।

सहसा सोम-तुल्य राजा सोमकान्तको गलितकुष्ठ हो गया। उनके शरीरमें सर्वत्र घाव हो गये। उनसे रक्त और पीब बहने लगा। नरेशने प्रख्यात चिकित्सकोंसे अनेक उपचार करवाये, किंतु उनसे उनको कोई लाभ नहीं हुआ। यशस्वी नरपति अत्यन्त निर्बल तो हो ही गये थे, उनके व्रणोंमें कीड़े पड़ गये और उनसे दुर्गन्ध निकलने लगी।

अत्यन्त दुःखी होकर देवनगर-नरेशने अपना शेष जीवन अरण्यमें जाकर तपश्चरणमें व्यतीत करनेका निश्चय किया। उन्होंने विधिपूर्वक अपने सुयोग्य पुत्र हेमकण्ठको आचार, धर्म और नीतिकी शिक्षा दी। तदनन्तर उसे राज्य-पदपर अभिषिक्त कर दिया। नरेशने अपने परम बुद्धिमान् एवं राजभक्त क्षेमकर, रूपवन्त और विद्याधीश-नामक अमात्यत्रयको युवराजके सहयोगसे सुचारुरूपसे राज्य-संचालनका आदेश प्रदान किया।

तदनन्तर राजा सोमकान्तने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक ब्राह्मणोंकी पूजा की। फिर उन्हें विविध प्रकारके व्यञ्जनोंसे तृप्त कर बहुमूल्य दक्षिणाएँ प्रदान कीं। राजा वनके लिये प्रस्थित हुए तो प्रजावत्सल नरेशके वियोगकी कल्पनासे समस्त प्रजा व्याकुल हो गयी। हेमकण्ठके दुःखकी सीमा नहीं थी। वह प्रजाके साथ रोता हुआ पिताके साथ पीछे-पीछे चल रहा था। किंतु नरेशने अपनी सहधर्मिणी सुधर्मा तथा सुबल और ज्ञानगम्य—दो अमात्योंके अतिरिक्त अन्य सबको समझाकर लौट जानेका आदेश दिया। हेमकण्ठको विवशतः अपनी प्रजाके साथ लौटना पड़ा।

चिन्तित, दुःखी, पीड़ित, निराश और उदास नरेश अपनी पत्नी सुधर्मा और दोनों अमात्योंके साथ वनके कष्ट सहते चले जा रहे थे। सती सुधर्मा अपने पतिकी निरन्तर सेवा किया करती और दोनों मन्त्री उनके लिये फल-फूल ढूँढ़कर ले आते। इस प्रकार यात्रा करते हुए वे सघन वनमें एक सरोवरके तटपर पहुँचे।

सोमकान्त व्रणोंकी पीड़ा और यात्राके कष्टसे लेट गये थे। सुधर्मा उनके चरण दबा रही थी। दोनों मन्त्री फल-मूलके लिये कुछ दूर निकल गये थे।

उसी समय जल भरनेके लिये कलश लिये एक तेजस्वी मुनिकुमार सरोवरके तटपर पहुँचे। सती सुधर्माने उन मुनि-पुत्रसे पूछा—'आप किसके पुत्र हैं और यहाँ कैसे पधारे हैं?'

अत्यन्त मधुर वाणीमें ऋषिकुमारने उत्तर दिया—'मैं महात्मा भृगुकी सती पत्नी पुलोमाका पुत्र हूँ। च्यवन मेरा नाम है। आपलोग कौन हैं और इस निबिड़ वनमें कैसे आये हैं?'

अत्यन्त दुःखी सुधर्माने मुनिकुमारसे अपना विस्तृत परिचय देते हुए कहा—'महात्मन्! परम प्रतापी, समस्त ऐश्वर्योंका उपभोग करनेवाले मेरे स्वामी पता नहीं, किस कर्मका फल भोग रहे हैं? ऋषि स्वाभाविक दयालु होते हैं। आप दयापूर्वक हमारे कल्याणका कोई उपाय कीजिये।' अत्यन्त दुःखके कारण रानीके नेत्रोंसे आँसू बहने लगे।

मुनिपुत्र च्यवनने चुपचाप सरोवरके जलसे कलश भरा और शीघ्रतासे अपने आश्रम पहुँचे। वहाँ महर्षि भृगुने उनसे विलम्बका कारण पूछा तो उन्होंने राजा सोमकान्तकी दुर्दशा और उनकी पत्नीकी अद्भुत सेवाका अत्यन्त करुण वर्णन सुनाया। कृपामय महात्मा भृगुने अपने पुत्रसे कहा—'बेटा! तुम उन लोगोंको यहीं ले आओ।'

च्यवन पुनः सरोवर-तटपर पहुँचे। तबतक राजाके दोनों अमात्य भी वहाँ आ गये थे। च्यवनने महारानीसे कहा—'माता! मेरे तपस्वी पिताने आपलोगोंको आश्रममें बुलाया है।'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुधर्मा अत्यन्त प्रसन्न हुई। वह अपने पति एवं सेवकोंसहित मुनिपुत्रके पीछे-पीछे महर्षिके आश्रमपर पहुँची।

महर्षि भृगुका आश्रम अत्यन्त पवित्र एव सुखद था। उसमें सर्वत्र विविध प्रकारके सुगन्धित पुष्प खिले थे। आश्रममें वृक्षोंपर विविध प्रकारके पक्षी कलरव कर रहे थे। बिडाल, नेवला, बाज, मयूर, सर्प, गज, गाय, सिंह और व्याघ्र आदि सभी प्राणी अपना वैर-भाव त्यागकर एक साथ सुखपूर्वक रह रहे थे। वेद-पाठ हो रहा था और यज्ञ-धूमसे समस्त आश्रम पावनताका विग्रह बना हुआ था।

सोमकान्त, उनकी पत्नी सुधर्मा और दोनों मन्त्रियोंने व्याघ्र-चर्मपर आसीन परम तेजस्वी तपस्वी महर्षि भृगुको देखा तो दण्डकी भाँति उनके चरणोंपर गिर पड़े। नरेशने हाथ जोड़कर निवेदन किया—'प्रभो! आपके दर्शनसे मेरे पुण्य उदित हो गये। मैंने जीवनभर धर्मका पालन किया है, किंतु पता नहीं, मेरे किस महान् पातकसे मेरी ऐसी दुर्दशा हो रही है कि मेरा जीवन दुर्वह हो गया है। मेरे सभी प्रयत्न विफल हो गये हैं। अब मैं आपकी शरणमें हूँ। आपके आश्रममें हिंस्र पशुओंने भी अपना सहज वैर त्याग दिया है। दयामय! आप मुझपर दया करें।'

नरेशके करुण वचन सुन महर्षि भृगु कुछ क्षणोंके लिये ध्यानस्थ हुए और फिर उन्होंने उनसे कहा—'राजन्! तुम चिन्ता मत करो। मैं तुम्हें रोगसे छूटनेका उपाय बताऊँगा। अभी तुमलोग यात्रासे थके हुए हो; स्नान, भोजन और विश्राम करो।'

वहाँ सबने तेल लगाकर स्नान किया और फिर वे भोजन करने बैठे। अनेक प्रकारके सुस्वादु षड्रस व्यञ्जन थे। राजा, रानी और अमात्य उक्त पवित्रतम आहारसे पूर्ण तृप्त हुए और फिर परम त्यागी महर्षि भृगुके आश्रममें राज्योचित व्यवस्थासे चकित-विस्मित नरेश अपनी पत्नी एवं सेवकोंसहित सुकोमल शय्यापर विश्राम करने लगे।

रात्रि व्यतीत हुई। अरुणोदय हुआ। महर्षि भृगु स्नान, संध्या, जप और होम आदिसे निवृत्त हुए ही थे कि दैनिक कृत्य कर राजा सोमकान्तने अपनी सहधर्मिणी सुधर्मा एवं अमात्योंसहित महामुनिके चरणोंमें प्रणाम किया और हाथ जोड़कर उनके सम्मुख बैठ गये।

'राजन्! पूर्वके जिन कुकर्मोंसे तुम्हें गलितकुष्ठकी यह दारुण यातना सहनी पड़ रही है, उसे बता रहा हूँ; तुम ध्यानपूर्वक सुनो!' करुणहृदय महात्मा भृगु राजा सोमकान्तको उनके पूर्वजन्मका वृत्तान्त सुनाते हुए कहने लगे—"विन्ध्यगिरिके निकट कोल्हार-नामक सुन्दर नगरमें चिद्रूप-नामक एक धन-वैभव-सम्पन्न वैश्य था। पतिके अनुकूल जीवन व्यतीत करनेवाली उसकी सुन्दरी पत्नीका नाम सुभगा था। तुम उसी सुभगाके पुत्र थे। तुम्हारा नाम था, कामद।

एकमात्र पुत्र होनेके कारण माता-पिताने तुम्हारा अतिशय प्रीतिपूर्वक पालन किया। युवक होनेपर कुटुम्बिनी-नामक सुन्दरी और सद्धर्मपरायणा युवतीसे तुम्हारा विवाह हुआ। कुटुम्बिनीके गर्भसे तुम्हारे सात कन्याएँ और पाँच पुत्र उत्पन्न हुए।

कुछ समय बाद तुम्हारे पिता चिद्रूपका शरीरान्त हो गया। तुम्हारी पतिपरायणा माता सुभगा अपने पतिके साथ सती हो गयी। तुम धन-सम्पन्न और पूर्ण स्वतन्त्र थे। दुराचरणमें तुमने अपना सर्वस्व नष्ट कर दिया। यहाँतक कि घर भी बिक गया। तुम्हारी सरला पत्नी समझाती, पर तुम उसकी उपेक्षा कर देते। विवशतः वह अपनी संततियोंके साथ अपने पिताके घर जाकर जीवन-निर्वाह करने लगी।

तुम दुराचरण-सम्पन्न सर्वथा निरंकुश थे। बलपूर्वक दूसरेका धन छीनकर मद्य, मांस और परस्त्रीका सेवन करते। तुम्हारी दुष्टता पराकाष्ठापर पहुँच गयी, तब राजाज्ञासे तुम नगरसे निर्वासित कर दिये गये। तुम वनमें पहुँचे। वहाँ तुम दस्यु-जीवन व्यतीत करने लगे। तुमसे भयभीत होकर मनुष्य ही नहीं, पशु भी प्राण बचाकर भागते थे।

तुम पर्वतकी गुफामें रहते थे। तुम्हारे श्वसुरने तुमसे भयभीत होकर तुम्हारी पत्नी और बच्चोंको तुम्हारे पास पहुँचा दिया। तुम्हारी पत्नीके पास वस्त्राभरण थे और तुम्हारे पुत्र भी तेजस्वी थे; किंतु तुम रात्रिमें यात्रियोंको लूटकर उनके धन और स्त्रीका उपभोग करते।

तुम सर्वथा निर्दय और हृदयहीन हो गये थे। एक बार एक ब्राह्मण अपनी युवती पत्नीके साथ उधरसे जा रहे थे। तुमने उन्हें पकड़ लिया। ब्राह्मणने करुण प्रार्थना की, धर्मोपदेश दिया, पर तुमपर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। तुमने उन दीन ब्राह्मणदेवताका मस्तक उतार लिया। इस प्रकार तुम प्रति-दिन स्त्री, वृद्ध और बालकोंकी निर्दयतापूर्वक हत्या करते ही रहे। तुम सर्वथा विवेक-भ्रष्ट हो गये थे।

तुम्हारा यौवन तो हत्या, लूट, परधन एवं परदारा-पहरणमें बीता; पर देखते-ही-देखते वृद्धावस्था आ गयी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तुम निर्बल हो गये। तुम्हारा शरीर काँपने लगा और तुमको अनेक प्रकारके कष्ट होने लगे। इस स्थितिमें तुम्हारा स्वजन या हितैषी कोई नहीं रहा। पुत्र और नौकर आदि सभी तुम्हारा तिरस्कार करते रहते।

तुम निरन्तर दुःखी रहने लगे। तुमने सोचा, 'अपना शेष धन दान कर दूँ।' तुम्हारी प्रार्थनासे एक ब्राह्मण वनमें गये। उनकी प्रार्थनापर ऋषिगण तुम्हारे पास आये, पर जब तुमने अपना धन उन्हें स्वीकार करनेके लिये आग्रह किया तो वे तुरंत उल्टे पैर वापस चले गये। सबने एक ही बात कही—'तेरे-जैसे अधम, हत्यारे, मद्यप, परस्त्रीगामी एवं क्रूरतम पापात्माका दिया धन लेनेका साहस कौन करेगा!'

तुम रोगाक्रान्त थे। मुनियों और ब्राह्मणोंके वचन सुन मन-ही-मन पश्चात्ताप करने लगे। तुम्हारा हृदय हाहाकार कर रहा था, पर कोई वश नहीं था। तुम्हारे पास चाँदी, सोना और रत्नादि अधिक थे। तुमने ब्राह्मणोंके परामर्शसे एक पुरातन गणेश-मन्दिरका जीर्णोद्धार करवाया। मन्दिरके भव्य और आकर्षक बनवानेमें तुम्हारा सारा धन समाप्त हो गया। कुछ तुम्हारी स्त्री और कुछ तुम्हारे पुत्रों और मित्रोंने ले लिया। कुछ ही समय बाद तुम्हारा देहावसान हो गया।

यम-दूतोंने तुम्हें बड़ी यातना दी। यमके पूछनेपर तुमने पहले पुण्यकर्मोंका फल प्राप्त करना स्वीकार किया। फलतः अत्यधिक कान्तिपूर्ण गणेश-मन्दिरका जीर्णोद्धार करानेके कारण तुम सुन्दर राजा सोमकान्त हुए और तुम्हें अत्यन्त रूपवती धर्मपत्नी भी प्राप्त हो गयी।"

सर्वथा निस्स्पृह, परम वीतराग, दयामूर्ति महर्षि भृगु राजा सोमकान्तको उसके पूर्वजन्मका वृत्तान्त सुना रहे थे, किंतु ऋषि-वचनोंपर उन्हें विश्वास नहीं हुआ। राजाके मनमें संदेह उत्पन्न होते ही उनके शरीरसे विविध रंगके पक्षी निकल पड़े और उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग नोच-नोचकर खाने लगे।

दुःखसे छटपटाते हुए राजाने महामुनि भृगुसे करुण प्रार्थना की—'मुनिनाथ! आपके इस वनमें पशु भी अपना सहज वैर त्याग देते हैं, फिर आपकी शरणमें आये मुझ कुष्ठीको ये पक्षी कष्ट क्यों दे रहे हैं? आप कृपापूर्वक मेरी रक्षा करें।'

'तुमने मेरे वचनपर संदेह किया, इस कारण मैंने तुम्हें इतना अनुभव करा दिया। अब ये पक्षी शीघ्र चले जायँगे।' महर्षिने क्षणभर ध्यानस्थ होनेके अनन्तर कहा—'तुम्हारे पातक महान् हैं, तथापि मैं उन्हें दूर करनेका उपाय बताऊँगा।'

'हुँ' महामुनि भृगुके उच्चारण करते ही समस्त पक्षी अन्तर्धान हो गये। तदनन्तर महात्मा भृगुने राजा सोमकान्तको गणेशका 'अष्टोत्तरशतनाम' सुनाया और उससे अभिमन्त्रित जल राजाके शरीरपर छिड़क दिया। उक्त जलका छींटा पड़ते ही राजाकी नासिकासे एक छोटा काले मुखवाला बालक धरतीपर गिर पड़ा। थोड़ी ही देरमें वह अत्यन्त विशाल और भयानक हो गया। उसके मुखसे अग्निकी ज्वालाएँ निकल रही थीं। वहाँ सर्वत्र रक्त और पीब फैल गया। भयाक्रान्त आश्रमवासियोंको भागते देखकर महर्षि भृगुने उस पुरुषसे उसका परिचय पूछा।

उक्त भयानक पुरुषने उत्तर दिया—'मैं प्रत्येक प्राणीके शरीरमें रहनेवाला पापपुरुष हूँ। आपके अभिमन्त्रित जलका छींटा पड़नेसे इस राजाके शरीरसे निकला हूँ। आप मुझे निवास एवं भक्ष्य प्रदान कीजिये; अन्यथा मैं आपके सम्मुख ही सबके साथ इस राजा सोमकान्तको भी खा जाऊँगा।'

महामुनि भृगुने वहाँसे हटकर एक शुष्क आम्रवृक्षके कोटरकी ओर संकेत करते हुए उक्त पापपुरुषसे कहा—'नीच! तू सूखे पत्तोंको खाकर इस कोटरमें रह; अन्यथा मैं तुझे भस्म कर दूँगा।'

महामुनि भृगुकी वाणी सुनकर पापपुरुषने उस वृक्षका स्पर्श किया ही था कि पक्षियोंसहित वृक्ष तुरंत जलकर भस्म हो गया। मुनिसे भयभीत पापपुरुष भी उस भस्ममें छिप गया। इसके अनन्तर महर्षि भृगुने राजा सोमकान्तके समीप जाकर कहा—"जब तुम 'गणेशपुराण' सुनना प्रारम्भ करोगे, तब इस भस्मसे पुनः नया आम्र-वृक्ष उगेगा। जिस प्रकार यह वृक्ष धीरे-धीरे बढ़ता जायगा, उसी प्रकार तुम्हारे पाप भी नष्ट होते जायँगे।"

चकित होकर नरेशने अत्यन्त विनयपूर्वक महर्षिसे पूछा—'मुनिवर! ऐसा पुराण तो मैंने न कहीं देखा और न सुना ही है। वह कहाँ प्राप्त होगा और उसके वक्ता कहाँ हैं?'

दयालु मुनि भृगुने कहा—"पहले उसे वेदगर्भ ब्रह्माने महर्षि व्यासको सुनाया था और उनकी कृपासे वह पापनाशक 'गणेशपुराण' मुझे प्राप्त हुआ। तुम तीर्थमें जाकर पहले 'गणेशपुराण'-श्रवणका संकल्प कर लो।"

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महर्षि भृगुकी आज्ञासे राजा सोमकान्तने प्रख्यात भृगुतीर्थमें स्नान किया और फिर पवित्र मनसे हाथमें जल लेकर संकल्प किया—'मैं श्रद्धा और विधिपूर्वक गणेशपुराण-श्रवण करूँगा।'

राजाके आश्चर्यकी सीमा नहीं थी। संकल्पका जल धरतीपर छोड़ते ही वे पूर्णतया रोगमुक्त होकर पूर्ववत् सुन्दर और तेजस्वी हो गये। गलितकुष्ठकी पीड़ाकी बात तो दूर—शरीरपर उसका कोई चिह्न भी कहीं शेष नहीं रहा।

हर्षमग्न नरेश महामुनिके समीप पहुँचे तो उनके चरणोंपर गिर पड़े। उन्होंने अत्यन्त विनयपूर्वक कहा—'मुनिनाथ! अत्यन्त आश्चर्यकी बात है कि गणेशपुराण-श्रवणके संकल्पका जल छोड़ते ही मेरी सारी व्याधियाँ दूर हो गयीं।'

महामुनिने राजाका हाथ पकड़कर उठाया और उन्हें बैठनेके लिये एक आसन दिया। राजाने हाथ जोड़कर कहा—'दयामय! आपकी दयासे मेरा सारा कष्ट दूर हो गया। अब आप कृपापूर्वक मुझे 'गणेशपुराण'की कथा सुनाइये।'

मुनिवर भृगुने कहा—'राजन्! मैं यह पुराण तुम्हें सुनाता हूँ; ध्यानपूर्वक सुनो।'

महर्षिने पापनाशक परम पावन गणेशपुराणकी कथा प्रारम्भ करनेके पूर्व उसकी निर्विघ्न समाप्तिके लिये सर्वप्रथम गणेश-वन्दना की—

नमस्तस्मै गणेशाय ब्रह्मविद्याप्रदायिने।
यस्यागस्त्यायते नाम विघ्नसागरशोषणे॥
(गणेशपुराण १।१।१)

'जिनका नाम विघ्नोंका समुद्र सोख लेनेके लिये अगस्त्यका काम करता है, उन ब्रह्म-विद्या-प्रदाता गणेशको नमस्कार है।'

इस प्रकार गणेशपुराण गणेश-वन्दनसे प्रारम्भ हुआ।

पुराण-शब्दका साधारण अर्थ है—पुराना। जिस ग्रन्थमें पुरातन कथाओंका संकलन है, वह 'पुराण' है। किंतु 'पुराण' शब्दकी व्याख्या अत्यन्त विस्तृत है। श्रीमद्भागवतके मतानुसार पुराणके दस लक्षण हैं—

सर्गोऽस्याथ विसर्गश्च वृत्ती रक्षान्तराणि च।
वंशो वंशानुचरितं संस्था हेतुरपाश्रयः॥
दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः।
(श्रीमद्भा० १२।७।९-१०)

"पुराणोंके पारदर्शी विद्वान् बतलाते हैं कि पुराणोंके दस लक्षण हैं—'विश्व-सर्ग, विसर्ग, वृत्ति, रक्षा, मन्वन्तर, वंश, वंशानुचरित, संस्था (प्रलय), हेतु (ऊति) और अपाश्रय।'

किंतु श्रीलोमहर्षण सूतने पुराणके निम्नलिखित पाँच लक्षणोंका ही उल्लेख किया है—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंश्यानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥

'मन्वन्तरविज्ञान, सृष्टिविज्ञान, प्रतिसृष्टिविज्ञान, वंश-विज्ञान और वंश्यानुचरितविज्ञान।'

ये पाँचों लक्षण भी पाँच-पाँच प्रकारके बताये गये हैं; किंतु विस्तार-भयसे यहाँ उनका उल्लेख नहीं किया जा रहा है।

'पुराण' अनादि हैं। प्रारम्भमें एक ही पुराण था, पर था अत्यन्त विस्तृत। उसकी श्लोक-संख्या शतकोटि थी। उसे लोकपितामहने ऋषियोंको सुनाया था। फिर वेदार्थ-दर्शनकी शक्तिके साथ अनादिकालीन पुराणको लुप्त होते देखकर भगवान् कृष्णद्वैपायनने पुराणोंका प्रणयन किया। उन्होंने पुराणोंकी श्लोक-संख्या चार लाख कर दी और उन पुराणोंमें निष्ठाके अनुरूप आराध्यकी प्रतिष्ठा कर कृपामूर्ति महर्षि व्यासने चारों वर्णोंके लिये वेदार्थ सहज सुलभ कर दिया।

अष्टादश पुराण प्रसिद्ध हैं, किंतु कुछ विद्वान् उनके महापुराण, उपपुराण, अतिपुराण और पुराण भेद करते हैं और इन प्रत्येककी भी अष्टादश संख्या बतलाते हैं*। इस

* (१) महापुराण—ब्राह्म, पद्म, शिव, विष्णु, भागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, लिङ्ग, वराह, स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड और ब्रह्माण्ड।

(२) उपपुराण—भागवत, माहेश्वर, ब्रह्माण्ड, आदित्य, पराशर, सौर, नन्दिकेश्वर, साम्ब, कालिका, वारुण, औशनस, मानव, कापिल, दुर्वासस, शिवधर्म, बृहन्नारदीय, नारसिंह और सनत्कुमार।

(३) अतिपुराण—कार्तव, ऋजु, आदि, मुद्गल, पशुपति, गणेश, सौर, परानन्द, बृहद्धर्म, महाभागवत, देवी, कल्कि, भार्गव, वसिष्ठ, कौर्म, गर्ग, चण्डी और लक्ष्मी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकार गणेशपुराण अतिपुराण है। किंतु इस पञ्चलक्षणात्मक पुराणकी अपनी विशिष्टता है। आदिदेव गणपतिके उपासकोंका तो यह प्राणप्रिय कण्ठहार है ही, समस्त आस्तिक-समुदायका अत्यन्त प्रिय और आदरणीय ग्रन्थ है। गणेश-साहित्यमें इसका स्थान प्रधान है। 'मुद्गलपुराण'से भी प्राचीन होनेके कारण स्वाभाविक ही इसकी मान्यता अधिक है।

श्रुतियोंमें जिस सर्वात्मा, सर्वत्र, अनादि, अनन्त, अखण्ड-ज्ञान-सम्पन्न पूर्णतम परमात्मा और उनके पञ्चदेवात्मक स्वरूपका वर्णन किया गया है, उसके अनुसार परब्रह्म परमेश्वर गणेशका विस्तृत विवेचन 'गणेशपुराण'में किया गया है। वहाँ आदिदेव गणेशको प्रणवरूपी बताया गया है और कहा गया है कि 'समस्त देवता और मुनि उन्हीं परमप्रभुका स्मरण करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, शिव और इन्द्र उन्हींकी पूजा करते हैं। वे सर्वकारण-कारण प्रभु ही समस्त जगत्के हेतु हैं। उन्हींकी आज्ञासे विधाता सृष्टि रचते हैं, विष्णु पालन एवं शिव संहार करते हैं। उन्हीं परमप्रभुके आदेशसे सूर्यदेव चलते हैं, वायु बहती है, पृथ्वीपर वृष्टि होती है और अग्नि प्रज्वलित होती है। अमित महिमामय प्रभु मङ्गलमय हैं, करुणामय हैं।'

गणेशपुराण दो खण्डोंमें विभक्त है। पूर्वार्ध (उपासना-खण्ड) में ९२ अध्याय और ४०९३ श्लोक हैं। दूसरा उत्तरार्ध (क्रीड़ाखण्ड) १५५ अध्यायमें पूर्ण हुआ है। उसकी श्लोक-संख्या ६९८६ है। इस प्रकार सम्पूर्ण गणेशपुराण २४७ अध्यायों और ११०७९ श्लोकोंमें वर्णित है। पुराणकी दृष्टिसे इसका कलेवर भी लघु नहीं है। इसके प्रधान विषय प्रथमेश्वर गणेश ही हैं।

अत्यन्त प्राञ्जल भाषामें गणेश-स्वरूप, गणेश-तत्त्व, गणेश-महिमा, गणेश-मन्त्र-माहात्म्य एवं गणेशकी सुमधुर लीला-कथाके माध्यमसे महिमामय गणेश-स्तवन 'गणेशपुराण'में इस प्रकार वर्णित हैं कि श्रोता अन्ततक भगवान् गणेशके ध्यानमें तन्मय रहता है। लीला-कथा उसके मर्मको स्पर्श करती चलती है। गणेशपुराणमें आद्यन्त सत्त्वकी प्रतिष्ठा एवं तमका विरोध पाया जाता है। आसुरी प्रवृत्तियोंके विनाश एवं दैवी-सम्पदाओंकी स्थापना एवं वृद्धिके लिये ही गजमुखकी अवतारणा होती है। एक बार ग्रन्थ आरम्भ कर लेनेपर पाठक और श्रोताके लिये उसे बीचमें छोड़ देना सहज सम्भाव्य नहीं होता। किंतु गणेशके गम्भीरतम वचनोंको समझनेके लिये विद्या, बुद्धि एवं गहन विचारके साथ श्रद्धा और भक्ति भी अपेक्षित है।

शौनकमुनिने बारह वर्षोंका ज्ञानयज्ञ किया था। वहाँ अठारह पुराणोंकी मङ्गलमयी कथा हुई थी। उस कथासे अतृप्त ऋषियोंने सूतजीसे श्रीभगवान्की भुवनपावनी लीला-कथा और सुनानेकी प्रार्थना की। तब सूतजीने उन्हें गणेश-पुराण सुनाकर तृप्त किया। यज्ञके नष्ट होनेपर दक्ष अत्यन्त दुःखी थे। उस समय महर्षि मुद्गलने उन्हें गणेशपुराणकी लीला-कथा सुनायी और वहीं ब्रह्मासे सुने हुए महर्षि व्यास-कथित गणेशपुराणको महामुनि भृगुने देवनगर-नरेश सोमकान्तको उनके लौकिक एवं पारलौकिक मङ्गलके लिये सुनानेकी कृपा की।

उपासना-खण्डमें परात्पर परमेश्वर, सच्चिदानन्दघन गणेशका विस्तृत वर्णन है। गणेश जगत्कर्ता, जगत्स्वरूप, जगत्पालक, जगदाधार, सर्वसमर्थ, सर्वान्तर्यामी, सर्वत्र एवं सर्वान्तरात्मा हैं। ब्रह्मादि देव उनकी इच्छाका अनुसरण करते हैं। वे भक्तोंके विघ्नोंका विनाश करनेवाले मङ्गलमूर्ति, मङ्गलालय, विघ्नकर्ता, विघ्नहर्ता एवं विघ्नराज हैं। वे परब्रह्मस्वरूप सर्वानन्द-प्रदाता सर्वानन्दमय हैं।

पितामहने सृष्टि-रचना प्रारम्भ की, उस समय गणेशने उन्हें सहायता प्रदान की। इस वर्णनके अनन्तर महर्षि भृगुने गृत्समद, रुक्माङ्गद एवं त्रिपुरासुरका वृत्तान्त सुनाया। फिर उन्होंने महिमामय 'गणेशसहस्रनाम'का गान किया। इसी 'गणेशसहस्रनाम'के द्वारा भगवान् शंकर त्रिपुर-वध करनेमें सफल हुए।

इसके बाद गणेशपार्थिव-पूजा, गणेश-व्रत, संकष्ट-चतुर्थीव्रत, अङ्गारकचतुर्थीव्रत एवं उसका माहात्म्य सुनाकर महामुनिने सोमकान्तको गणेशद्वारा चन्द्रमाको शाप-प्रदान एवं उनपर अनुग्रहकी कथा सुनायी। तदनन्तर उन्होंने दूर्वा-माहात्म्यका वर्णन किया।

फिर उपासनाखण्डमें पुत्र-प्राप्त्यर्थ संकष्टचतुर्थी व्रतके सोद्यापन वर्णनके अनन्तर तारकासुर-वध, काम-दहन, परशुराम-का तप एवं उन्हें गणेश-दर्शनकी प्राप्ति आदि कथाओंमें सर्वत्र करुणामूर्ति प्रभु गणेशकी करुणा, उनकी भक्तवत्सलता एवं महिमाके दर्शन होते हैं।

(४) पुराण—बृहद्विष्णु, शिव उत्तरखण्ड, लघु बृहन्नारदीय, मार्कण्डेय, वह्नि, भविष्योत्तर, वराह, स्कन्द, वामन, बृहद्वामन, बृहन्मत्स्य, स्वल्पमत्स्य, लघुवैवर्त और पाँच प्रकारके भविष्य।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसके बाद स्कन्दोत्पत्ति, मदनकी पुनरुत्पत्ति, देवर्षि नारदकी प्रेरणासे शेषके द्वारा गजाननकी आराधना एवं स्तुतिका विशद वर्णन करते हुए गजवक्त्रका माहात्म्य गान किया गया है। गजवक्त्रके मङ्गलमय नाम और रूपका निरूपण करनेके साथ उपासनाखण्ड पूरा हुआ है।

इसके अनन्तर गणेशपुराणके उत्तरार्ध (क्रीड़ाखण्ड) में देवाधिदेव गजमुखके अवतरित होकर पृथ्वीका भार उतारनेकी पुण्यमयी कथाका वर्णन किया गया है। उन कथाओंमें गणेशकी बाल-लीलाओं, असुर-संहार एवं भक्तोंकी कामना-पूर्तिका मर्मस्पर्शी चित्रण है। गणेशपुराणके क्रीड़ाखण्ड-के अनुसार सर्वसमर्थ भक्तवत्सल करुणामय गणेश प्रत्येक युगमें त्रैलोक्यविजयी अजेय असुरके वधके लिये अवतरित होते हैं। अनीति, अधर्म एवं अनाचरण-सम्पन्न असुरोंका विनाश होता है और धर्ममूर्ति परमात्मा गजानन धर्मकी स्थापना करते हैं। धरणीका भार उतरता है और दुःखी देवता, ऋषि तथा ब्राह्मणादि प्रसन्न होकर अपने धर्मका पालन करने लगते हैं।

सत्ययुगमें परमप्रभु गणेशका प्रथम अवतार महोत्कट विनायकके रूपमें हुआ था। परमतेजस्वी परमप्रभु विनायकके दस भुजाएँ थीं और सिंह उनका वाहन था। वे महात्मा कश्यपकी परम सती सहधर्मिणी अदितिके यहाँ प्रकट हुए थे। उस अवतारमें उन्होंने देवान्तक और नरान्तक-जैसे दुर्दान्त असुरोंका वध किया था।

त्रेतामें इन त्रैलोक्यत्राता प्रभुने शिव-प्रिया पार्वतीके यहाँ अवतार लिया। उनकी अङ्गकान्ति चन्द्र-तुल्य थी। उनके छः हाथ थे और उनका वाहन मयूर था। उन्होंने माता-पिता, ऋषियों, ऋषिपत्नियों एवं मुनि-पुत्रोंको अलौकिक सुख प्रदान किया। तदनन्तर अनेक असुरोंके साथ वरप्राप्त महादैत्य सिन्धुका वधकर त्रैलोक्यमें धर्मकी स्थापना की। देवता, मुनि, ब्राह्मणों एवं सद्धर्मपरायण पुरुषोंका दुःख दूर हुआ; उन्हें सुख-शान्ति प्राप्त हुई।

द्वापरमें सिन्दूरासुरके क्रूरतम शासनमें त्रैलोक्य विकल-विह्वल हो गया था। देवता और ऋषि आदि तपस्वी गिरि-गुफाओं और अरण्योंमें छिप गये थे। उस समय परमप्रभु विनायक गौरीके यहाँ प्रकट हुए। अपने दिये वचनके अनुसार उन्होंने भगवान् शिवसे कहा कि 'आप मुझे राजा वरेण्यकी सद्यःप्रसूता सहधर्मिणी पुष्पिकाके समीप पहुँचा दें।' आशुतोष शिवकी आज्ञासे नन्दी उन्हें वरेण्य-पत्नी पुष्पिकाके प्रसूति-गृहमें रख आये। वे परमप्रभु अरुणवर्णके थे। उनके चार भुजाएँ थीं और उनका वाहन मूषक था। उनका नाम 'गजानन' प्रसिद्ध हुआ।

महर्षि पराशर एवं उनकी सती धर्मपत्नी वत्सलाने अत्यन्त प्रीतिपूर्वक उन परमप्रभु गजाननका पालन किया। उन दयामयने महादैत्य सिन्दूरको मुक्ति प्रदान कर त्रैलोक्यकी भयानक विपत्तिका निवारण किया।*

तदनन्तर करुणामय गजाननने अपने पिता राजा वरेण्यके अशेष कल्याणके लिये उन्हें अमृतमय उपदेश दिया। वह 'गणेशगीता'के नामसे प्रसिद्ध है। इस गीतामें भगवान् गजाननने सर्वप्रथम सांख्यसारतत्त्वका प्रतिपादन किया है। तदनन्तर कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं कर्मसंन्यास-योगका निरूपण कर योगाभ्यासकी प्रशंसा करते हुए बुद्धि-योग और उपासनायोगका सुविस्तृत वर्णन किया है। फिर करुणामय प्रभु गजाननने विश्वरूपदर्शन एवं क्षेत्रज्ञानज्ञेय-विवेकका अत्यन्त प्रभावोत्पादक निरूपण करते हुए योगोपदेशपूर्ण एवं विविध कल्याणकर वचनोंसे अपना सदुपदेश पूर्ण किया। गोपालनन्दन योगेश्वर श्रीकृष्ण-कथित श्रीमद्भगवद्गीताकी भाँति यह गणेशगीता अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण एवं परमोपयोगी है। श्रीमद्भगवद्गीताके प्रायः समस्त विषय इस गणेशगीतामें आ गये हैं।

इसके अनन्तर गणेशपुराणमें कलिमें होनेवाले अधर्म एवं अनाचारका वर्णन करते हुए इस युगके अन्तमें सर्व-भूतहितैषी गणेशके अवतारका वर्णन है। कलिमें जब पापका साम्राज्य व्याप्त हो जायगा, तब वे प्रभु गणेश श्याम कलेवरमें अवतरित होंगे। उनका नाम 'धूम्रकेतु' होगा। उनके दो भुजाएँ होंगी। अश्वारूढ़ धूम्रकेतु पापोंका सर्वनाश कर धर्मकी प्रतिष्ठा कर देंगे और फिर सत्ययुगके मङ्गलमय चरणोंसे धरती प्रमुदित होगी।

राजा सोमकान्तने यह पुण्यमयी गणेश-लीला-कथा अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक एक वर्षतक सुनी। उस कथा-श्रवणके अद्भुत प्रभावसे वे रोगसे सर्वथा मुक्त एवं परम पवित्र हो गये। उनके लिये पवित्रतम गणेश-लोकसे विमान अवतीर्ण हुआ। गणेश-दूतोंने राजासे उस विमानमें बैठनेकी प्रार्थना की, तब अत्यन्त उपकृत भाग्यवान् राजा सोमकान्तने महर्षि भृगुके चरणोंमें प्रणाम किया और उनकी अनुमति

* दयामय गणेशके इन अवतारोंकी परम पुण्यमयी लीला-कथा इसी अङ्कके 'श्रीगणेश-लीला' शीर्षकमें पढ़नी चाहिये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्राप्त कर अपनी सहधर्मिणी और अमात्यद्वयसहित विमानमें बैठ गणेश-लोकके लिये प्रस्थित हुए। विमानमें आरूढ़ होनेपर राजाके पूछनेपर गणेश-दूतोंने काशी विश्वेश्वरके आवरणगत रहनेवाले छप्पन गणेशका नाम और उनके स्मरणका माहात्म्य सुनाया।

पुराणके अन्तिम अध्यायमें उसके श्रवणका माहात्म्य गान किया गया है। गणेशपुराणके पाठ, श्रवण और उसकी पूजाकी तो अमित महिमा बतायी ही गयी है, ग्रन्थरत्नके लिखने और उसे घरमें रखनेका भी फल बतलाते हुए कहा गया है—

यस्य गेहे गणेशस्य पुराणं लिखितं भवेत्।
न तत्र राक्षसा भूताः प्रेताश्च पूतनादयः॥
ग्रहा बालग्रहा नैव पीडां कुर्वन्ति कर्हिचित्।
तद्गृहं हि गणेशेन रक्ष्यते सर्वदा स्वयम्॥
इदं पुराणं शृणुयात् पूजयेद् वा समाहितः।
तस्य दर्शनतः पूता भवन्ति पतिता नराः॥
(गणेशपुराण २। १५५। ९–११)

इस प्रकार इन ललित कथाओंके माध्यमसे इस पुराणके द्वारा पाठकों एवं श्रोताओंको आसुरी प्रवृत्तियोंसे सतत सजग रहनेकी प्रेरणा तो प्राप्त होती ही है, दैवी सम्पदाओं एवं उनके मूलस्रोत परब्रह्म परमेश्वर गजवक्त्रके चरण-कमलोंमें श्रद्धा और भक्ति भी उदित होती है। उस श्रद्धा-भक्तिसे दयामय गणेश सहज ही द्रवित होकर भक्तका लोक एवं परलोक दोनों—सफल कर देते हैं।* अनन्त जन्मोंकी ज्वाला सदाके लिये शान्त कर अक्षय सुख-शान्ति प्रदान कर देते हैं। निश्चय ही यह गणेशपुराण गणेशोपासकोंके लिये सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ-रत्न है।

—शिवनाथ दुबे

मुद्गलपुराणका परिचयात्मक अध्ययन

(लेखक—श्रीरामलाल)

मुद्गलपुराण महर्षि मुद्गल और प्रजापति दक्षके संवाद-रूपमें महर्षि व्यासकी असाधारण देन है। इसमें आद्यपूज्य श्रीगणेशजीके अमित रहस्यपूर्ण चरित्रका अत्यन्त भक्तिपूर्ण वर्णन सुलभ है। श्रीगणेशजीकी प्रसन्नता और कृपासे ही मुद्गलपुराणका महत्त्व—सारतत्त्व (श्रीगणेशजीके) उपासक और भक्तकी समझमें आ सकता है। श्रीगणेशजी सदा ज्योतिर्मय हैं; वे समस्त ज्योतियोंकी ज्योति—चिन्तामणि हैं—

'सदा ज्योतिर्मयः साक्षाज्ज्योतिषां ज्योतिरुच्यते।'
(मुद्गलपुराण ५। ४०। ४७)

नाम-रूपविहीन श्रीगणेशजीका वेदोंमें वर्णन मिलता है। उनकी उपासनासे ब्रह्मभूयपदकी प्राप्ति होती है। मुद्गलपुराणमें श्रीशिवका श्रीविष्णुके प्रति कथन है—

'योगपूर्णं गणेशाख्यं ब्रह्मभूयपदप्रदम्।'
(२। ३। २२)

श्रीगणेशजी योगियोंके हृदयमें नित्य संस्थित, बुद्धि-प्रकाशक और समस्त सिद्धियोंके प्रदायक हैं। मुद्गलपुराणका समारम्भ ही उनके सिद्धिप्रद मङ्गलमय ध्यानसे किया गया है—

ध्याये स्थिरेण मनसा गणेशं सर्वसिद्धिदम्।
बुद्धिप्रकाशकं पूर्णं योगिनां हृदि संस्थितम्॥
(मुद्गलपुराण १। १। १)

मुद्गलपुराण अत्यन्त प्राचीन पौराणिक वाङ्मय है, जो शौनकके आग्रहसे रोमहर्षण-नामक सूतद्वारा पूर्वकल्पमें नैमिषारण्यमें एकत्र वेदाध्यायी तथा यज्ञपरायण ऋषियोंके सम्मुख प्रकट किया गया था। व्यासके शिष्य सूतने व्यासके श्रीमुखसे सुना हुआ वेदशास्त्रार्थसम्पन्न, सर्वमान्य, सर्वसंशयनाशक मुद्गल-दक्षके संवादरूपमें प्रकट 'मुद्गलपुराण' का निरूपण किया। सूतने कहा—

'सकलं कथयिष्यामि व्यासेन कथितं च यत्।'
(मुद्गलपुराण १। १। ३५)

यह निर्विवाद है कि यह पुराण समस्त महापुराणों तथा उपपुराणोंके रचयिता महर्षि व्यासकी वाणीका ही पुण्य प्रसाद है।

इस पुराणकी भूमिकामें सूतका कथन है कि 'दक्षप्रजापतिने मदोन्मत्त होकर शिवभागविहीन यज्ञका आरम्भ किया। दक्षकी कन्या बिना निमन्त्रणके ही यज्ञमें सम्मिलित हुईं; उनसे अपने पतिदेव शिवका अपमान नहीं सहा गया। रुद्रने विघ्न उपस्थित किया; वीरभद्रने यज्ञ-विध्वंस किया। यज्ञ-विध्वंससे व्याकुल दक्षको मुद्गलमुनिने श्रीगणेशके स्मरणका उपदेश दिया, जिनकी कृपासे यज्ञ पूर्णरूपसे समाप्त हो।' इसी प्रसिद्ध पौराणिक कथासे श्रीमुद्गलपुराणका आरम्भ होता है। इस भूमिकामें मुद्गलका प्रख्यात गणेशभक्तके रूपमें परिचय

* पुराणं हि गणेशस्य काममोक्षप्रदं नृणाम्। (गणेशपुराण २। १५५। २९)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

उपलब्ध होता है। उपर्युक्त दक्ष-यज्ञमें सूर्यके समान प्रकाशमान योगीन्द्र मुद्गलमुनिका आगमन हुआ। वे गणेश-भक्त, सर्ववन्द्य, महायशस्वी और तपोनिधि थे—

तत्राजगाम भगवान् साक्षात् सूर्य इवोदितः।
वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो योगीन्द्रो मुद्गलो मुनिः॥
गणेशभक्तप्रवरः सर्ववन्द्यो महायशाः।
तपसां कर्मणां साक्षान्निधिरेष सनातनः॥

(मुद्गलपुराण १।१।५५-५६)

मुद्गलमुनिने दक्षसे कहा कि 'तुम चिन्ता मत करो; विघ्नराज श्रीगणेशका स्मरण करो; उनसे समस्त कामनाओंकी सिद्धि सुलभ है, कुछ दुर्लभ नहीं है—

मा चिन्तां कुरु भो दक्ष प्रजापालेन्द्रसत्तम।
विघ्नराजं स्मर त्वं वै तेन सर्वं न दुर्लभम्॥

(मुद्गलपुराण १।१।५९)

उन्होंने अमित विस्तारपूर्वक श्रीगणेशके अनेकों अवतार-चरित्रोंका वर्णन कर प्रजापति दक्षको श्रीगणेशजीकी कृपा तथा भक्तिसे सम्पन्न कर दिया।

मुद्गलपुराणके परिचयात्मक अध्ययनके संदर्भमें श्रीमुद्गल-मुनिका संक्षिप्त तथा गणेशभक्तिपरक चरित्रका चिन्तन आवश्यक है। इस पुराणके प्रथम खण्डके अठारहवेंसे इक्कीसवें अध्यायोंमें उनके तपोमय गाणपत्य जीवनकी झाँकी मिलती है। मुद्गलमुनिके तपसे भयभीत होकर इन्द्रने महर्षि दुर्वासाके द्वारा उसे भङ्ग कराना चाहा; दुर्वासाने छः बार परीक्षा लेनेके बाद उन्हें स्वर्ग-प्राप्तिका वरदान दिया। विमान लेकर देवदूतके उपस्थित होनेपर उससे स्वर्गमें पुण्य क्षीण होनेपर पतनकी बात सुनकर उन्होंने कर्मभूमिपर ही रहनेका संकल्प किया। वे तप करनेके लिये अङ्गिरामुनिके आश्रममें गये। अङ्गिरामुनिने उन्हें ब्रह्मणस्पति श्रीगणेशका स्वरूप समझाया। उन्हें उनके भजनका उपदेश दिया। उनसे श्रीगणेशके अवतारोंका वर्णन किया। उन्होंने मुद्गलको एकाक्षर-मन्त्र प्रदान किया, जिसके जपसे गणेशजीने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया। मुद्गलमुनिके स्तुति करनेपर गणेशजी उन्हें अपनी भक्ति प्रदान कर अन्तर्धान हो गये। मुद्गलपुराणमें उल्लेख है—

न मुद्गलसमो भक्तो गणेशस्य प्रदृश्यते।
न भूतो न भविष्यन् वा भक्तराजः स एकराट्॥

(मुद्गलपुराण १।२०।२४)

शौनककी सूतके प्रति उक्ति है कि 'मुद्गलसे श्रेष्ठ मेरी जानकारीमें कोई दूसरा व्यक्ति नहीं है। उनके द्वारा उक्त मुद्गलपुराण साक्षात् उन्हींका रूप है'—

न मुद्गलसमं किंचिन्मया ज्ञातं परात्परम्।
तेनोक्तं मौद्गलं सूत मुद्गलेन सदृक् परम्॥
वेदशास्त्रपुराणानां नानामतनिकृन्तनम्।
मौद्गलं मुद्गलाकारं सर्वसारप्रकाशकम्॥

(मुद्गलपुराण ९।१८।३-४)

महायोगी मुद्गलद्वारा प्रोक्त मुद्गलपुराण उपपुराण होते हुए भी महापुराणोंसे भी अधिक महत्त्वका निश्चित किया गया है। बिना उसके अध्ययनके गणेशजीका स्वरूप पूर्णरूपसे नहीं समझा जा सकता। साक्षात् श्रीगणेशजीकी स्वीकृति है—

न मौद्गलं विना विप्राः स्वरूपं मे यथार्थतः॥
ज्ञायते केनचित् क्वापि पूर्णं सर्वप्रकाशकम्।

(मुद्गलपुराण ९।४१-४२)

इस पुराणमें ४२८ अध्याय हैं तथा यह नौ खण्डोंमें पूर्ण हुआ है। इसके पहले आठ खण्डोंमें विभिन्न प्रसिद्ध पौराणिक कथाओंसे युक्त क्रमशः श्रीगणेशके आठ अवतार—अष्ट-विनायक—वक्रतुण्ड, एकदन्त, महोदर, गजानन, लम्बोदर, विकट, विघ्नराज और धूम्रवर्णका चरित्र वर्णित है। अङ्गिराने संक्षेपमें मुद्गलसे इन आठ अवतारोंकी ओर संकेत किया, जिनका दक्षके प्रति योगीन्द्र मुद्गलने विस्तारसे मुद्गल-पुराणके उपर्युक्त खण्डोंमें निरूपण किया। अङ्गिराने कहा कि "वक्रतुण्ड' देहके अधिपति हैं, मत्सरासुरको मारने-वाले हैं एवं उनका वाहन सिंह है। 'एकदन्त' देहीके अधिपति हैं, मदासुरहन्ता हैं और मूषक उनका वाहन है। 'महोदर' ज्ञान-ब्रह्म-प्रकाशक हैं, मोहासुरके विदारक हैं एवं मूषक उनका वाहन है। 'गजानन' ज्ञानियोंके सिद्धिदाता हैं, लोभासुरके प्रहारक हैं तथा मूषकवाहन हैं। 'लम्बोदर' क्रोधासुरके नाशक हैं, शक्तिब्रह्म हैं और मूषकवाहन हैं। 'विकट' कामासुरके नाशक हैं, उनका वाहन मयूर है; वे सौरब्रह्मधर हैं। 'विघ्नराज'का वाहन शेष है, ममतासुरके नाशक हैं तथा विष्णुब्रह्म हैं। 'धूम्रवर्ण' अभिमानासुरके नाशक हैं, उनका वाहन मूषक है, वे शिवात्मा हैं। (मुद्गलपुराण १।२०।५-१२) में इसका वर्णन मिलता है।

मुद्गल-दक्षके संवादरूपमें वर्णित यह पुराण भवरोग-नाशक है। सूतका कथन है—

'सारं सर्वत्र सम्पूर्णं भवरोगविमोचनम्॥'

(मुद्गलपुराण १।२।४)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इस पुराणका नवाँ खण्ड तो साक्षात् पूर्णयोगप्रदायक है। केवल इसीके श्रवणसे समस्त शेष आठ खण्डोंके श्रवणका फल प्राप्त हो जाता है—

नवमः सर्वदः साक्षात् पूर्णयोगप्रदायकः ॥
एकस्य श्रवणेनैव खण्डस्यास्य महामते।
सम्पूर्णमुद्गलस्थं यत् फलं प्राप्नोति मानवः ॥
(मुद्गलपुराण २ । ४० । १-२)

गणेशजीके परमभक्त मुद्गलने दक्षसे कहा कि 'गणेशजी देवेश्वर, सर्वादिपूज्य और सर्वपूज्य हैं। उनका ज्येष्ठराज-नाम वेद-प्रतिपादित है'—

ज्येष्ठराजेति यद्वाक्यं वेदेन प्रतिपादितम्।
ज्येष्ठभावाच्च तस्यापि ज्ञातव्यं सर्वसम्मतम् ॥
(मुद्गलपुराण १ । ५ । ५)

इसके प्रथम खण्डमें ५४ अध्याय हैं। इसमें वक्रतुण्ड-चरित्र निरूपित है। प्रकृति-पुरुषद्वारा सृष्टिकी रचना श्रीगणेशकी कृपासे ही सम्भव हो सकी।...विराट् पुरुषने स्थावर-जङ्गम जगत्की सृष्टि की। विराट् पुरुषसे ही पञ्चदेवोंकी उत्पत्ति हुई। उसके मुखसे विष्णु, नेत्रसे शिव, नाभिसे ब्रह्मा, वामाङ्गसे मोहिनी शक्ति और दक्षिणाङ्गसे रविकी उत्पत्ति हुई। पञ्चदेवोंने विघ्नराज गणेश-की स्तुति की। उनको वरदान देकर गणेशजी अन्तर्धान हो गये। पाँचोंमें एक दूसरेसे बड़ा होनेकी स्पर्धा उत्पन्न हुई। अन्तमें शक्तिने समाधान किया—

'वयं पञ्च समा नाथ नान्तरं दृश्यते क्वचित्।'
(मुद्गलपुराण १ । १४ । २८)

श्रीगणेशने उनको दर्शन दिया। पञ्चदेवोंने उनकी स्तुति की—

नमस्ते वक्रतुण्डाय त्रिनेत्रं दधते नमः।
चतुर्भुजाय देवाय पाशाङ्कुशधराय च ॥
(मुद्गलपुराण १ । १५ । १०)

मुद्गलपुराणके प्रथम खण्डमें यह निरूपित है कि उपर्युक्त पञ्चदेव श्रीगणेशके कृपापूर्ण वरदानसे अपने-अपने कार्यमें तत्पर रहते हैं।

श्रीवक्रतुण्डने मत्सरासुरका नाश किया। मत्सरासुरने कठोर तपके द्वारा शंकरको प्रसन्न कर अभय वरदान प्राप्त किया। उसने आकाश, पाताल और मृत्युलोकपर आधिपत्य प्राप्त कर लिया, ब्रह्मा, विष्णु और शंकरजीके लोकोंपर विजय प्राप्त की तथा ब्रह्माण्डपर उसका अधिकार हो गया। इन्द्रपदपर अधिकार कर उसने सर्वत्र सुयोग्य प्रधान-प्रधान दैत्योंको त्रैलोक्यके शासनका दायित्व सौंपा। ब्रह्मयोगी दत्तात्रेयकी सम्मतिसे शंकरजीने गणेशकी आराधना की। देवता और ऋषि आदि भी उनकी आराधनामें तत्पर हो गये। इसपर वक्रतुण्ड प्रकट हो गये। वे परम तेजस्वी और सिंहपर सवार थे। देवताओंने प्रार्थना की कि 'हे देव! आप मत्सरासुरका नाश कीजिये; हमलोग उससे अत्यन्त उत्पीड़ित हैं।' गणेशजीने मत्सरासुरके नाशका वचन दिया। देवताओं और दैत्योंमें भयानक युद्ध छिड़ गया। वक्रतुण्ड सिंहारूढ़ होकर युद्धभूमिमें आये। उन्होंने मत्सर-दैत्यसे कहा कि 'यदि तुम देवोंका विद्वेष छोड़ दोगे तो मैं तुम्हारा वध नहीं करूँगा।' मत्सर उनके शरणागत हो गया। उनकी स्तुति की। उसने शान्ति प्राप्त की। देवता और ऋषियोंने भगवान् वक्रतुण्डकी स्तुति की—

सदा ब्रह्मभूतं विकारादिहीनं विकारादिभूतं महेशादिवन्द्यम्।
अपारस्वरूपं स्वसंवेद्यमेकं नमामः सदा वक्रतुण्डं भजामः ॥
(मुद्गलपुराण १ । ३९ । २)

गणेशजीने ब्रह्मासे उत्पन्न दम्भ दैत्यका मद शान्त किया। उसने ब्रह्मासे अभयदान पाकर समस्त ब्रह्माण्डपर अधिकार कर लिया। देवताओंको पराजित कर दिया। ब्रह्मा, विष्णु और शंकर—सब-के-सब पीड़ित हो उठे। देवोंसहित ब्रह्माने दम्भासुरके नाशके लिये गणेशजीका ध्यान किया। वे प्रकट हो गये और दम्भके नाशका वचन दिया। शुक्रकी सम्मतिसे दम्भासुर श्रीगणेशजीकी शरणमें आ गया। उसने उनकी स्तुति की—

नमस्ते ब्रह्मरूपाय ब्रह्माकारशरीरिणे।
ब्रह्मणे ब्रह्मदात्रे च गणेशाय नमो नमः ॥
(मुद्गलपुराण १ । ४५ । ९)

वह गणेशजीका भक्त हो गया। श्रीगणेशजीने दम्भको शान्तकर देवशक्तिका संवर्धन किया। दम्भासुरके आख्यान-का यही रहस्य है।

श्रीगणेशजीकी पूजाके बिना ही बलिने यज्ञका आरम्भ किया, इससे उसमें विघ्न उपस्थित हुआ। वामनने गणेशजी-को षडक्षर-मन्त्रके जपद्वारा प्रसन्न कर बलिपर विजय प्राप्त की। बलिने पातालका आधिपत्य पाया और इन्द्रने अपना पद प्राप्त किया।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशजीकी कृपासे विश्वामित्रने ब्रह्मर्षिपद प्राप्त किया। विश्वामित्रका आख्यान अत्यन्त ललित ढंगसे इस खण्डमें वर्णित है। याज्ञवल्क्यने उन्हें अभिमान और मत्सरके त्यागकी सीख दी। उन्होंने विश्वामित्रको गणेशद्वारा शिवको फिर काशीमें प्रवेश करानेका आख्यान सुनाया। ब्रह्माने अनावृष्टि-को रोकनेके लिये दिवोदासको काशीका राजा बनाया, वृष्टि हुई। राजाने शंकरसे पार्वतीसहित मन्दरपर रहनेका निवेदन किया। शंकरजी काशीका वियोग सह न सके। शंकरजीने गणेशकी आराधना की। उनको मदरहित और अहंकारशून्य देखकर गणेशजीने दर्शन दिया। शिवजीने उनकी स्तुति की। गणेशजीकी कृपासे शंकरजीका काशीमें आगमन हुआ। शंकरजीने दिवोदासको मोक्ष प्रदान किया। याज्ञवल्क्यने विश्वामित्रसे कहा—

'शरणं गणराजं तं याहि तेन सुखं भवेत् ॥'

(मुद्गलपुराण १ । ५२ । २८)

याज्ञवल्क्यने उन्हें गणपति-तत्त्वका ज्ञान प्रदान किया। विश्वामित्रने अहंकार और मत्सरका त्याग कर गणेशजीकी प्रसन्नतासे ब्रह्मर्षिपद प्राप्त किया।

वक्रतुण्डका चरित्र भुक्ति-मुक्तिप्रद और सिद्धिदायक है। इसके श्रवणसे पापका नाश होता है।

मुद्गलपुराणके दूसरे खण्डमें चौहत्तर अध्याय हैं। इसमें भगवान् एकदन्तका चरित्र वर्णित है। एकदन्तका माहात्म्य भुक्ति-मुक्तिप्रद है। ब्रह्मा विष्णुके नाभि-कमलपर आसीन थे कि चारों ओर जल उमड़ पड़ा। सृष्टि-रचनामें व्यवधान उपस्थित होनेपर उन्होंने गणेशजीसे रक्षा करनेकी प्रार्थना की। उन्होंने वटपत्रपर गणेशजीका बाललरूपमें दर्शन किया। ब्रह्माने उनकी स्तुति की—

नमस्ते गणनाथाय प्रलयाम्बुविहारिणे।
वटपत्रशयायैव हेरम्बाय नमो नमः ॥

(मुद्गलपुराण २ । १ । ३२)

ब्रह्माजीने श्रीगणेशकी कृपासे सृष्टि की। इसी खण्डमें श्रीगणेशजीकी प्रसन्नतासे विष्णुद्वारा मधु-कैटभ-वधकी कथा वर्णित है। स्वायम्भुव मनुके दोनों पुत्रों—प्रियव्रत और उत्तानपादके आख्यानके अन्तर्गत जडभरत और ध्रुवके चरित्रपर गणेश-भक्तिपरक प्रकाश डाला गया है। ऋषभके पुत्र भरतने मृगशावकमें स्नेह-निष्ठाके परिणामस्वरूप मृगयोनि प्राप्त की, पुलहाश्रममें ऋषि-मुनियोंका सत्सङ्ग श्रवणकर तथा पुलहद्वारा गणेश-मूर्तिके पूजनसे प्रेरणा पाकर अङ्गिराके कुलमें जडभरतके नाम-रूपमें जन्म लेकर उन्होंने गणेश-भक्तिके प्रभावसे बलिके लिये भद्रकालीके सामने प्रस्तुत किये जानेपर भी प्राणरक्षामें सफलता प्राप्त की। श्रीगणेशका ध्यान करते हुए उन्होंने कपिलाश्रममें उपदेश प्राप्त करनेके लिये शिविकापर आसीन राजा रहूगणके जाते समय उन्हें आत्मज्ञानोपदेश प्रदान किया। मयूरेश-क्षेत्रमें जडभरतको गणेशजीने प्रत्यक्ष दर्शन दिया। जडभरतने उनकी स्तुति की—

नमः शान्तिस्वरूपाय शान्तिदाय कृपालवे।
विघ्नेशाय नमस्तुभ्यं हेरम्बाय नमो नमः ॥

(मुद्गलपुराण २ । २२ । ५)

ध्रुवकी तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवान् नारायणने उन्हें अचल पद प्रदान किया। नारदके उपदेशसे मयूरेश-क्षेत्रमें ध्रुवने षडक्षर-मन्त्रका जप कर तथा गणेश-मूर्तिकी मन्दिरमें स्थापना कर गाणपत्य-पद प्राप्त किया।

दूसरे खण्डमें ही वेन, पृथु आदिका आख्यान वर्णित है। गणेशजीने महिषासुरके पुत्र गजासुरका वध कर देवता और ऋषियोंको अभयदान दिया। उन्होंने मदासुरको शान्त किया। उसने शक्तिसे अभयदान पाकर त्रैलोक्यका अधिपतिपद प्राप्त किया; देवशक्तियाँ पराजित हुईं। मदासुरने प्रमादासुरकी कन्यासे विवाह किया तथा अपने तीनों पुत्र विलासी, लोलुप और धनप्रियके साथ वह त्रैलोक्यका ऐश्वर्य भोगने लगा। यज्ञादि सत्कर्म नष्ट होने लगे। सनत्कुमारने देवताओंको गणेशपूजनका परामर्श दिया और कहा कि 'भगवान् एकदन्त ही बाह्यान्तरस्थित मद दैत्यका विनाश करनेमें समर्थ हैं।'

देवताओंके तपसे धर्मरक्षणमें तत्पर एकदन्तने प्रसन्न होकर मदासुरको शान्त किया। शिव-पार्वतीकी तपस्यासे पुत्र-रूपमें प्रकट होकर गणेशजीने दुर्मति-दैत्यका वध किया।

इसी खण्डमें महर्षि अगस्त्य, कपिल-मुनि आदिके चरित्रका वर्णन है। कपिलके तपसे प्रसन्न होकर गणेशजीने गणासुरका वध किया। भगवान् एकदन्तका चरित्र सर्वसिद्धिकर है—

'सर्वसिद्धिकरं प्रोक्तमेकदन्तचरित्रकम्।'

(मुद्गलपुराण २ । ७४ । २८)

तीसरे खण्डमें इक्यावन अध्याय हैं। इसमें भगवान् गणेशके महोदर-अवतारकी लीलाएँ अङ्कित हैं। मुद्गलने दक्षसे कहा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कि 'महोदर-चरित्रका वर्णन सूर्यने बालखिल्य मुनियोंसे किया। ब्रह्मासे सूर्यको गणेश-तत्त्वका पता चला; सूर्यने उनकी प्रसन्नताके लिये तप किया। उनकी मूर्तिकी स्थापना कर पूजन किया। गणेशने उनको प्रत्यक्ष दर्शन देकर कृतार्थ किया। सूर्यका वचन है—

'पूजयामि सदा देवं गणेशानं भजामि तम्।'

(मुद्गलपुराण ३। ३।-६७)

भगवान् महोदरने मोहासुरको शान्त किया। मोहासुरकी उत्पत्ति भगवान् शिव (के वीर्य)-से बतायी गयी है। सूर्यको तपसे प्रसन्नकर उसने अभयदान तथा त्रैलोक्यका राज्य प्राप्त किया। उसकी पत्नीका नाम मदिरा था। उसके पाँच पुत्र थे। उसकी सेनाने समस्त ब्रह्माण्डको जीत लिया। सूर्यने देवताओंसे कहा कि 'यह दैत्य गणेशके ही हाथसे पराजित होगा।' देवताओंने तपसे गणेशजीको प्रसन्न किया। वे मूषकपर सवार होकर उसे मारने चल पड़े। नारदके उपदेशसे मोहासुरने गणेशकी शरणागति प्राप्त की। गणेशजीने उसको अपने भजनकी सीख दी तथा प्राणियोंको मोहविहीन करनेका आदेश दिया—

स्वस्थाने तिष्ठ दैत्येन्द्र स्वधर्मस्थितमादरात्।
नरं मोहविहीनं च तं कुरुष्व भजस्व माम्॥

(मुद्गलपुराण ३। १०। ४५)

इसी खण्डमें नर-नारायण, मांधाता, अम्बरीष, सगर और भगीरथ आदिका आख्यान वर्णित है। इसमें श्रीरामका अवतार-चरित्र भी निरूपित है। शिवने रामके पूछनेपर गणेश-तत्त्वका वर्णन किया। रामने लक्ष्मणसहित गणेशका भजन कर शान्ति प्राप्त की। रामने उनकी स्तुति की—

'विघ्नेशाय गणानां वै पतये ते नमो नमः॥'

(मुद्गलपुराण ३। २६। ७८)

श्रीगणेशजीके वरदानसे रामने रावणका वध किया। उन्होंने अगस्त्यको बुलाकर गणेशजीकी मूर्ति स्थापित करायी।

इसी खण्डमें पुरूरवा आदिका चरित्र वर्णित है। भार्गव परशुरामने गणेशजीको प्रसन्न कर परशु प्राप्त किया तथा उनके वरदानसे कार्तवीर्यका वध किया।

इस खण्डके उपसंहारमें श्रीकृष्ण तथा पाण्डव-कौरवोंके चरित्रपर प्रकाश डाला गया है। विष्णुने लक्ष्मीसे कहा कि 'मैं अपने कुलदेव गणेशका भजन करता हूँ'—

तारकं सर्वभूतानां सर्वेभ्यः सिद्धिदायकम्।
* * *
कुलदेवं गणेशानं भजामि सर्वभावतः।

(मुद्गलपुराण ३। ४२। १७-१८)

नारायणकी सम्मतिसे लक्ष्मीने गणेशकी आराधना की। गणेशने उन्हें दर्शन दिया और कहा कि 'ज्ञानारि दैत्यके नाशके लिये मैं तुम्हारे पुत्ररूपमें उत्पन्न होऊँगा।' मूर्ति स्थापित कर लक्ष्मीने गणेश-पूजा की।

दुर्बुद्धिके पुत्र ज्ञानारि दैत्यने शंकरसे अभयदान पाकर त्रैलोक्य-विजय की। विष्णुकी सम्मतिसे देवोंने गणेशकी आराधना की। गणेशने लक्ष्मीपुत्र पूर्णानन्दके नाम-रूपमें प्रकट होकर ज्ञानारि दैत्यका नाश कर दिया। भगवान् महोदरका पुण्यचरित्र अज्ञानान्धकारका नाश करता है।

चौथे खण्डमें बावन अध्याय हैं। इसमें लोभासुरके नाशक श्रीगणेशके गजानन-अवतारका वर्णन है। लोभासुरके नाशके लिये देवता और ब्राह्मणोंने 'गणेश-चतुर्थीव्रतका' अनुष्ठान किया। गजाननने प्रकट होकर लोभासुरका नाश किया। मुद्गलने दक्षसे कहा कि 'गजाननका चरित्र योगशान्ति-पदप्रदायक है'—

'गजाननस्य माहात्म्यं योगशान्तिपदप्रदम्।'

(मुद्गलपुराण ४। १। १४)

इस खण्डमें 'संकष्टचतुर्थीव्रत'की महिमापर विस्तारसे प्रकाश डाला गया है। गणेशका भजन वेदोंमें सर्वसिद्धिकर कहा गया है।

वसिष्ठने दशरथसे अनेक चतुर्थीव्रतोंका आख्यान सुनाया। दक्षसे मुद्गलने कहा कि 'कुबेर शिव-पार्वतीका दर्शन करने कैलास गये। वे जगदम्बाके रूपसे मोहित हो गये। देवीको क्रोध आ गया। शोकाकुल कुबेरसे लोभासुरकी उत्पत्ति बतायी गयी है। लोभासुरने तपसे शंकरको प्रसन्न कर अभयदान पाया। उसने त्रैलोक्य-विजय की। रैभ्यकी सम्मतिसे लोभासुरके नाशके लिये देवताओंने तपसे गणेशजीको प्रसन्न किया। लोभासुर गजाननकी शरणमें आ गया, शान्त हो गया। गणेशजीने उसे स्वभक्ति प्रदान की।

ब्रह्माकी जृम्भासे प्रकट सिन्दूरासुरका गजाननने मान मर्दित किया। विघ्नासुर भी गजाननका भक्त हो गया।

पाँचवें खण्डमें पैंतालीस अध्याय हैं। इसमें श्रीगणेशके लम्बोदर-अवतारकी कथा कही गयी है। इसमें असित-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ध्रुवके संवादके रूपमें गणेशभक्तिपरक आख्यान, भस्मासुरके वृत्तान्त आदिका वर्णन है। लम्बोदरद्वारा क्रोधासुरके नाशका वर्णन विशिष्टरूपमें मिलता है। विष्णुके मोहिनीरूपसे शिवके चित्तमें क्रोध आ गया। उन्होंने मनका निग्रह किया। उनसे क्रोधासुरकी उत्पत्ति हुई। क्रोधासुरने रविको तपसे प्रसन्न कर अभयदान और त्रैलोक्य-राज्य प्राप्त किया। वसिष्ठके परामर्शसे देवताओंने उसके नाशके लिये तप किया। गणेशजी प्रकट हो गये। क्रोधासुर उनके शरणागत हो गया। लम्बोदरने उसको शान्त किया। उसने उनकी स्तुति की।

महिषासुरके वधके लिये जगदम्बा शक्तिने श्रीगणेशकी आराधना की। देवीकी स्तुतिसे प्रसन्न होकर गणेशजीने उनको दर्शन दिया। देवीने महिषासुरपर विजयके लिये वर माँगा—

'जयं देहि गणाधीश महिषस्य वधाय वै।'

(मुद्गलपुराण ५। १३। ५८)

देवीने उनकी मूर्ति स्थापित कर पूजा की; महिषासुरका वध किया। देवीभक्त राजा सुरथने तपकर गणेश-भक्ति प्राप्त की। ब्रह्माके श्वाससे उत्पन्न मायाकर दैत्यने उनसे अभयदान प्राप्तकर पाताल आदिको अपने वशमें कर लिया। गणेशने शेषके तपसे प्रसन्न होकर उसके पुत्ररूपमें प्रकट होकर मायाकर दैत्यका वध किया।

इस खण्डमें श्रीगणेशजीकी मानस-बाह्यपूजा, दूर्वा-माहात्म्य आदिका वर्णन उपलब्ध होता है। इसमें गृत्समदकी गणेश-भक्तिका भी निरूपण किया गया है। इसमें 'गार्ग्य-ऐल' के संवादके अन्तर्गत ऐलके गणेशभक्त-रूपमें प्रतिष्ठित होनेकी बात कही गयी है। राजा ऐल गणेशके दर्शनसे ज्योतिःस्वरूप हो गया—

'गणेशदर्शनेनैव ज्योतीरूपो बभूव ह॥'

(मुद्गलपुराण ५। ४५। २८)

इस पुराणके छठे खण्डमें पैंतालीस अध्याय हैं। इस खण्डमें गणेशके 'विकट' रूपका वर्णन किया गया है। इसमें कामासुर, कमलासुर आदिका वृत्तान्त चित्रित है।

कामासुरकी उत्पत्ति विष्णुसे बतायी गयी है। उसने शंकरको तपसे प्रसन्न कर ब्रह्माण्ड-विजय की। उसने महिषासुरकी पुत्रीसे विवाह किया। मुद्गलने कामासुरके नाश-के लिये देवताओंको श्रीगणेशका भजन करनेके लिये परामर्श दिया। देवोंके तपसे प्रसन्न होकर गणेशने मयूरपर आरूढ़ होकर दर्शन दिया; देवताओंने उनसे कामासुरके नाशकी प्रार्थना की। कामासुरने आकाशवाणी सुनी कि 'ब्रह्म मयूरेश्वर तुम्हारा नाश करेंगे।' वह मूर्च्छित हो गया। उसने गणेशकी स्तुति की; गणेशने उसे शान्त किया।

गणेशने सिन्धु असुर और उसके सेनापति कमलासुरका वध किया। महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वतीने भगवान् गणेशकी वन्दना की।

इसके सातवें खण्डमें सोलह अध्याय हैं। इसमें विघ्नराज-का चरित्र निरूपित है। इसमें पार्वतीके हास्यसे उत्पन्न ममासुरका वृत्तान्त वर्णित है। पार्वतीके परामर्शसे गणेशको प्रसन्न कर उसने अभयदान प्राप्त किया। शम्बरासुरकी कन्या मोहिनीका पाणिग्रहण कर उसने त्रैलोक्यका राज्य प्राप्त किया। सत्कर्म—यज्ञादिका उसने विध्वंस किया। देवशक्तियाँ पराजित हुईं। देवताओंने विघ्नराजकी आराधना की। गणेशने दर्शन देकर ममासुरके नाशका आश्वासन दिया। गणेशजीने उसका गर्व-हरण किया। वह शान्त हो गया।

इस खण्डमें लक्ष्मी-विनायक-चरित्र तथा शूर्पकर्णावतार आदिका वर्णन है। एक बार प्रयागमें माघमासमें मकरके अवसरपर उपस्थित दत्तने ब्रह्मा-विष्णु-शंकर आदिको गणेश-तत्त्वका बोध प्रदान किया। उन्होंने कहा—

'गणेशो ब्रह्मणां नाथो वेदेषु परिकीर्तितः।'

(मुद्गलपुराण ७। १३। १८)

इस पुराणके आठवें खण्डमें पचास अध्याय हैं। इसमें धूम्रवर्ण विनायकका चरित्र वर्णित है। इसमें गणेशकी भक्तिद्वारा अहंकारासुरके शान्ति प्राप्त करनेका वृत्तान्त उपलब्ध होता है। 'अहं' असुरकी उत्पत्ति सूर्यसे बतायी जाती है। उसने तपके द्वारा गणेशको प्रसन्न कर अभयदान पाया। उसने दिग्विजय की, त्रैलोक्यका आधिपत्य प्राप्त किया। उसने प्रमदासुरकी कन्या ममतासे विवाह किया। उससे उत्पीड़ित देवताओंने गणेशजीकी आराधना की। धूम्रवर्णने दर्शन दिया। देवताओंने अहंकार दैत्यके नाशकी प्रार्थना की। अहंकारासुर धूम्रवर्णसे पराजित हुआ। उसने गणेश-जीकी स्तुति की, उनकी भक्ति प्राप्त की। देवताओंने अहंकार-को शान्त देखकर गणेशजीकी स्तुति की—

'नमो धूम्रवर्णाय सर्वेश्वराय।' (मुद्गलपुराण ८। ८। ८)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

इसी खण्डमें वर्णित है कि गणेशजीकी कृपासे शिवजीने त्रिपुरासुरको मार डाला। गणेशजीने शिवजीकी भक्तिसे प्रसन्न होकर 'वज्रपञ्जरकस्तोत्र' प्रदान किया। शिवजीने गणेशकी कृपासे अन्धकासुरका नाश किया। इस खण्डमें सब मासोंके लिये गणेशके व्रतानुष्ठानका वर्णन मिलता है तथा मलमास और उसमें गणेश-पूजनके माहात्म्यपर प्रकाश डाला गया है। इसी खण्डमें भक्त वल्लाल आदिकी गणेश-भक्ति निरूपित है।

इस पुराणके अन्तिम नवें खण्डमें इकतालीस अध्याय हैं। यह खण्ड पूर्णयोगप्रदायक है। इसमें अष्टविनायक-चरित्र आदिके माहात्म्य और श्रवणफलपर विचार किया गया है। इसमें मुद्गलमुनिने आठों विनायकोंके योगस्वरूपका वर्णन किया है। मायाका परित्याग करनेपर मनुष्य श्रीगणेश-ब्रह्मका ज्ञान प्राप्त करता है, वह ब्रह्माकार हो जाता है—

'अतो मायां परित्यज्य ब्रह्माकारो भवेन्नरः।'

(मुद्गलपुराण ९। ६। ५१)

इस खण्डमें योगगीताका बारह अध्यायों और ९८९ श्लोकोंमें वर्णन उपलब्ध होता है।

मुद्गलपुराणके अध्ययनसे ज्ञात होता है कि गणेशजी अनादि, सनातन, आद्य ब्रह्म परमात्मा हैं, जिनकी ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा देवता, ऋषि आदि मूर्ति-स्थापना कर उपासनामें निरन्तर तत्पर रहते हैं। वे समानरूपसे असुरों और सुरोंका हित-चिन्तन करते हैं और जिस पक्षमें आसुरी सम्पत्ति बढ़ती है, उसका दमन कर मङ्गलका विस्तार करते हैं। मुद्गलपुराणका स्पष्ट संकेत है कि प्रत्येक मनुष्यके अन्तःकरणमें मत्सर, मद, मोह, काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, ममता और अज्ञानका निवास होता है। इन दुर्गुणोंका श्रीगणेशजीकी आराधनासे नाश होता है। मनुष्य उनकी कृपासे कल्याण प्राप्त करता है। श्रीगणेशजी समस्त विघ्नोंका नाश करते हैं। मुद्गलपुराणका श्रवण कर दक्षने गणेशकी कृपासे अपना अधूरा यज्ञ पूर्ण किया। प्रजापति दक्षने समान-रूपसे ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी प्रसन्नता प्राप्त की। मुद्गल-मुनिने इस पुराणका समापन करते हुए दक्षको समझाया कि 'समस्त चराचर विश्व गणेशमय है; उनका भजन परम श्रेयस्कर है'—

विश्वं चराचरं सर्वं जानीयात्तत्स्वरूपकम्।
सर्वेषां हितभावेन भजेत्तं द्विरदाननम्॥

(मुद्गलपुराण ९। ९। २८)

श्रीगणेशजी दिव्य सम्पत्तिका संरक्षण कर सबको समान-भावसे निष्पक्षरूपमें मङ्गलमयी सिद्धियाँ प्रदान करते हैं। मुद्गलपुराणके पठन-श्रवण और अध्ययनसे मन पवित्र होता है, बुद्धिमें सद्भावका उदय होता है और आत्मा श्रीगणेश-भक्तिमें निमग्न हो उठती है।

गणेशगीताका संदेश

(लेखक—डॉ० जी० वी० दागरे, एम्०ए०, बी०-टी०, पी-एच्० डी०)

दार्शनिक तथा धार्मिक ग्रन्थ 'गणेश-गीता' 'गणेशपुराण'के क्रीडाखण्डका एक भाग है। सिन्दूरासुरका वध कर अपने अवतारके प्रयोजनको पूरा करनेके बाद इहलोकसे प्रयाण करते समय श्रीगणेशजीने अपने पिता वरेण्यके सामने इसका वर्णन किया था। प्रस्तावनामें लिखा है कि 'जब श्रीगणेशजीने सिन्दूरासुरका संहार किया, तब देवताओं और मुनियोंने उनकी स्तुति की। तब राजा वरेण्यने पहचाना कि यह मेरा ही त्यक्त पुत्र है, जिसने यह दुष्कर कार्य कर दिखाया है।' उन्होंने घोर पश्चात्ताप किया और नम्रतापूर्वक उनसे प्रार्थना की कि आप मुझे संसारसे मुक्तिका मार्ग दिखलायें। गणेशजीने राजाको बैठाया और अपना हाथ उनके सिरपर रखकर आशीर्वाद दिया। उनके सारे संशयोंको दूर किया और उन्हें अपना विश्वरूप दिखलाया। तत्पश्चात् राजा वरेण्यने अपना राज-पाट त्यागकर जंगलमें जाकर तप किया और गणेशजीमें लीन होकर परमपदको प्राप्त किया। (गणेशपुराण १३७। २२–६१)।

'गणेशगीता'में ग्यारह अध्याय हैं, जो 'गणेशपुराण'के १३८वें अध्यायसे १४८वें अध्यायतक विस्तृत हैं। गणेशगीता-के उपक्रम और उपसंहारसे पता चलता है कि यह प्रथमतः योगसम्बन्धी ग्रन्थ है, जिसमें चरमतत्त्वकी अनुभूतिकी ओर ले जानेवाले अनुशासन निहित हैं। प्रत्येक अध्यायके अन्तमें पुष्पिकामें कहा गया है कि 'गणेशगीतामें उपनिषदोंके अर्थ गर्भित हैं और यह एक शास्त्र है, जो योगरूपी अमृतका अनुसंधान करता है।' जैसे—

ॐ तत्सदिति श्रीगणेशगीतासूपनिषदर्थगर्भासु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

योगामृतार्थशास्त्रे श्रीमन्महागणेशपुराणे क्रीडाखण्डे गणेश-वरेण्य-संवादे सांख्यसारार्थयोगो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥

'गणेशगीता'पर श्रीमद्भगवद्गीताका प्रचुर प्रभाव परिलक्षित होता है। किंतु दोनोंके उपदेशोंमें विभिन्नता है; क्योंकि दोनोंके लक्ष्यमें अन्तर है। गीतामें अर्जुनको युद्ध करनेके लिये उत्साहित किया गया था, यद्यपि उसने अपने सगे-सम्बन्धियोंकी हत्याकी अपेक्षा सांसारिक जीवनसे ही विराम लेना पसंद किया था। इधर गणेशगीतामें राजा वरेण्यने अपना राजपाट त्याग दिया और वनमें जाकर गणेशगीता-श्रवण कर मुक्ति प्राप्त की। (गणेशगीता १ । ३८)

योगका सिद्धान्त

'गणेशगीता'का उद्देश्य योगकी व्याख्या करना है। उसके प्रारम्भमें राजा वरेण्यने श्रीगणेशजीसे योगका विषय समझानेकी प्रार्थना की है। गणेशजी कहते हैं कि 'राजन्! मैं योगामृतसे पूर्ण गीता कहूँगा; तुम सुनो'—

'शृणु गीतां प्रवक्ष्यामि योगामृतमयीं नृप।'

(गणेशगीता १ । ६)

उपसंहारके श्लोकोंमें गणेशजी कहते हैं—'इस प्रकार मैंने कृपा करके तुम्हें विस्तारपूर्वक साङ्गोपाङ्ग योगशास्त्रका उपदेश दिया, जो योग अनादि-सिद्ध है तथा जिसे मैंने तुम्हारे सिवा और किसीके सामने प्रकट नहीं किया है, मेरेद्वारा कहे गये इस योगका तुम अभ्यास करो। इसे तुम गुप्त ही रखना; इससे तुम्हें अनुत्तम सिद्धि प्राप्त होगी'—

इति ते कथितो राजन् प्रसादाद्योग उत्तमः।
साङ्गोपाङ्गः सविस्तारोऽनादिसिद्धो मया प्रिय ॥
युङ्क्ष्व योगं मयाऽऽख्यातं नाख्यातं कस्यचिन्नृप।
गोपयैनं ततः सिद्धिं परां यास्यस्यनुत्तमाम् ॥

(गणेशगीता ११ । ३५-३६)

प्रारम्भिक अध्यायमें निषेधात्मकरूपसे योगकी व्याख्या की गयी है। जैसे—'श्रीसम्पन्न होना योग नहीं, राजत्वकी प्राप्ति योग नहीं, देवताके रूपमें स्वर्गमें स्थान पाना योग नहीं, अथवा अष्ट-सिद्धियोंकी प्राप्ति भी योग नहीं। योग है—आत्माका ब्रह्ममें विलीन हो जाना, अपने भीतर ब्रह्मका अनुभव करना। ऐसा मनुष्य शिव, विष्णु, शक्ति, सूर्य और मुझ गणेशमें अभेदबुद्धि रखता है तथा मुझको सर्वत्र और सबमें देखता है।' (गणेशगीता १ । ६-२१)

गणेशगीता ब्रह्मानुभूतिकी साधनाका मार्ग बतलाती है और इसको 'योग'के नामसे पुकारती है; चाहे वह ज्ञानयोग हो या कर्मयोग अथवा भक्तियोग। गणेशगीता अध्याय ३। ४७में लिखा है कि 'ज्ञानके द्वारा ही मनुष्य संसारके बन्धनसे मुक्त होकर परम मोक्षको प्राप्त होता है।' आगे अध्याय ४। १५, २१ श्लोकोंमें योगकी व्याख्या इस प्रकार की गयी है—'जिनका आत्म-सम्बन्धी अज्ञान विशुद्ध विवेकके द्वारा प्राप्त ज्ञानसे नष्ट हो गया है, उसे पूर्णब्रह्मकी अनुभूति होती है। वह अपने मन और इन्द्रियोंको पूर्णतः वशमें कर लेता है तथा सारे विकारोंसे मुक्त होकर अपने आत्मामें ही रमण करता हुआ आनन्द प्राप्त करता है।' यथा—

विवेकेनात्मनोऽज्ञानं येषां नाशितमात्मना।
तेषां विकाशमायाति ज्ञानमादित्यवत् परम् ॥
आनन्दमश्नुतेऽसक्तः स्वात्मारामो निजात्मनि ॥

आगे चलकर इसी अध्यायके २५ से ३४वें श्लोकतक राजयोगका वर्णन है। उसीकी व्याख्या करते हुए गणेशजी कहते हैं कि 'श्रेष्ठ प्राणायाम छत्तीस मात्राका होता है। इस प्रकारके बारह प्राणायामसे धारणा होती है और दो धारणाओंसे योग होता है।' तथापि अन्तमें कहा है कि 'योग और संन्यास—दोनों समान फल प्रदान करते हैं तथा जो मुझे त्रिलोकीके अधिपति तथा विभुरूपमें जानता है, वह मुक्ति प्राप्त करता है'—

एवं योगश्च संन्यासः समानफलदायिनौ ॥
जन्तूनां हितकर्त्तारं कर्मणां फलदायिनम्।
मां ज्ञात्वा मुक्तिमाप्नोति त्रैलोक्यस्येश्वरं विभुम् ॥

(गणेशगीता ४ । ३६-३७)

ज्ञानयोग

हम पूर्णताके लक्ष्यको ज्ञानके द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। वह लक्ष्य है—तात्त्विकी आध्यात्मिक प्रज्ञा। 'गणेशगीता' श्रीगणेशजीको परब्रह्म, अविकारी, अप्रमेय, अपरिणामी, अव्यक्त, सर्वव्यापी, आनन्दस्वरूप परतत्त्व मानती है—

अविकारोऽप्रमेयोऽहमव्यक्तो विश्वगोऽव्ययः ॥
अहमेव परं ब्रह्माव्ययानन्दात्मकं नृप।

(गणेशगीता १ । २८-२९)

श्रीगणेशजीका ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवोंके साथ तादात्म्य है। वे एक होकर अनेक रूपोंमें दीखते हैं (एकं नानेव भासते)। वे जगत्में अन्तर्निहित हैं और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सब पदार्थोंमें व्याप्त हैं । वे अजन्मा हैं, अव्यक्त हैं, स्थावर-जङ्गमकी आत्मा हैं, अनादि और परमेश्वर हैं—

अहमेव परो ब्रह्मा महारुद्रोऽहमेव च।
अहमेव जगत्सर्वं स्थावरं जङ्गमं च यत्॥
अजोऽव्ययोऽहं भूतात्मानादिरीश्वर एव च।
(गणेशगीता ३ । ८-९)

तत्त्व अर्थात् आत्माके अस्तित्वकी अनुभूति-विषयक यह ज्ञान इस योगकी नियमित साधनाके द्वारा हृदयंगम होता है। यद्यपि 'ज्ञान'शब्द विज्ञान-सम्बन्धी ज्ञानके लिये प्रयुक्त होता है, तथापि ज्ञानयोग पूर्णत्वका बौद्धिक मार्ग नहीं है; बल्कि यह विशुद्ध लोकातीत आध्यात्मिक प्रज्ञा है। यही आध्यात्मिक प्रज्ञा अग्निके समान सब प्रकारके कर्मोंको क्षणभरमें दग्ध कर देती है—

'विविधान्यपि कर्माणि ज्ञानाग्निर्दहति क्षणात्।'
(गणेशगीता ३ । ४५)

यह परम श्रेष्ठ यज्ञ माना गया है। यह आध्यात्मिक ज्ञान ही सर्वोच्च स्वर्ग अथवा मोक्षका साधन है, जिसमें सारे कर्म विलीन और दग्ध हो जाते हैं—

सर्वेषां भूप यज्ञानां ज्ञानयज्ञः परो मतः।
अखिलं लीयते कर्म ज्ञाने मोक्षस्य साधने॥
(गणेशगीता ३ । ३९)

कर्मयोग

कर्म-विहीन जीवन एक असम्भव बात है । प्रत्येक प्राणी अपनी-अपनी प्रकृतिके अनुसार विवश होकर कुछ-न-कुछ काम करता है ।(गणेशगीता २ । ४) किसी अभिलषित लक्ष्यकी प्राप्तिके लिये जो कर्म किये जाते हैं, वे बन्धनके हेतु हैं। परंतु जो कर्म बिना आसक्तिके अथवा फलाभिलाषा-रहित होकर किये जाते हैं, वे चित्तको शुद्ध करते हैं । बुद्धिमान् पुरुष केवल कर्मोंके न्यासको 'संन्यास' नहीं कहते—

'केवलं कर्मणां न्यासं संन्यासं न विदुर्बुधाः।'
(गणेशगीता ४ । ६)

कर्मोंसे प्राप्त होनेवाले फलकी आशाको त्यागकर जो कर्म किये जाते हैं, वे अकर्मकी अपेक्षा श्रेष्ठ होते हैं। जब कर्म भगवदर्पित नहीं होता, तब वह बन्धनकारक होता है। अतएव मनुष्यको इच्छाओं और आसक्तियोंसे ऊपर उठकर कर्म करते रहना चाहिये। (गणेशगीता २।८)

योगके जाननेवाले चित्तकी शुद्धिके लिये शारीरिक, कर्मफलकी आशाका त्याग करते हैं और अपने-आपको वाचिक, बौद्धिक तथा मानसिक कर्मोंमें लगाये रखते हैं—

कायिकं वाचिकं बौद्धमैन्द्रियं मानसं तथा।
त्यक्त्वाऽऽशां कर्म कुर्वन्ति योगज्ञाश्चित्तशुद्धये॥
(गणेशगीता ४ । १०)

यहाँ यह ध्यानमें रखनेकी बात है कि श्रीशंकराचार्य-जैसे ज्ञानयोगके कट्टर उपदेष्टाने भी चित्तकी शुद्धिके लिये निष्काम कर्मकी क्षमताको स्वीकार किया है।

'ज्ञानेनैव मोक्षः सिध्यति, किंतु तदेव ज्ञानं सत्त्वशुद्धिं विना नोत्पद्यते·····तस्मात् सत्त्वशुद्ध्यर्थं सर्वेश्वरमुद्दिश्य सर्वाणि वाङ्मनःकायलक्षणानि श्रौतस्मार्त्तानि कार्याणि समाचरेत्।' (सनत्सुजातीयभाष्य)

'ज्ञानसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। परंतु वह ज्ञान हृदयकी शुद्धिके बिना उत्पन्न नहीं होता। अतएव हृदयकी शुद्धिके लिये वेद और स्मृतियोंमें बतलाये गये सारे वाचिक, मानसिक और कायिक कर्मोंको श्रीभगवान्‌को समर्पित करते रहना चाहिये।'

गणेशगीता ज्ञानकी प्राप्ति हो जानेके बाद भी लोक-संग्रहके लिये कर्म करते रहनेका आदेश देती है—

'लोकानां संग्रहायैतद् विद्वान् कुर्यादसक्तधीः॥'
(गणेशगीता २ । २५)

सारांश यह है कि यदि एक ज्ञानी पुरुष अहंता और ममतासे विच्छिन्न होनेकी भावनाकी साधना करता है और अपने दैनिक कार्योंको तथा विशिष्ट कर्मोंको प्रभुको समर्पित करता है तो वह परम गतिको प्राप्त करता है—

नित्यं नैमित्तिकं तस्मान्मयि कर्मार्पयेद् बुधः।
त्यक्त्वाहंममताबुद्धिं परां गतिमवाप्नुयात्॥
(गणेशगीता २ । ३०)

भक्तियोग

भगवान् गणेशजी अनुग्रह करनेवाले देवता हैं। वे आत्मविश्वास, प्रेम और भक्तिपूर्वक आत्मसमर्पणके लिये साधकको अनुप्राणित करते हैं। वे तार्किकोंकी आध्यात्मिक खींचतानके परे हैं । यद्यपि योगी ज्ञानीसे, कर्मनिष्ठसे और तपोनिष्ठसे भी श्रेष्ठ होता है, परंतु गणेशजीके मतसे उन सबमें मेरा भक्त पुरुष ही श्रेष्ठतम है—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञाननिष्ठात् तपोनिष्ठात् कर्मनिष्ठान्नराधिप।
श्रेष्ठो योगी श्रेष्ठतमो भक्तिमान् मयि तेषु च॥
(गणेशगीता ५। २७)

गणेशगीता देवमूर्तिकी पुष्पों, फलों और भोजनके पदार्थोंको निवेदन करके, धूप-दीप आदि प्रदान कराके सगुण भक्ति-पूजा करनेपर विशेष जोर देती है। (गणेशगीता ७। ६–१६)

यह नवधा भक्तिके मार्गका उपदेश करती है; परंतु मानसिक पूजाको अधिक महत्त्वपूर्ण मानती है—

'त्रिविधास्वपि पूजासु श्रेयसी मानसी मता।'
(गणेशगीता ७। १०)

भक्ति मनुष्यको वासनाकी प्रबलतापर विजय प्राप्त करानेमें सहायक होती है। इस आत्मसंयमसे वह ज्ञान उत्पन्न होता है, जो साधकको परम गति प्रदान करता है। (गणेशगीता ३। ४७) भक्त भगवान्‌के लिये जीवन धारण करता है, सारे कर्म प्रभुके प्रीत्यर्थ करता है, सारी आसक्ति और मत्सरताका त्याग करता है, सबको समभावसे देखता है और इस प्रकार वह प्रभुके साथ एकत्वको प्राप्त हो जाता है—

मद्भक्तो मत्परः सर्वसङ्गहीनो मदर्थकृत्।
निष्क्रोधः सर्वभूतेषु समो मामेति भूभुज॥
(गणेशगीता ८। २५)

इस प्रकार गणेशगीता भक्तिके मार्गका समर्थन बड़ी दृढ़तापूर्वक करती है।

गणेशगीता अद्वैत शास्त्र है

गणेशगीतामें ऐसे उपदेश हैं, जो अद्वैतको समझनेमें पर्याप्त सहायक हैं। इसमें आध्यात्मिक साधकोंके हृदयंगम करने-योग्य तत्त्वोंका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

१—चरम तत्त्व परमब्रह्म गणेश अद्वयतत्त्व है।

२—यह द्वन्द्वात्मक जगत् मायिक है।

३—आत्मा परमात्माके अतिरिक्त कुछ नहीं है।

४—ज्ञान परमगतिका साधन है, जिसकी प्राप्तिमें कर्म और भक्ति महत्त्वपूर्ण सहायता प्रदान करते हैं।

उपर्युक्त वर्गीकरणके समर्थनमें 'गणेशगीता'से अनेक अवतरण उद्धृत किये जा सकते हैं। परंतु उससे एक पृथक् ही लेख तैयार हो जायगा। यहाँ स्थानाभावके कारण उसका सारांश भी नहीं दिया जा सकता।

'गणेशगीता'के व्यापक प्रचारकी आवश्यकता है। अतः अबतक इसका जैसा अध्ययन हुआ है, उससे कहीं अधिक गम्भीर अध्ययन एवं प्रचारकी भी आवश्यकता है।

श्रीगणेश-साहित्यमें हास्य और व्यङ्ग्य

(लेखक—आचार्य श्रीबलरामजी शास्त्री, एम्० ए०)

साहित्य-शास्त्रमें हास्यरसका बहुत महत्त्व है। साहित्यके क्षेत्रमें शिष्ट हास्य लिखना उत्तम प्रतिभाका द्योतक माना गया है। गणेश-साहित्यमें हास्य-रसका अभाव है। अभावका प्रमुख कारण यही है कि गणेशजी समस्त देवताओंके भी पूज्य हैं, अतः वे हास्यके आलम्बन नहीं बनाये जा सकते। फिर भी यत्र-तत्र हास्यरसके प्रसङ्ग देखनेको मिल ही जाते हैं। एक कविने तो माता पार्वतीकी विशेषता व्यक्त करनेके लिये भगवान् शंकर और उनके परिवारके अन्य सदस्योंके वर्णनमें मानो हास्यरसका घड़ा ही उड़ेल दिया है।

भगवान् शंकर स्वयं पाँच मुखवाले हैं। दो पुत्रोंमें एकका मुख तो हाथीका-सा है और दूसरे पुत्रके छः मुख हैं। ऐसे परिवारके लिये अधिक भोजन-सामग्री चाहिये; वह कैसे जुटायी जाय, यह एक समस्या खड़ी हो जाती है। यह समस्या तब और भी उग्र जान पड़ती है, जब यह ज्ञात होता है कि परिवारका स्वामी 'दिगम्बर' है, उसके पास पहननेके लिये कपड़ेतक नहीं हैं। इस समस्याका हल उस परिवारकी एकमात्र स्त्री सदस्या माता पार्वती करती हैं; क्योंकि वे अन्नपूर्णा हैं; उनके पास अन्नादिका अक्षय भंडार है—

स्वयं पञ्चमुखः पुत्रौ गजाननषडाननौ।
दिगम्बरः कथं जीवेदन्नपूर्णा न चेद् गृहे॥

'जो स्वयं तो पाँच मुखवाला है और जिसके दो पुत्र गजानन एवं षडानन हैं; ऐसा गृहपति, जो वस्त्रतक न मिलनेसे दिगम्बर है, कैसे जीवित रह पाता, यदि उस घरकी गृहिणी अन्नपूर्णा न होतीं।'

हास्यरसका दूसरा कलश छलकता है गजानन और षडानन—दोनों बन्धुओंके बाल-कलहको लेकर। श्लोक प्रस्तुत है—

हे हेरम्ब किमम्ब रोदिषि कथं कर्णौ लुठत्यानिभूः
किं ते स्कन्द विचेष्टितं मम पुरा संख्या कृता चक्षुषाम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

नैतत्तेऽप्युचितं गजास्य चरितं नासां मिमीतेऽम्ब मे तावेवं सहसा विलोक्य हसिता व्यग्रा शिवा पातु वः ॥

गणेश रोते हुए आते हैं । माता पार्वती पूछती हैं—'बेटा हेरम्ब !'

गणेश—'क्या माँ ?'

माता—'तू रोता क्यों है ?'

गणेश—'भैया स्कन्द मेरे कान उमेठते हैं और कहते हैं कि इसके कान इतने लंबे हैं ।' अब माता पार्वती स्कन्दकी ओर मुड़ीं और बोलीं—'क्यों रे स्कन्द ! यह तेरी कैसी शरारत है ?'

स्कन्द—'माँ, इसने पहले मेरी आँखोंकी गिनती की है और चिढ़ाता हुआ कहता रहा है—'अरे ! इसकी तो बारह आँखें हैं ।''

माता पार्वती फिर गणेशकी ओर मुड़कर कहती हैं—'गजानन ! तेरी भी तो यह चेष्टा उचित नहीं कही जा सकती ! क्यों ऐसा किया तूने ?'

गणेश—'नहीं माँ ! ये ही पहले मेरी नाक (सूँड़) नाप रहे थे, तब मैंने इनकी आखें गिनीं ।'

दोनों बालकोंको इस प्रकार सहसा झगड़ते देख माता पार्वती हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाती हैं । वे प्रसन्नमुखी माता शिवा आप सबकी रक्षा करें ।

गजाननजीका वाहन मूषक भी इस परिवारके लिये—विशेषतः गणेशजीके लिये एक समस्या खड़ी कर देता है । भगवान् शंकरके शरीरपर लिपटे विषैले सर्प, 'मूस'की ओर दृष्टि गड़ाये रहते हैं । हाँ, भगवान् शंकरका 'अनुशासन' अवश्य तगड़ा है । बाघ, जो पार्वतीका वाहन है, भगवान् शंकरके वाहन बैलको ताक लगाकर देखता रहता है और षडाननका वाहन 'मयूर' भगवान् शंकरके आभूषण बने हुए सर्पोंको लपककर निगल जाना चाहता है । परिवारके सभी वाहन परस्पर एक-दूसरेके शत्रु हैं । इसपर महाकवि विद्यापतिने एक स्थानपर लिखा है—

"एक बार पार्वतीजीने भगवान् शंकरसे ताण्डव-नृत्यके लिये आग्रह किया । भगवान् शंकरने पार्वतीको समझाते हुए कहा—'मेरे ताण्डवनृत्यके आरम्भसे ही संसारमें भयानक उथल-पुथल मच जायगी । साथ ही मेरे इस परिवारमें भी खलबली मच जायगी । नृत्य करते ही मेरे शरीरसे सर्प-मण्डली खिसककर पृथ्वीपर गिरेगी और कार्तिकेयका पाला हुआ मयूर उसे पकड़कर खाने लगेगा—

नाग ससरि भूमि खसत पुहुमि लोटायत हे ।
कार्तिक पोसल मयूर सेहो धरि खायत हे ॥

भगवान् शंकरकी बात मानकर पार्वतीजीने ताण्डवके लिये अपना आग्रह त्याग दिया ।"

श्रीगणेशसे क्षमा-प्रार्थना

भजनं न कृतं समर्चनं तव नामस्मरणं न दर्शनम् । हवनं प्रियमोदकार्पणं नवदूर्वा न समर्पिता मया ॥
न च साधुसमागमः कृतस्तव भक्ताश्च मया न सत्कृताः । द्विजभोजनमप्यकारि नो बत दौरात्म्यमिदं क्षमस्व मे ॥
न विधिं तव सेवनस्य वा न च जाने स्तवनं मनुं तथा । करयुग्मशिरःसुयोजनं तव भूयाद्गणनाथ पूजनम् ॥
अथ का गणनाथ मे गतिर्न हि जाने पतितस्य भाविनी । इति तप्ततनुं सदाऽव मामनुकम्पार्द्रकटाक्षवीक्षणैः ॥
इह दण्डधरस्य संगमेऽखिलधैर्यच्यवने भयंकरे । अविता गणराज को नु मां तनुपातावसरे त्वया विना ॥
वद कं भवतोऽन्यमिष्टदाच्छरणं यामि दयाघनाद्रते । अवनाय भवाग्निभर्जितो गतिहीनः सुखलेशवर्जितः ॥

हे गणनाथ ! मैंने कभी आपका भजन-पूजन नहीं किया । आपका नामस्मरण और दर्शन नहीं किया । आपके लिये हवन भी नहीं किया । आपको मोदक प्रिय है, किंतु उसका भी अर्पण मैंने नहीं किया और न कभी नूतन दूर्वा-दल ही समर्पित किया । मैंने सत्सङ्ग नहीं किया, आपके भक्तोंका सत्कार भी नहीं किया और न कभी ब्राह्मण-भोजन ही कराया । यह कितने खेदकी बात है ! प्रभो ! मेरी इस दुष्टताको क्षमा कीजिये । गणनाथ ! मैं आपके सेवनकी विधि नहीं जानता । मुझे आपके स्तवन और मन्त्रका भी ज्ञान नहीं है । केवल अपने मस्तकपर दोनों हाथ जोड़ लेता हूँ—यही आपका पूजन हो जाय । गणनाथ ! मुझ पतितकी कौन-सी गति होनेवाली है, यह मैं नहीं जानता । इस चिन्तासे मेरे तन-मन संतप्त रहते हैं । आप कृपासे भीगी हुई कटाक्ष-दृष्टिसे देखकर मेरी रक्षा करें । गणराज ! इस लोकमें जब मेरे देहपातका अवसर आयेगा और सम्पूर्ण धैर्यको नष्ट कर देनेवाले दण्डधारी यमराजसे भेंट होगी, उस समय आपके बिना कौन मेरी रक्षा करेगा । मुझे भवाग्निने भूँज डाला है । मैं गतिहीन हो गया हूँ । सुखका तो लेशमात्र भी नहीं रह गया है । आप अभीष्ट मनोरथ देनेवाले तथा दयाके घन—कृपाकी वृष्टि करनेवाले मेघ हैं;आपको छोड़कर दूसरे किसकी शरणमें मैं अपनी रक्षाके लिये जाऊँ ? आप ही मेरे शरण्य हैं ।

(मुद्गलपुराणोक्त श्रीगणेशापराधक्षमापनस्तोत्रसे)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परमपूज्य ब्रह्मलीन श्रीजयदयालजी गोयन्दकाका अमूल्य साहित्य

पुस्तकका नाम	मूल्य
श्रीमद्भगवद्गीता तत्त्व-विवेचनी	४.००
भक्तियोगका तत्त्व	१.२५
आत्मोद्धारके साधन	१.२५
कर्मयोगका तत्त्व	१.१२
महत्त्वपूर्ण शिक्षा	१.००
,, सजिल्द	१.३७
परम साधन	१.००
,, सजिल्द	१.३७
मनुष्य-जीवनकी सफलता	१.००
,, सजिल्द	१.३७
मनुष्यका परम कर्तव्य	१.००
परमशान्तिका मार्ग	१.००
,, सजिल्द	१.३७
ज्ञानयोगका तत्त्व	१.००
,, सजिल्द	१.३७
प्रेमयोगका तत्त्व	१.००
,, सजिल्द	१.३७
आत्मोद्धारके सरल उपाय	.७५
तत्त्व-चिन्तामणि बड़ा	
भाग १	.६२
भाग २	.८७
भाग ३	.७०
भाग ४	.८१
भाग ५	.८१
भाग ६	१.००
भाग ७	१.१२
तत्त्वचिन्तामणि गुटका	
भाग १ सजिल्द	.५०
,, २ सजिल्द	.५६
,, ३ सजिल्द	.५०
,, ४ सजिल्द	.६२
,, ५ सजिल्द	.५६
परमार्थ-पत्रावली	
भाग १	.२५
भाग २	.२५
भाग ३	.५०
भाग ४	.५०

पुस्तकका नाम	मूल्य
अध्यात्मविषयक पत्र	.५०
शिक्षाप्रद पत्र	.५०
स्त्रियोंके लिये कर्तव्य-शिक्षा	.३७
रामायणके कुछ आदर्श पात्र	.३७
बालकोंके कर्तव्य	.३०
महाभारतके कुछ आदर्श पात्र	.२५
शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ	.२५
आदर्श भ्रातृ-प्रेम	.२०
ध्यान और मानसिक पूजा	.२०
ब्रह्मचर्य और संध्या-गायत्री	.२०
आदर्श नारी सुशीला	.२०
गीता-निबन्धावली	.१६
नवधा भक्ति	.१२
श्रीभरतजीमें नवधा भक्ति	.१२
बाल-शिक्षा	.१२
भारतीय संस्कृति एवं शास्त्रोंमें नारीधर्म	.१५
तीन आदर्श देवियाँ	.१२
ध्यानावस्थामें प्रभुसे वार्तालाप	.१०
नारीधर्म	.१०
गीता पढ़नेके लाभ	.१०
श्रीसीताके चरित्रसे आदर्श शिक्षा	.०८
श्रीप्रेम-भक्ति-प्रकाश	.०६
सच्चा सुख और उसकी प्राप्तिके उपाय	.०६
सामयिक चेतावनी	.०६
श्रीमद्भगवद्गीताका तात्त्विक विवेचन	.०६
गीतोक्त कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोगका रहस्य	.०५
संत-महिमा	.०५
वैराग्य	.०५
भगवान् क्या हैं ?	.०३
भगवान्‌की दया	.०३

पुस्तकका नाम	मूल्य
सत्सङ्गकी कुछ सार बातें	.०३
गीतोक्त सांख्ययोग और निष्काम कर्मयोग	.०३
सत्यकी शरणसे मुक्ति	.०३
भगवत्प्राप्तिके विविध उपाय	.०३
व्यापारसुधारकी आवश्यकता	.०३
स्त्रियोंके कल्याणके कुछ घरेलू प्रयोग	.०३
परलोक और पुनर्जन्म	.०३
ज्ञानयोगके अनुसार विविध साधन	.०३
अवतारका सिद्धान्त	.०३
चतुःश्लोकी भागवत, सटीक	.०३
धर्म क्या है !	.०२
तीर्थोंमें पालन करने योग्य कुछ उपयोगी बातें	.०२
महात्मा किसे कहते हैं !	.०२
ईश्वर दयालु और न्यायकारी है	.०२
प्रेमका सच्चा स्वरूप	.०२
हमारा कर्तव्य	.०२
ईश्वरसाक्षात्कारके लिये नाम-जप सर्वोपरि साधन है	.०२
त्यागसे भगवत्प्राप्ति	.०२
चेतावनी	.०२
कल्याण-प्राप्तिकी कई युक्तियाँ	.०२
शोकनाशके उपाय	.०२
श्रीमद्भगवद्गीताका प्रभाव	.०२
गजल गीता	.०१
English Commentary on Śrīmad Bhagavad-Gītā	8.00
Gems of truth Part I	.75
,, ,, Part II	.75
What is God ?	.12
What is Dharma ?	.05

: सभी पुस्तकोंका डाकखर्च अलग

व्यवस्थापक—गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

गीताभवन, स्वर्गाश्रमके सत्सङ्गकी सूचना

प्रतिवर्षकी भाँति इस वर्ष भी **गीताभवन, स्वर्गाश्रममें** सत्सङ्गका आयोजन होनेकी बात है। प्रार्थना है कि सदाकी तरह सत्सङ्गी महानुभाव तथा माताएँ-बहिनें अधिकाधिक संख्यामें केवल सत्सङ्ग तथा भजनके पवित्र उद्देश्यसे स्वर्गाश्रम पधारें। लगभग चैत्र शुक्ल १५ (दिनाङ्क ६ अप्रैल, १९७४)तक श्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजके वहाँ पहुँचनेकी बात है। परमश्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराजसे भी प्रार्थना की जा रही है तथा अन्यान्य महात्मागण भी पधारनेवाले हैं।

नौकर-रसोइया आदि यथासम्भव साथ लाने चाहिये। स्वर्गाश्रममें नौकर-रसोइया मिलने कठिन हैं। स्त्रियाँ पीहर या ससुरालवालोंके अथवा अन्य किन्हीं सम्बन्धीके साथ वहाँ जायँ; अकेली न जायँ एवं अकेली जानेकी हालतमें कदाचित् स्थान न मिल सके तो कृपया दुःखित न हों। गहने आदि जोखिमकी चीजें साथ नहीं रखनी चाहिये। बच्चोंको जहाँतक बने साथ न ले जायँ। नितान्त निरुपाय हों तो बच्चोंको वे ही लोग साथ ले जायँ, जो उन्हें अलग डेरेपर रखनेकी व्यवस्था कर सकते हों; क्योंकि बच्चोंके कारण स्वाभाविक ही सत्सङ्गमें विघ्न होता है। खान-पानकी चीजोंका प्रबन्ध यथासाध्य किया जा रहा है, यद्यपि इस बार बड़ी कठिनता है; परंतु दूधका प्रबन्ध तो बिल्कुल सम्भव नहीं है।

सदाकी भाँति यह नम्र निवेदन है कि सत्सङ्गमें पधारनेवालोंको ऐश-आराम या केवल जलवायु-परिवर्तन-की दृष्टिसे न जाकर सत्सङ्गके उद्देश्यसे ही वहाँ जाना चाहिये तथा यथासाध्य नियमित तथा संयमित साधक-जीवन बिताते हुए सत्सङ्गमें अधिक-से-अधिक भाग लेना चाहिये।

'कल्याण' नामक हिंदी मासिकपत्रके सम्बन्धमें विवरण

फार्म चार—नियम-संख्या—आठ

१-प्रकाशनका स्थान—गीताप्रेस, गोरखपुर
२-प्रकाशनकी आवृत्ति—मासिक
३-मुद्रकका नाम—मोतीलाल जालान
राष्ट्रगत सम्बन्ध—भारतीय
पता—गीताप्रेस, गोरखपुर
४-प्रकाशकका नाम—मोतीलाल जालान
राष्ट्रगत सम्बन्ध—भारतीय
पता—गीताप्रेस, गोरखपुर
५-सम्पादकका नाम—श्रीचिम्मनलाल गोस्वामी एम्० ए०, शास्त्री
राष्ट्रगत सम्बन्ध—भारतीय
पता—गीताप्रेस, गोरखपुर
६-उन व्यक्तियोंके नाम-पते जो इस समाचार-पत्रके मालिक हैं और जो इसकी पूँजीके भागीदार हैं।
श्रीगोविन्दभवन-कार्यालय
पता—नं० १५१, महात्मागांधीरोड
कलकत्ता (सन् १८६० के विधान २१के अनुसार रजिस्टर्ड धार्मिक संस्था)

मैं मोतीलाल जालान, इसके द्वारा यह घोषित करता हूँ कि ऊपर लिखी बातें मेरी जानकारी और विश्वासके अनुसार यथार्थ हैं।

दि० १ मार्च १९७४

मोतीलाल जालान
प्रकाशक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri